भटको नहीं धनंजय

उपन्यास

भटको

डोगरी कं
जानी-मार्न
है 'भटकं
द्रोपदी कं
पीडा को
की ता न
त्रासदी उ
का लम्य
अपनी प
से वडा
सकता है
भटकन
धनजय'
यातना ‹
सचदेव
वार अप
अभिव्यां

भटको नहीं धनंजय

पद्मा सचदेव



भारतीय ज्ञानपीठ

भटको

डोगरी ट
जानी-मा
है 'भटक
द्रोपदी व
पीडा को
की तो
त्रासदी
का लम्ब
अपनी ए
से बडा
सकता है
भटकन
धनजय'
यातना
सचदेव
यार अ
अभिव्यं

ISBN 81 263-0130-9

लोकोदय ग्रन्थमाला ग्रन्थाक 644

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया लोदी रोड
नयी दिल्ली 110 003

मुद्रक
नागरी प्रिंटर्स
दिल्ली 110 032

आवरण-चित्र आर दी सिन्धु

प्रथम संस्करण 1999
मूल्य 75 00 रुपये

BHATKO NAHIN DHANANJAYA
(Hindi Novel)
Padma Sachdeva

Published by
Bharatiya Jnanpith
18 Institutional Area, Lodi Road
New Delhi 110 003

First Edition 1999
Price Rs 75 00

आदरणीय डॉ धर्मवीर भारती के लिए —
भैया, आपके न होने पर भी
आपका जन्मदिन आया है,
उसी दिन के लिए।

—पद्मा सचदेव

भटको

डोगरी
जानी-म
है 'भट

द्रोपदी
पीड़ा क
की तो
त्रासदी
का लम

अपनी
से वडा
सकता
भटकन
धनजय
यातना
सघदेव
यार अ
अभिव्य

भूमिका

महाभारत सात समुद्रो से भी विशाल है। भटको नहीं धनजय म मेने एक बूँद लेकर कुछ पृष्ठ भिगोने का यत्न किया है। कई दिन अर्जुन पीछे पडे रहे। अर्जुन की त्रासदी को भोगते भोगते मे वहुत कुछ अर्जुन हो गयी—अर्जुन जो द्रोपदी भी ह। स्त्री का त्रासदी भोगने का अभ्यास होता है फिर भी त्रासदी तो है ही। यन्त्र बन जाने की त्रासदी वडी भयानक है, पर वीर पुरुष के लिए अपनी पत्नी बाँटने के अपमान से वडा कोई अपमान नहीं। दोनो को जिया है मने, ओर उसी तरह कागज पर उतारने का यत्न किया है मेने।

भटकने की त्रासदी भी काफी भयानक है। इस द्वार को पार कर लेने के वाद भटकन वढती ही जाती है। ठहराव कहीं नहीं मिलता। इसका कोई समाधान भी नही है। सभी द्वार लाँघकर अपनी ही दहलीज पर ठहराव मिलता ह। पाठक ही वता पाएगे—मुझे ठहराव मिला है या नही।

नयी दिल्ली — पद्मा सचदेव
1 दिसम्बर 1999

भटके

डोगरी
जानी-म
है 'भट

द्रापदी
पीड़ा व
की तो
त्रासदी
का ल

अपनी
से बडा
सकता
भटकन
धनजय
यातना
सचदेव
यार अ
अभिव्

जगल में आग लगते फैलते, बढते और आग-ही-आग होते देखना एक अनूठा अनुभव है। देखते-देखते एक चिनगारी कैसे दावानल होकर सब-कुछ अपने भीतर निगलती जाती है—पलक झपकते ही कितना-कुछ समा जाता है इस आग के समुद्र म, कि आग के सुन्दर रग म खोया मनुष्य यह सोच भी नहीं पाता। ऐसी आग से बच के निकलना भाग्य के अतिरिक्त और क्या हो सकता है?

खाण्डव वन के लाक्षागृह को पुरोचन ने बडी कुशलता से बनाया था। ज्वलन सामग्री पर इतना सुन्दर भव्यता का आवरण देखकर कोन माई का लाल कह सकता होगा कि यह दुर्योधन ने पाण्डवो को समाप्त करने क लिए निर्मित किया है। खाण्डव वन के लोग भी कितनी आतुरता से पाण्डवो के वहाँ आकर रहने की प्रतीक्षा कर रहे थे। ओर आज वो लाक्षागृह धू-धू करके जल रहा था।

भीम ने बडी चतुराई से सुरग पर से बडा पत्थर हटाकर सबको बाहर निकलने को कहा फिर एक कन्धे पर माँ को बिठाया और दूसरे हाथ से सुरग का पत्थर दोबारा ठीक से बिठाकर शीघ्रता से सुरग से बाहर निकलने लगा। प्राणो का मोह त्यागकर तीव्रता से बढते कदम थोडी कच्ची सुरग मे भयभीत हुए बिना आगे बढ रहे थे। जितनी शीघ्रता से इनके कदम बढ रहे थे, वेसे ही आँच भी पीछे-पीछे भागती चली आ रही थी। थोडी देर मे ही लौ का उजियारा भीतर तक झाँकने लगा। पाण्डवा के पग ओर शीघ्रता से आगे बढने लगे। बाहर एकदम घना जगल अँधेरे का मुँह खोले सुस्ता रहा था।

बाहर निकलते ही भीम ने माँ को घास पर लिटा दिया। भाइयो की अनदेखी करके उसने एक तरफ पत्तो से झरते पानी के कुण्ड मे से अपनी विशाल अजलि भरी ओर माँ के माथे पर गिरा दी। कुन्ती हाँफकर उठ बेठी। कुछ जल उसके मुँह मे चला गया था। उसने अपने पुत्रो को सामने देखकर प्रसन्नता से कहा, "पुत्रो, जल बहुत मीठा है। जाओ सभी जल ग्रहण करो।"

मौत के जबडे खोलकर बच आने के बाद यह कहना जेसे जीवन का द्वार खोलना था। सबने कहा जो आज्ञा माँ।"

जल ग्रहण करने के बाद भीम ने युधिष्ठिर से कहा, "भैया अग्नि की आँच बयार के साथ यहाँ भी पहुँच रही है। पहले हम इस क्षेत्र से निकल जाना चाहिए। यह पगडण्डी कहीं तो जाएगी?"

युधिष्ठिर बोले "भीम इस पगडण्डी से हम नहीं जाएँगे। यहाँ कोई भी जाँचन आ सकता है। जिन्होने इतनी कुशलता से लाक्षागृह बनवाया वो इतनी सहजता से न जाने देगे। यहाँ से निकलने के लिए सबसे कठिन राह चुनो। कम-से-कम उस पर कोई शत्रु न होगा। महात्मा विदुर के गुप्तचर तो हमें पा ही लेंगे।"

'जो आज्ञा' कहकर भीम ने एक लम्बा और मोटा वृक्ष जड़ से उखाड़कर जड पाँव से समतल कर दी। फिर उसके पत्ते उखाड़कर इधर-उधर बिखेर दिय। एक दुगम राह के पत्ते हटाता भीम सबका आगे करक ले जाने लगा। राह म से निकलत ही पते सिकुड़कर फिर खिन जाते तो यह जानना असम्भव-सा लगता कि यहाँ कभी कोई राह भी होगी। वन म चिड़ियाँ कलरव मचाकर अपन-अपने घोसले मे जा बैठी थीं। झींगुरो को बोलने का मौक़ा लग गया था। काफी देर चलने के बाद पाण्डव एक ऐसे स्थान पर आकर रुके जहाँ पीपल के भव्य वृक्ष के नीचे घास बिछाने की तरह बिछी हुई थी। यहाँ तक न कोई पगडण्डी आ रही थी न कोई राह थी। दूर कहीं से नदी का हल्का हल्का स्वर कानों में रस घोल रहा था। सब लोग वही आकर बैठ गये। भीम ने युधिष्ठिर की तरफ देखा। मानो पूछ रहा हो– अब क्या आज्ञा है?"

युधिष्ठिर ने पूछा "भीम आस पास कहीं फलो के पेड अवश्य होगे।"

भीम उठा और अँधेरे जगल मे घुस गया। नकुल सहदेव ने बहुत से पत्ते बटोरकर एक नर्म शय्या बिछाकर कुन्ती को वहाँ बैठने का आग्रह किया। अब इस स्थान के स्वर मुखर होने लगे थे। कहीं से बूँद-बूँद जल झर रहा था। उसका स्वर एक लय मे यूँ ही आ रहा था जैसे जगल का ही हिस्सा हो। नकुल न पलाश के पत्तो का दोना बनाकर जल भरा और माँ कुन्ती के चरण धोकर बडे भाइयो क चरण धोये। पत्तो के बिछौने पर सुख से बैठे युधिष्ठिर ने देखा–कही से झोली भरकर फल ले आया है भीम। भीम ने उत्तरीय मे बँधे फल झरने पर धोये। फिर माँ के आगे रख दिये। एक बहुत बडा पका हुआ कटहल चम्पे की तरह महक रहा था। भीम न धीरे-से कहा "माँ यह मे खाऊँगा।"

माँ मुस्करा उठी उसने सबको फल देकर कहा "आज का भोजन बडा उत्तम ह। मेरे भीम के रहते कोई भूखा नहीं रह सकता।"

कृष्ण पक्ष की इस अँधेरी रात मे रजाई मे दुबके चाँद ने ज़रा-सा कोना उठाकर सोचा यहाँ इस निर्जन में कौन सा ससार बस गया है?

युधिष्ठिर ने फल खाते-खाते कहा, "धरती सबका ध्यान रखती हे। वो माँ की भी माँ है। कल दिन मे जब हमारी माँ ने भोज दिया था तब भीलनी ओर उसके

पाँचो पुत्र मदिरा पीने के बाद इतने मत्त हो गये कि उठकर घर ही न जा सके। आग भड़कते ही जब चट-चट की ध्वनि आ रही थी तब भी मुझे उन्हीं का ध्यान था।"

अर्जुन ने कहा, "भैया, भगवान् किस-किस राह से आकर समस्या सुधार जाता हे उसमे मनुष्य का गुजर नहीं है। भीलनी और उसके पॉच पुत्रो के ककाल देखकर सब समझ रहे होगे पाण्डव जल मरे।"

इस वाक्य ने सबको वास्तविकता मे लाकर पटक दिया। बिना कुछ बोले सब अपनी-अपनी पुष्पशय्या पर सोते ही निद्रा मे लीन हो गये। इस शयनागार मे सोने से पहले जब भीम सतर्क होकर बेठने लगा था तब युधिष्ठिर ने कहा था, "भीम यहाँ तुम्हारी सतर्कता की कोई आवश्यकता नहीं। तुम हम सबको उठाकर लाए हो अब तुम सो जाओ। नकुल और सहदेव बारी-बारी से प्रहरी होगे। जेसे ही भीम अपनी शय्या पर लेटा, टाँगें पसारीं तो उसके खर्राटे हवा में भयावह लहर-सी रचने लगे।

युधिष्ठिर ने मन मे सोचा कितना सरल है भीम, निद्रा इसके वश मे हे। सबको मौत के मुँह से निकाल लाया है पर चेहरे पर कोई लक्षण नहीं। कल जब महात्मा विदुर का सन्देश आया था कि पुरोचन आज ही कृष्णपक्ष मे लाक्षागृह मे आग लगा देगा तब माँ भोज की तैयारी कर रही थी। फिर कितनी ऊहापोह कितनी हडबडी, कितनी अनिश्चितता। भगवान् का धन्यवाद करके युधिष्ठिर बायीं तरफ करवट बदलकर सोने लगे।

नकुल ने सहदेव से कहा, "तुम भी भीम भैया के चरणो की तरफ सो रहो। तुम्हारी आधी शय्या पर तो उनके चरण ही हे। नक्षत्रो की सहायता से आधी रात जानकर मे तुम्हे जगा दूँगा।"

धीरे धीरे सबको निद्रा ने अपनी गोद मे सुला लिया तो नकुल सजग हुए। उनके भीतर का एक प्रहरी जग पडा। उसने देखा निस्तब्ध रात्रि मे माँ कुन्ती एक छुई-मुई बच्ची की तरह घुटने जोड़े निश्चिन्त होकर सो रही हें। युधिष्ठिर भी अपनी बायीं करवट पर जमे हुए सो रहे थे। भीम एकदम पहाड की तरह सीधा निश्चल निश्चिन्त' उसके चरणों के पास सहदेव गणपति के चरणो में पडा मूषक सा लग रहा था। अर्जुन का एक हाथ गाण्डीव पर था दूसरा वृक्ष के तने पर अधलेटा-सा पडा था। नकुल ने तृप्ति से सबको देखकर आकाश म अदृश्य को प्रणाम करके धन्यवाद दिया। उसकी अवरुद्ध वाणी से टूट-टूटकर शब्द झरे।

"हे परमेश्वर हम पाँचा भाई, माँ कुन्ती के साथ यहाँ तुम्हारी ही अनुकम्पा से जीवित हैं। अपनी दया बनाये रखना।" अपनी आँखो का जल पाेछकर उसने मुँह धो लिया फिर प्रहरी के स्थान पर जा बैठा। रात कितनी सुन्दर हो सकती है नकुल ने देखा। पीपल एक बुजुर्ग की तरह निस्तब्धता की चादर ओढ जैसे सब पर दृष्टि

रख रहा था। उसकी शाखाओ मे छुपे कितने ही घासलो मे पक्षी शान्ति से सो रहे थे। आकाश टाँग पर टाँग रखे जैसे घर का बडा परिवार का लेखा-जोखा कर रहा हो। छोटे छोटे शोर एक होकर वह रहे थे। भीम के खर्राटे भी गहरी नीद मे बदल गये थे। सिर्फ उसकी मूँछ साँस के आवन-जावन से ऊपर-नीचे हो रही थी। अद्भुत था। वृक्ष तोडकर बनाया हुआ लट्ठ पास ही पडा था। ऊपर-नीचे होते देह पर उत्तरीय उडता तो लगता भीम शायद सो नहीं रहा। सबसे निश्चिन्त थी माँ कुन्ती। अपने पुत्रा के मध्य सोयी मणि की तरह शोभायमान थी। युधिष्ठिर किसी देवपुरुष की भाँति कुछ चिन्तन-सा करते प्रतीत होते थे।

सहदेव मुस्कराया फिर सन्तोष सुख में झूलने लगा। नदी का स्वर कुछ मुखर हो उठा था। सहदेव को एकदम याद आया महात्मा विदुर ने गगा का नाम लिया था। विदुर के प्रताप से ही हम सब सुरक्षित है। कुन्ती की ओर स्नेह से देखकर सहदेव ने सोचा। माँ यह तुम्हारी ही तपस्या का परिणाम है। तुम्हारे पाँचो पुत्र तुम्हारे पास हे। कल भीलनी माँ के पाँचों पुत्रो की अस्थियो का सस्कार करने कौरव आएँगे। भीष्म पितामह को ही सब करना पडेगा। पितातुल्य विदुर न होते तो सस्कार तो हमारा ही हाता।

सहदेव को अकस्मात् लगा अँधेरा ओर गहरा गया है। आधी रात के इस अमूल्य क्षण का अँधेरा जब सो जाता हे रात करवट बदलती है, निद्रा का जादू सब पर फेल चुका होता हे। सहदेव ने साचा मुझे ता नींद नहीं आ रही पर नकुल भैया को न जगाया तो अवज्ञा करके दण्ड भुगतना पडेगा। अभी सहदेव सोच मे था कि किस तरह नकुल को जगाऊँ ताकि भीम भेया भी न जग जाएँ। तभी नकुल धीरे से उठकर उसके पास आ गया ओर बोला "लगता है आधी रात हो गयी। बडी प्यास भी लग रही हे। जल लाकर दे।"

'जो आना।"

सहदेव ने सबके सो जाने पर पलाश का एक बडा सा दोना बनाकर बूँद बूँद टपकते पानी के नीचे रख दिया था। वही ढुल-ढुल करता दोना उसने नकुल के हाथो पर रखा। नकुल ने पानी के छींटे मुँह पर मारकर जल पी लिया और पूरी तरह जग गया। झरने के नीचे दोना रखा तो जजीर खनकने जैसा स्वर आ-आकर दोने मे झरने लगा। रात की चुप्पी मुखर हो उठी।

नकुल ने सोचा आस पास का अवलोकन करना चाहिए। पीपल के पत्ते भी अब ऊँघ रहे थे। नकुल को यह देखकर सन्तोष हुआ। कितने समय के बाद सब तृप्ति की नींद सा रहे है। लाक्षागृह में पुरोचन की उपस्थिति ही सोने न देती थी। हर क्षण धडका लगा रहता था। इधर-उधर देखकर नकुल की दृष्टि भुरुकुवा* पर

---

* भार का तारा

अटक गयी। उसने देखा तारा के बीच कैसे राजा लग रहा था। एकदम उज्ज्वल, स्वच्छ ओर नीरोग। पौ फटने के पहले जब यह आकाश पर अकेला रह जाएगा तब यह कितना भव्य लगेगा।

माँ कुन्ती के कोमल शिशुवत् चेहरे का सन्तोष तारो की रोशनी म झिलमिला रहा था। अचानक कहीं से गाय के रँभाने की आवाज सुनाई दी। पशुओ का प्रेमी नकुल चाकन्ना हुआ। इस निर्जन में गाय कहाँ है? उसने सधे हुए हाथ पैरो से पीपल की फुनगी तक जाने का विचार किया। कहीं बहुत दूर टहनियो पर हाथ-पाँव साधे नकुल ने देखा भुरुकुवा का अग-अग निचुडकर जैसे एक लकीर-सी बन गया था। पूरे अस्तित्व को कई गुणा बढाकर गगा की छाती पर लोट रहा था।

नकुल मुग्ध हो गया।

गाय के रँभाने का स्वर फिर सुनाई दिया। उसने देखा सिर पर एक बडी सी गठरी लिये हाथ मे बछडे की डोरी थामे एक ग्रामीण कुछ गा रहा था। चौकन्ना हुआ नकुल। उसमे विदुर का भाव था। ठीक महात्मा विदुर का। जिस तरह धीरे-से नकुल पीपल की फुनगी तक गया था, वैसे ही उतर आया। उतरते समय जरा-सी असावधानी से धम्म का स्वर होते ही युधिष्ठिर उठकर बैठ गये। अर्जुन का हाथ गाण्डीव पर चला गया और भीम ने लट्ठ पर हाथ रखा। नकुल ने कहा, 'प्रात अनुकूल सन्देश लायी है। महात्मा विदुर का कोई गुप्तचर हो सकता है। गाय और बछडा भी है।"

अर्जुन और युधिष्ठिर ने कहा, "चलो देखते है।"

नकुल ने कहा, "भैया, आप झरने पर हाथ-मुँह धोकर स्वस्थ हो ले। मे उन्हे टोहकर यहीं ले आऊँगा।"

युधिष्ठिर ने कहा, "ठीक है ऐसा ही करो।"

नकुल के साथ जिस व्यक्ति ने प्रवेश किया वह वही व्यक्ति था जो कितनी बार पुरोचन की अनुपस्थिति मे लाक्षागृह आ चुका था। युधिष्ठिर को देखते ही उसने कहा, "महाराज, सारी रात ढूँढते ही बीत गयी। आप किस माग से आये जान न पाया। नोका का प्रबन्ध करके गाय साथ लाने की आज्ञा थी। अब तो लगता था आपको न पा सकूँगा। बछडा भूखा था, उसकी रस्सी मेरे हाथ मे थी। गाय के थन दूध से भरे है। वह न रँभाती तो कहाँ नकुल को पाता।"

युधिष्ठिर ने हँसकर कहा "अब सिर से यह गट्ठर उतारो और नन्दीजी को छककर दूध पीने दो।"

गुप्तचर ने धीरे से कहा, "यह ब्राह्मणों के वस्त्र है। आप इसी वेष मे दक्षिण जाएँगे। यही आज्ञा हे। बछडा तो दूध ऐसे पीने लगा है जैसे बूँद भी न रहने देगा। माँ भी कैसी तृप्ति से खडी हो गयी है।"

कुन्ती, जो अब तक सबकी बाते सुन रही थी, बोली—"माँ को अपने बच्चों की तृप्ति से अधिक सुख कहीं नहीं मिलता।"

गुप्तचर ने कहा 'भोर होने से पहले गगा पार करना उचित होगा। आप शीघ्रता से वस्त्र पहनिए। जो वस्त्र पहने है उन्हें यहीं कहीं गाड़ देना होगा।"

कुछ ही दर मे एक नाव पर पाँच ब्राह्मण एक दिव्यजोत स्त्री के साथ नौका पर गगा के चोडे पाट को प्रणाम करके जा रहे थे। नाव मछली की तरह तैर रही थी। भुरुकुया आकाश पर अबोला मुग्ध होकर देख रहा था।

एक वन से दूसरे वन मे से निकलते, प्रकृति की शोभा देखते सरोवरों में नहाते, अग्निहोत्र यज्ञ करते पाण्डव पूर्णतया सन्तुष्ट थे। सबके तन पर ब्राह्मणो के वस्त्र थे। कुन्ती भी तापसी वेष मे थी। पाण्डव मार्गो को पूरी तरह जीते कभी शीघ्रता से कभी धीरे से चलते। जहाँ भी भगवत्-भजन होता सुनते, शास्त्रो का मर्म समझते, उपनिषद की तहो तक जाते मार्ग व्यतीत कर ही रहे थे कि एक दिन मार्ग में ही उन्हें महर्षि व्यास के दर्शन हो गये। व्यासजी ने प्रसन्न होकर कहा, "मेरा ध्यान आप ही की तरफ था। महात्मा विदुर के आश्वासन के बाद भी जब आपको देखे बगैर न रह सका तब मार्ग छानने लगा। आज आपको पाकर बहुत प्रसन्न हूँ। अब आप मेरी बात मानकर एकचक्रा नगरी मे चले जाइए। यह पास ही मे है। वहाँ एक ब्राह्मण के घर मे आपको पहुँचा दूँगा। कभी-कभी आने का सुयोग भी रहेगा।" फिर उन्होने कुन्ती से कहा, 'देवी, तुम्हारे पुत्र धैर्यवान हैं। ये निश्चय ही पृथ्वी को जीतकर उस पर शासन करेंगे। तुम्हारे और माद्री के पुत्र महारथी होंगे। अब चलो, मै तुम सबको ब्राह्मण के घर ठहरा देता हूँ। एक माह बाद फिर आऊँगा।"

ब्राह्मण के घर रहकर पाण्डव महात्माओ की सगति मे धर्मोपदेश सुनते और दिन मे भिक्षाटन करते। अपने उत्तम गुणो के कारण पाण्डव सबके प्रिय हो गये। धैर्य के साथ कथा वार्त्ता सुनते ओर सबके साथ मिलकर रहते।

प्रतिदिन वे भिक्षा लाकर माँ के पास आते। माँ नियम से भिक्षा के दो भाग करती एक भाग भीम के लिए, दूसरे मे से शेष चारो भाइयो ओर कोए, कुत्ते, गाय के लिए। ओर सब अन्न पाते। एकचक्रा नगरी मे भिक्षा भी बडी उत्तम मिलती थी। इस प्रकार नियम से दिन निकल रहे थे। पाण्डवों को इस नियम में रहकर कभी स्मरण ही नही रहता था कि वे कौन हे?

एक दिन जब सभी भाई भिक्षा के लिए जाने लगे थे तो भीम किसी कारणवश माँ के पास ठहर गये। उसी दिन ब्राह्मण के घर मे बडी चिन्ताजनक बातें सुनाई पडने लगी। कुन्ती का जी भर आया। उसने ब्राह्मण के घर जाकर इस चिन्ता का कारण पूछा तो मालूम हुआ—"यमुना तट पर दो कोस की दूरी पर एक बहुत बडी गुफा म एक नरभक्षी राक्षस रहता है। वह इस नगरी का पालक हे। शत्रुओं स इस नगरी की सुरक्षा करता है। इस सुरक्षा के बदले कर के रूप मे उसे हर दिन खाने

के लिए एक पशु, एक मनुष्य और भोजन देना पडता है। हर घर की बारी बँधी रहती है। यह बारी चाहे डेढ-दो बरस के बाद आये, पर इसका धड़का हर रोज़ हर पल लगा रहता है। यह नगरी इसी त्रासदी मे जी रही ह। समय आते ही हर कोई अपने परिवार के लिए मर मिटना चाहता है। हमारे घर म भी हर प्राणी मरन के लिए प्रस्तुत हो रहा हे। यह विवाद उसी का परिणाम है। आज हमारा दुर्दिन है, बहन।"

कुन्ती ने कहा "ब्राह्मण महोदय आप विषाद मत करे। मुझे एक उपाय सूझ रहा है। आप तो जानते ही है मेरे पाँच आज्ञाकारी पुत्र है। उनमे से यदि एक चला भी जाए तो कोई बात नहीं। उस पापी राक्षस को सामग्री पहुँचाने मेरा एक पुत्र चला जाएगा।"

ब्राह्मण ने कानो को हाथ लगाकर कहा, "देवी यह कभी नहीं हो सकता। अपने घर मे आये अतिथि का मे अपनी रक्षा के लिए वध करवाऊँ, ऐसा पाप करके मैं जी नहीं सकता।"

कुन्ती ने कहा, "हम इतने समय से यहाँ रह रहे हैं, अब हम भी इसी परिवार के सदस्य है। हमे अतिथि मत कहिए। मै आपका कष्ट बाँटना चाहती हूँ।"

ब्राह्मण ने कहा, "देवी, कष्ट तो आपने बाँट लिया। अब इस विषय में और बात नहीं होगी।"

कुन्ती ने सोचा अब इन्हे कुछ-न-कुछ बताना पडेगा। उसने कहा, "मेरा पुत्र बलवान है। उसने कई राक्षस मारे ह। उसके पास राक्षसो को मारने के लिए एक मन्त्रशक्ति है पर यह बात आप किसी से नहीं कहेगे। मेरा आपसे अनुरोध है कि मेरे पुत्र को राक्षस के पास जाने दीजिए।"

ब्राह्मण मन्त्रशक्ति की बात सुनकर मान गया। फिर कुन्ती ने युधिष्ठिर से सलाह करके भीम को बकासुर राक्षस के पास सामग्री लेकर भेज दिया।

भीम आज इतना भोजन पाकर खूब प्रसन्न हुआ। उसने राक्षस की गुफा से थोड़ी दूर रुककर पहले भोजन किया। फिर घडा भरा दही पीना चाहता था कि बकासुर ने आकर उसे धक्का दिया। भीम ने एक हाथ से बकासुर को पकडा और दूसरे हाथ से सारा दही पी गया। खाली घडा उसके सिर पर फोडकर पूछा "क्या बात है मेरे भोजन के समय तुमने मुझे इस तरह क्यो छेडा?"

बकासुर ने कहा, यह मेरा इलाका है और यहाँ रोज मेरा भोजन आता है। तुम मेरा ही भोजन करके मुझ पर बिगड रहे हो?"

भीम ने कहा "भोजन तो मने कर लिया। अब आओ दो हाथ भी कर ले।" राक्षस भीम पर झपटा तो भीम ने उसकी लँगोट पकडकर उसके हाथ पाँव मोडकर मिला दिये। राक्षस की रीढ़ की हड्डी चटकने के साथ ही उसका क्रन्दन पूरी नगरी

ने सुना। राक्षस का शव घसीटकर भीम ने नगरी क द्वार पर रखा और घर चला गया।

लोगों ने बकासुर का शव देखकर सोचा जरूर किसी देवता ने इसे मारा है। ब्राह्मण की प्रसन्नता का ठिकाना न था। उन्हीं दिना उसके घर एक वड़ा विद्वान ब्राह्मण आया, वो वड़ी सुन्दर कथाएँ कहता था। उस घर मे ब्राह्मण द्वारा कथा कहने क समय पूरा घर लागों से भर जाता था। पाण्डव भी नियम से कथा सुनने आत थे। कुन्ती के कहने पर उस पण्डित ने धौम्य पण्डित का पता देकर कहा कि आप इन्हे अपना पुरोहित नियुक्त करे। धौम्य पण्डित ही फिर उनके पुरोहित हुए।

उन्ही दिनो द्रुपद की राजधानी म द्रौपदी के स्वयवर का भी समाचार हर तरफ चर्चित था। हर कोई स्वयवर देखने को उत्सुक था। पाण्डवो ने भी निश्चय किया कि हमे भी स्वयवर मे जाना चाहिए। व्यासजी के दर्शन भी उन्हीं दिना हुए ता पाण्डवो ने उनसे अपने मन की मशा कही। व्यासजी ने उन्हे आशीर्वाद देकर कहा "द्रौपदी आप ही को मिलेगी। इसमे सन्देह नहीं है। आप स्वयवर मे अवश्य सम्मिलित हो।" व्यासजी की आज्ञा ही से पाण्डव नगर के एक कोने पर साफ सुथरे इलाके म कुम्हार के घर ठहरे। वहाँ आस-पास स्वयवर देखने आये कितने ही लोग ठहरे हुए थे। उत्सव मे पूरी नगरी डूबी हुई थी। नगरी की चहल पहल हर दिशा म थी। शख तुरही मगलनिनाद, नगाडे और लागा के उत्साहित स्वरा से पूरी नगरी गूँज रही थी।

स्वयवर के लिए वडे भव्य ओर सुन्दर भवन का निर्माण हुआ था। उसके बाहर चारो तरफ राजकुमारो के रहने के लिए सजाये हुए कई भवन थे। जी को लुभानेवाले खेल-तमाशो, प्रदर्शना एव गन्धर्वो के गायन का भी प्रबन्ध था।

स्वयवर मण्डप की छटा निराली थी। वहाँ मच पर एक वृहदाकार धनुप रखा हुआ था। इस धनुष की डोरी फौलादी तारो से बनी थी। ऊपर काफी ऊँचाई पर सोने की मछली टँगी हुई थी। उसके नीचे एक चमकदार यन्त्र वडे वेग से घूम रहा था। राजा द्रुपद ने घोपणा की थी "जो राजकुमार उस भारी धनुप को तानकर डोरी चढाएगा और ऊपर घूमते हुए यन्त्र के मध्य मे से तीर चलाकर ऊपर टँगे हुए निशाने को वींध देगा उसी को द्रौपदी वरमाला पहनाएगी।"

इस स्वयवर क लिए दूर-दूर के अनेक क्षत्रिय वीर आये हुए थे। मण्डप मे सकडो राजा इकट्ठे थे। इनमे धृतराष्ट्र के सो वेटे, अगनरेश कर्ण, श्रीकृष्ण, शिशुपाल, जरासन्ध आदि भी शामिल थे। दर्शका की भी भारी भीड थी। एक सधा हुआ कोलाहल पूरे मण्डप मे था, जिसमे कृष्णा कृष्णा की ध्वनि आ रही थी।

कान पाएगा इस अमूल्य रत्न को। पूरी राजधानी दुल्हन की तरह सजी थी। अपने घर मे रहने की इच्छा ही न होती थी। सव लोग वार-वार मण्डप का चक्कर लगाते ओर भी जो नया सुन्दर वहॉं घटता उसकी वात उत्साह से करते। राजा द्रुपद ने यह लक्ष्य वडे सांच विचार के वाद वनवाया था। उन्हाने सुना था कि पाण्डव किसी प्रकार वच निकले हे। उन्होने सोचा यदि पाण्डव जिन्दा हुए तो वे इस स्वयवर म अवश्य आएँगे ओर आर आये तो यह दुर्भेद्य लक्ष्य अर्जुन के अतिरिक्त कोई साध न पाएगा। द्रुपद द्रोणाचार्य की शत्रुता का विचार करके सदा चिन्तित ही रहा करते थे। इसलिए अपनी शक्ति वढाने आर द्रोण की शक्ति कम करने के विचार से पाचाल नरेश की इच्छा थी कि द्रोपदी का ब्याह अर्जुन से हो जाए ताकि उन्हे द्रोण की चिन्ता न रहे। स्वयवर रचने का एक कारण यह भी था।

पोष मास की शुक्लपक्ष की एकादशी को रोहिणी नक्षत्र मे स्वयवर होना निश्चित हुआ। आर यह तिथि कल ही ह। सिर्फ आज की रात शेप हे। कल भी निकलेगा सूर्य ओर कल ही किसी के गले मे द्रापदी ज्यमाला डालेगी।

अर्जुन का हृदय दही मे घूमती मथानी के सग फिरते मक्खन के पेडे की तरह गोल गोल घूम रहा था। रात को जव पत्ता ओर पुआला के नर्म विछाने पर सबको नींद न गोद मे ले लिया तो अर्जुन जाग रहा था। सव तरफ शान्ति थी। अर्जुन ने वाहर ऑंगन के पिछवाडे से आते वर्तन निकालने, टनकोर कर देखने और रखने के स्वर सुने। इस समय कुम्हार के सिवा कोन होगा। स्वयवर मे रग किये सुन्दर वर्तन विकने का भी सुयोग था। एक क्रम से वर्तन उठता, शायद फिरता फिर हाथ मे तौला जाता, टनकोरा जाता, फिर रख दिया जाता। जो वर्तन आवाज नहीं करता उसको अलग रखे जाने का स्वर आता।

ठक टन ठक टन इन स्वरो के साथ जेसे अर्जुन का जागना भी अनिवार्य हो गया। धीरे-धीरे अतीत की चादर खुलने लगी। सलवटे सीधी होने लगी ओर कई दृश्य उभरने लगे।

महात्मा विदुर वही करते हे जो पिता होते तो करते। लाक्षागृह मे यदि उन्हे सुरग खोदने का विचार न आया होता तो हम कहाँ होते। उस दिन केसे सुरग से पत्थर हटाकर भीम ने हम चारो भाइयो को निकाला। केसे मॉं को कन्धे पर विठाकर सुरग पर पत्थर रखा ओर उसमे से केसे निकले? माँ कुन्ती तो वेहोश थीं। एक वच्ची की तरह ही उन्हे भीम वाहर निकाल लाए। भीम को जेसे मॉं के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई न दे रहा था। मा को पानी से भिगोना, पानी पिलाना घास पर

लिटा देना—यह भला योद्धा को कैसे-कैसे सूझा। यह तो सिर्फ माँ को अपने बच्चे के लिए सूझता है।

यह क्षण कैसा विकट था। उस समय लगता था पता नहीं कब समाप्त होगा। अब लगता है कभी था ही नहीं।

और वो क्षण भी आज कहाँ है। जब हम सब गुरु द्रोणाचार्य के साथ गंगा स्नान को गये थे। जल में गोता लगाते समय ग्राह ने द्रोणाचार्य का पाँव पकड़ लिया था। समर्थ होते हुए भी गुरु ने चिल्लाना शुरू कर दिया था, "मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो।" तब मैंने सिर्फ ग्राह को देखा और पाँच तीखे बाण चढ़ाकर उसके टुकड़े टुकड़े कर दिये। कितने प्रसन्न हुए थे आचार्य। उन्होंने मुझे ब्रह्मशिर नामक अस्त्र भी प्रदान किया था।

और उस दिन जब रात का भोजन करते समय दीया बुझ गया था। सभी शिष्यों के हाथ भोजन की थाली पर रुक गये थे। सिर्फ मैं ही खाता रहा था। तब द्रोण ने लक्ष्य करके कहा था "यह मेरा शिष्य अर्जुन मेरा नाम उज्ज्वल करेगा। यही अँधेरे में तीर चला सकेगा।"

अर्जुन ने मन में कहा, कल तीर तो रोशनी में ही चलकर लक्ष्यभेद करेगा। गुरु का आशीर्वाद चाहिए।

अर्जुन ने लक्ष्य किया। बरतनों का शोर बन्द हो गया है। रात चुप है। निद्रा की गोद में सोये हुए सभी चिन्तारहित हैं। मेरे सभी अपने मेरे ही पास हैं।

अर्जुन ने मुद्रा बदली। अपने दोनों हाथ सिर के पीछे रखे और सजग प्रहरी की मुद्रा में लेटकर उसे स्मरण हो आया। कैसे बचपन में ही उसे सब एक धनुर्धारी कहने लगे थे। मुझे कभी शर्म नहीं आयी। सिर्फ धनुर्धारी बनने का लोभ सिर उठाता रहा।

हाँ वह सब याद आ रहा है। जब राजकुमार भली भाँति सुशिक्षित हो गये थे। तब गुरु द्रोण ने शिष्यों के अस्त्र ज्ञान की परीक्षा लेने का विचार किया। गुरु द्रोण ने कारीगरों से एक नकली गिद्ध बनवाकर वृक्ष की एक टहनी पर रखवा दिया। वो गिद्ध एकदम असली लगता था। गुरु द्रोण ने कहा "तुम सब लोग धनुष लेकर उस पर बाण चढ़ाकर खड़े हो जाओ। मैं एक एक को आज्ञा दूँगा। जो इस चिड़िया की आँख अपने बाण से बींध देगा वही विजयी होगा।"

द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर से आरम्भ करके सबसे बारी बारी पूछा था 'तुम्हें क्या दिखाई दे रहा है।" प्राय सभी ने कहा था 'गुरुदेव हमें आप, यह वृक्ष और वह चिड़िया—सभी कुछ दिखाई दे रहा है।" द्रोण ने सभी को झिड़क दिया। फिर अन्त में मुझसे पूछा था अर्जुन तुम्हें क्या दिखाई दे रहा है?" मैंने ध्यान से देखकर कहा था 'गुरुदेव मुझे चिड़िया की आँख के सिवा कुछ नहीं दिखाई दे रहा है।" गुरु द्रोण ने प्रसन्न होकर बाण चलाने की आज्ञा दी थी और चिड़िया की आँख भूमि

पर आ गिरी थी। गुरु द्रोण ने मुझे गले से लगा लिया था।

पर आज यह सब क्यो स्मरण हो आया। मैने तो कभी अपने-आप से भी ये बाते न कही थीं। अर्जुन ने बार्यी करवट ली।

केसी होगी द्रोपदी, कृष्णा? सुना हे उसकी देह से निकलती सुगन्ध एक कोस तक रहती हे। उसके बाल कमर के नीचे तक लहराते ह। उसकी मदभरी आँखो पर दृष्टि नहीं ठहरती। वो मधुभाषिणी हे। कृष्णा है। कृष्णा नाम सुन्दर ह। फाल्गुन नाम भी सुन्दर है। फाल्गुन ही तो कभी-कभी कहती हे माँ मुझे। बचपन का नाम। अर्जुन मुस्कराये। ऑख लग गयी। फिर देखा--

एक वन हे शायद। बहुत सुन्दर जलाशय। उस पर एक रग बिरगी चिडिया उड रही है। अचानक वो वन एक मार्ग हा गया है जा स्वयवर के मण्डप की तरफ जाता है। अर्जुन ने देखा, सार भाई शीघ्रता से मण्डप की ओर जा रहे ह ओर आगे-आगे वही चिडिया है। एक मोड पर वृक्ष की टहनी से टकराकर गिरी है। अर्जुन ने तुरन्त उसे उठा लिया ह। फिर भीम अपनी चाडी हथेली पर पानी लेकर उसे पिला रहा है। चिडिया के स्वस्थ होते ही भीम ने उसे युधिष्ठिर के हाथ मे दे दिया है। एक हाथ से दूसरे हाथ मे जाती हुई वो चिडिया व्याकुल होकर अर्जुन को देखती ह।

अर्जुन क्या करे?

पसीने से तरबतर अर्जुन उठ बेठता है। उसका मन धोकनी-सा चल रहा है। वो सॉस धीरे लेता हे ताकि उसके भाई न जग जाएँ। और जग जाने पर पूछ न लें तुम्हे क्या हुआ। इसका उत्तर कहाँ ह। स्वस्थ हान म समय लग रहा हे। जल होता तो अच्छा था। कहाँ ह जल। अर्जुन उठकर बाहर गया। बाहर रेत के ऊँचे स्थान पर जल की भरी गगरियाँ रखी थीं। अर्जुन ने एक गगरी सिर पर उँडेली। भीगने से सुख मिला। दूसरी गगरी का भी सारा पानी अर्जुन ने पी लिया। अभी भी चिडिया की कातर दृष्टि देह पर चिपकी थी। अर्जुन ने सोचा रात का किसी और को भी प्यास लग सकती हे ओर जल पीना उचित नहीं हे।

पर आज ओर किसे प्यास लगेगी।

भीतर आकर अर्जुन ने सोचा--अब सो जाऊँगा। सोने से पहले उसने अपनी बगल मे खाली स्थान छोडा और उस पर हाथ रखकर सो गया। उसे लगा यावन प्यास लेकर आ गया है।

अगले दिन सभी उत्साहपूर्वक उठकर स्नानादि से निवृत्त होकर तेयार हो गये। विदुर द्वारा भेजे गये आर नय वस्त्र आ गये थे। उन्हें पहनकर सभी भव्य और तेजस्वी लग रहे थे। माँ ने सबको आशीर्वाद दिया। अर्जुन सबसे पीछे खडे थे। माँ ने मुस्कराकर देखा। सिर पर हाथ रखा और कहा "अर्जुन, मुझे बहू चाहिए। अपने फाल्गुन की बहू।"

इस घर मे पहली बार कुन्ती के अतिरिक्त किसी और स्त्री की बात हुई थी।

राह मगलनिनादो से भरी-भरी मनुष्या को कन्धे से कन्धा रगडते देख रही थी। सब अपनी धुन म जा रहे थे। कोई किसी की तरफ नहीं देख रहा था। सबको एक ही स्थान पर पहुँचना था। सभी के पाँव शीघ्रता से उठ रहे थे। पथ पर मनुष्यो के अतिरिक्त रथ घोडे सब भाग रहे थे। इन मनुष्यो मे ब्राह्मण तपस्वी उत्साहित युवक। सबके मन म एक ही कामना थी—कृष्णा को देखना। जो विराट नगरी के लोग थे उनके मन मे अपनी राजकुमारी के स्वयवर का उछाह तो था ही उसके ससुराल जाने का वियोग भी था। राजकुमारी के रहने स राज्य कितना भरा-भरा लगता है। ससुराल जाएँगी तो केसा लगेगा?

अर्जुन को रात्रि का स्वप्न स्मरण हो आया। उसने चारो तरफ देखना शुरू किया। न वेसा जलाशय कहीं था न ही रातवाली वो सुनहरी चिडिया ही उड रही थी। अर्जुन की गति ओर तेज हो गयी। मानो शीघ्रता से जाकर ऊहापोह समाप्त हो जाएगी। भीम ने लक्ष्य किया ओर कहा ठीक हे भाई आप मछली की आँख फोडेगे पर अभी उसमे समय है।"

अर्जुन मुस्कराकर भीम के साथ चलने लगे। मन मे आत्मविश्वास भर उठा। अर्जुन के अतिरिक्त भला कोन उस दुर्भेद्य यन्त्र को तोडेगा।

मार्ग मे सभी कृष्णा के रूप ओर गुणो का वखान कर रहे थे। जेसे कि उस पूरे उपवन मे एक ही फूल था ओर वो था कृष्णा। चारो ओर उसी की धूम थी। अर्जुन मुग्ध होकर राह पर अग्रसर हो रहे थे। ओर कोन—आर कोन? अर्जुन ही न।

अपने मुँह को उसने ऊपर किया। सिर मानो आकाश छूने लगा।

हाँ अर्जुन ही।

गुरु द्रोण के आशीर्वाद फलने का दिन आज ही तो हे। सबसे प्रिय शिष्य सबसे कुशल शिष्य सबसे वडा धनुर्धर अर्जुन।

एकलव्य!

हाँ एकलव्य भी तो था। अगर गुरु दक्षिणा मे अपना अँगूठा गुरुदेव की भेंट न कर देता तो क्या कृष्णा के स्वयवर में वो भी आ सकता था? नहीं-नहीं निपाद का वेटा केसे कुलीन राजकन्या के स्वयवर मे आ सकता है। पर राजा द्रुपद ने यह क्या किया। क्या उनके मन मे कहीं अर्जुन था? क्या कुछ लोगा को सन्देह है कि हम अभी जीवित हे। जरूर यह लक्ष्यभेद अर्जुन को ध्यान में रखकर रचा गया। क्या कृष्णा भी जानती होगी? अर्जुन को, मुझे।

अर्जुन की गति फिर तेज हो गयी। भीम ने देखा पर अर्जुन ने ध्यान नही दिया, उसने सोचा वही एक क्षण होगा उसी क्षण पाचाली मेरी होगी।

अव स्वयवर का मण्डप दृष्टिगोचर होने लगा था। आकाश छूता द्वार—रग विरगे

कपडो से सजा द्वार। उस पर स्वयवर लिखा था। स्वर्ण की झालर लटककर स्वयवर की धज दुगनी कर रही थीं। सूर्य देवता मुस्कराते तो झालरे ठुमकने लगती। रथो, घोडा से उतरते धनुष की तरह सजे सीधे अकडे हुए राजकुमार मण्डप से भीतर जा रहे थे। बाहर और भीतर का कोलाहल द्वार के बाद का स्थान बॉट रहा था। युधिष्ठिर ने बिना कहीं देखे ब्राह्मणोवाले द्वार की तरफ जाना आरम्भ किया। ठिठके सभी थोडे से ठिठके। ओर फिर भीतर ब्राह्मणो की पंक्ति मे पाँचो भाई बैठ गये। अर्जुन मध्य मे। ठीक सामने मच था जहॉ स्वयवर होना था।

सप्तखण्डवाले इस सुन्दर भवन के चारो तरफ उत्सव ही उत्सव था। हर व्यक्ति जैसे द्रोपदी को ही ब्याहने आया था। राजकुमार अपने-अपने स्थान से उछल-उछलकर उत्तरीय हिला रहे थे। मैत्री ओर सद्भाव से सब चीख रहे थे, पुकार रहे थे। हर कोई बार-बार द्वार की तरफ देख रहा था। कृष्णा के आने मे अब कहाँ देर थी।

अचानक एक मनोहारिणी सुगन्ध का झोका पूरे मण्डप म व्याप्त हो गया। सब उत्सुक होकर एक-दूसरे को प्रश्नातुर दृष्टि से देखने लगे। फिर सबकी दृष्टि द्वार की ओर लग गयी। कोलाहल इतना शान्त हो गया कि रथ के घोडो की टाप का स्वर एक लयात्मकता मे बँधा हुआ सुनाई देने लगा।

टक टक टक टक

घोडो की टापो के साथ ही सब के हृदय की धडकने भी मानो सुनाई देने लगीं। फिर एक मद्धिम से शोर मे विलीन हो गयी। रथ आकर मुख्य द्वार पर रुक गया।

रथ से लगभग कूदकर धृष्टद्युम्न ने अपनी बहन का हाथ पकडकर उसे रथ के नीचे उतारा। फिर दोना द्वार की शोभा देखकर ठिठके ओर फिर धीरे-धीरे सभा-मण्डप मे प्रवेश कर गये। द्रोपदी ने अपना परिधान हाथ से सँभाला हुआ था। आकर्पण से रक्तिम पडे चरण जैसे उसके नूपुरो का स्वर सुन रहे थे। सुगन्धित हवा के झाको से पूरी सभा मग्न हो गयी। द्रोपदी के पीछे उसकी सखियो की टोली थी। सबसे आगे आती सखी के हाथ मे बडा-सा थाल था, जिसमे वरमाला थी। वरमाला में से किरणे निकलकर वीरो के हृदय को ओर उमड़ने मे सहायता कर रही थीं। किसके गल के लिए बनी है यह जयमाला? द्रौपदी अपने भाई के पीछे पीछे जा रही थी। मन्द-मन्द मुस्कराती द्रोपदी की सखियाँ मोरनियो की तरह पीछे पीछे मानो नाचती हुई आ रही थीं। पूरी सभा द्रापदी के आते ही नि शब्द उठकर खडी हो गयी थी। द्रौपदी को उसके आसन पर धृष्टद्युम्न ने बिठाकर सभा मे सबको अपना स्थान ग्रहण करने के लिए कहा। फिर दोनो हाथ जोडकर नमस्कार किया। जब सब अपना-अपना स्थान ग्रहण कर चुके तब धृष्टद्युम्न ने पुन हाथ जोडकर कहा "मण्डप म उपस्थित सभी वीर सुने। यह धनुप-बाण ह और सामने लक्ष्य है। जो रूपवान,

योद्धा वली और कुलीन व्यक्ति घूमते हुए यन्त्र के बीच में से अधिक-से-अधिक पाँच वाण चलाकर लक्ष्यभेद करेगा उसे ही मेरी बहन कृष्णा वरमाला पहनाएगी।"

लोगों ने देखा।

धनुष के पास ऊपर ऊँचाई पर सोने की मछली टगी थी। उसके नीचे एक चमकदार यन्त्र वडे वेग से घूम रहा था। नीचे खौलते तेल का कड़ाह था। घूमते यन्त्र के मध्य से ही तीर चलाकर मछली की आँख फोड़ जो खौलते तेल के कड़ाह में लक्ष्य गिरा सकेगा, जयमाला उसी के गले में पड़ेगी।

सब लोगों ने माना पहली वार लक्ष्य देखा। पूरी सभा में एक चुप्पी छा गयी।

मुख्य द्वार पर अचानक राजा द्रुपद का रथ आकर रुका। पूरी सभा में एक ध्वनि विखर गयी। राजा द्रुपद मच पर आकर अपने स्थल पर बैठ गये। अपनी पुत्री को वधूवेश में देखकर उनकी आँखे भर आयीं। द्रौपदी ने अपनी भीगी आँखें धरती पर केन्द्रित कर दीं।

धृष्टद्युम्न ने फिर हाथ जोडकर कहा, "महाराज द्रुपद पधार चुके हैं। अब स्वयंवर की कार्यवाही शुरू होगी।"

धीरे धीरे एक-के-बाद एक राजकुमार उठते धनुष पर डोरी चढ़ाते, अपमानित होते और सिर झुकाकर अपने स्थान पर जाकर बैठ जाते। जरासन्ध शिशुपाल, शल्य और दुर्योधन जैसे पराक्रमी राजकुमार भी असफल हो गये। कर्ण की बारी आयी तो सभा में एक लहर दौड गयी। सबने सोचा अगनरेश अवश्य सफल होगे। कर्ण ने धनुष उठाकर खडा किया। प्रत्यचा भी तानकर चढानी शुरू की पर धनुष का डण्डा ही हाथ से छूट गया और उछलकर उसके मुँह पर आ लगा। कर्ण अपनी चोट सहलाता अपने स्थान पर जा बैठा। इसके पश्चात् किसी ने भी धनुष को हाथ लगाने की हिम्मत न की।

जब और कोई राजकुमार न उठा तब राजा द्रुपद का चेहरा मलिन हो गया। उन्होंने दुःखी होकर कहा "क्या धरती वीरो से खाली हो गयी है? या लक्ष्यभेद ही वडा कठिन है। हे भगवान्! क्या मेरी द्रोपदी कुँआरी ही रह जाएगी?"

अपने स्थान पर बैठी द्रोपदी का मुँह भी मलिन हो गया। उसने दुखी होकर सोचा क्या यह कठिन लक्ष्यभेद इसलिए है कि मेरा ब्याह ही न हो। यह लक्ष्यभेद अर्जुन कर सकता था। पर कहाँ है अर्जुन?

राजा द्रुपद भी मन मे गर्दन हिलाकर सोच रहे थे। कहाँ है अर्जुन?

धृष्टद्युम्न कभी अपनी वहन को देखता, कभी पिता को, कभी उसकी दृष्टि सभा मे घूम जाती। इस निराशा के कुहरे में से विद्युत की तरह ब्राह्मणों के बीच एक तरुण ब्राह्मण उठकर खडा हो गया। सभा मे हलचल मच गयी। सभी उस तरफ देखने लगे। इस बात पर आश्चर्य भी व्यक्त करने लगे कि जहाँ ऐसे-ऐसे धनुर्धारी

पस्त हो गये यह ब्राह्मणकुमार क्या जीत पाएगा? क्या हो गया इसे? क्या एक ब्राह्मणकुमार भी इस स्वयंवर में शामिल हो सकता है?

परन्तु स्थिति इतनी ऊहापोह में थी कि इस बात का किसी ने कड़ा विरोध न किया। ब्राह्मण अपने उत्तरीय हिलाकर तथास्तु करकर अर्जुन को आशीवाद देने लगे।

अर्जुन अपनी मस्त चाल और आत्मविश्वास भरे डगों से सिर आकाश में ऊँचा किये धनुष के समीप जाकर खड़ा हो गया। धनुष पर डोरी चढ़ाकर उसने तीर चढ़ाया। घूमते चक्र में से तीर ने मछली को बेधा और वह खौलते कड़ाह में आकर गिर गयी। यह इतनी शीघ्रता से हुआ कि आश्चर्यचकित सभा में लोगों को साँस लेने का भी समय न मिला। महाराजा द्रुपद का चेहरा चमक उठा। द्रौपदी के होठ मुस्कराहट में खिल गये। धृष्टद्युम्न ने सिर ऊँचा कर लिया। ब्राह्मण अपने उत्तरीय हिला हिलाकर साधु साधु पुकार रहे थे। धृष्टद्युम्न ने अपनी बहन को स्नेह से देखा। द्रौपदी ने संकेत समझ लिया। उसने उठकर सकुचाते हुए थाल में से जयमाला लेकर अपने हाथ में सीधी की और अर्जुन के गले में डाल दी।

स्वयंवर हो गया। पूरे मण्डप में एक प्रसन्नता की बयार बह गयी। जिसमें विरोध के स्वर भी सुनाई पड़ रहे थे। किसी ने कहा, "ब्राह्मणों के लिए स्वयंवर की रीति नहीं होती। यदि इस कन्या को कोई भी राजकुमार पसन्द न था तो उसे चाहिए था वह कुँआरी रह जाती और चिता पर चढ जाती। ब्राह्मण की पत्नी बनने से तो यही अच्छा था।

राजकुमारों का उत्साह बढ़ता जा रहा था। यह देखकर भीमसेन चुपके से बाहर गया। एक पेड़ को जड़ से उखाड़ा। उसे ऐसे झिंझोड़ा कि उसके सारे पत्ते झर गये। फिर उसे लाठी की तरह कन्धे पर रखकर अर्जुन की बगल में आकर खड़ा हो गया। अर्जुन की मृगछाला को थामे द्रौपदी खड़ी थी। उसने भीम को देखा तो उसकी आँखों में चमक भर उठी। महाराजा द्रुपद और धृष्टद्युम्न ने भी शान्ति का अनुभव किया।

श्रीकृष्ण और बलराम ने अर्जुन को पहचान लिया था। वे विप्लव करनेवाले राजकुमारों को समझाने लगे। उन्होंने कहा "स्वयंवर की शर्त जीतकर जिसने द्रौपदी

को प्राप्त किया है उस पर कोई विचार नहीं होना चाहिए।" सभी लोग श्रीकृष्ण की बात सुनने लगे। इस बीच भीम, अर्जुन और द्रौपदी कुम्हार की कुटिया की ओर चल पडे। धृष्टद्युम्न चुपके से उनके पीछे हो लिया।

अर्जुन के पीछे द्रौपदी परछाई की तरह चल रही थी। उनके पीछे लट्ठधारी भीम चारो ओर चोकन्नी दृष्टि डालकर अकडकर आकाश म गर्दन उठाये मस्त साँड की तरह चल रहा था, जेसे लक्ष्यभेद उसी ने किया हो। द्रौपदी की देह से आती सुगन्ध जेसे उसे मस्त सॉड की तरह ही मग्न किये हुए थी। भीम यूँ कहता प्रतीत होता था--कोन हे जो मेरी राह म आये? अर्जुन ने देखा ओर मुस्कराया। द्रौपदी एकदम साथ साथ चल रही थी। अर्जुन ने कहा, "देवी, यह भीम मरा वडा भाई ही नहीं मित्र भी हे। तुम्हे पाकर जितना प्रसन्न म हूँ, उतना ही यह भी है।"

द्रोपदी ने दृष्टि उठाकर अर्जुन को देखा। उसकी आँखो मे प्रश्न था। द्रौपदी की प्रश्नाकुल ऑखो को देखकर अर्जुन को भान हुआ कि वो क्या कह रहा है। अव छिपाना व्यर्थ हे। द्रोपदी भी तो अव पाण्डव हो गयी है। और आनेवाले जीवन से इससे ज्यादा अपना ओर कोन होगा? अर्जुन ने मुस्कराकर वडे गर्व से कहा देवी, हम पाण्डव ह और म अर्जुन हूँ। हम छिपकर रह रहे ह।"

द्रौपदी ने अर्जुन को देखकर सन्तोष से भगवान् का धन्यवाद करके कहा "हम सवकी मनोकामना पूर्ण हुई। द्रोपदी ने अर्जुन का उत्तरीय पकडकर चेन की साँस ली।

खुशी से द्रोपदी काँप रही थी। क्या मने सचमुच अर्जुन को वरा है। उसने अर्जुन को देखा ओर नजर नीची करके कहा यह स्वप्न सत्य हो गया। इसका विश्वास नहीं होता।" अर्जुन ने वडे स्नेह से उसका हाथ पकडकर कहा, "मुझे हमेशा विश्वास था कृष्णा सिफ मेरी होगी। म वडा भाग्यशाली हूँ।"

भीम अचानक पीछे चलते चलते उनके आगे हो लिया।

अर्जुन न द्रोपदी से कहा "देवी मेरा यह भाई कहीं एकदम शिशु है। यह न होता तो हम भी न होते। यह हमारा रक्षक है इसके विना पाण्डव नहीं हे।"

द्रोपदी अर्जुन को देख रही थी। उसके पाँव मे कुछ चुभा तो अर्जुन ने कहा "राह स्वच्छ होने पर भी कंकड हो सकते ह देवी।"

द्रोपदी न गर्दन झुका ली। नयी राह पर चलने का अभ्यास तो करना ही होगा।

भीम ने अकडकर चलते हुए द्रोपदी की देह से आ रही सुगन्ध को परे हटाना चाहा पर वह और पास आकर लिपटती गयी। भीम ने सोचा, यह जो अद्वितीय सुन्दरी अर्जुन के पीछे पीछे चल रही है इसका रक्षक तो मे ही हूँ। हमारे घर आनेवाली यह दूसरी स्त्री हे। माँ को भी जो भरोसा मुझ पर हे वह किसी पर नहीं है। माँ को जव सुरग से निकालकर ला रहा था तव यूँ ही आभास हो रहा था जेसे यह मेरी माँ नहीं वेटी है। भीम प्रसन्न हो गया। उसने सोचा आज माँ घर मे एक और

स्त्री को पाकर कितनी प्रसन्न होगी। हम भिक्षाटन के लिए चले जाते हे तो माँ अकेली हो जाती है अब द्रोपदी के सग बाते करेगी। माँ कितनी खुश होगी आज। माँ बहू को पाकर निहाल हो जाएगी। राजकुमारी द्रोपदी अब माँ की बहू होगी। भीम प्रसन्न हो गया। उसने सोचा हिडिम्बा के निवेदन पर जो मने उसे पुत्र प्रदान किया उससे मा को क्या सुख मिला। मै ही जान छुडाकर भागा, पर क्या हिडिम्बा राक्षसी होकर कभी मनुष्यो जैसा व्यवहार करती? फिर उसने सोचा—पाण्डवों को देखकर स्त्रिया का मोहित होना स्वाभाविक ही हे। भीम चल रहा था जैसे एक युग चल रहा था। अपने पीछे एक नयी सृष्टि की रचना होती वह कहाँ देखता?

द्रौपदी को यह बता देने के बाद कि मे अर्जुन हूँ, अर्जुन भी अपनी प्रसन्नता छिपा नहीं पा रहा था। दोनों बार-बार एक-दूसरे को देखकर मुस्करा देते। द्रोपदी बार-बार लजा जाती। सगमरूपी इस राह पर दोनो के हृदय मिल रहे थे। पानी के बुलबुले इकट्ठे होते एकाकार होकर झूल जाते। पहले दो धाराएँ थी—इसका कोई प्रमाण न मिलता।

राह म एक छोटा सा नाला आया। भीम ने एक ही छलाँग म पार कर लिया। अर्जुन ने द्रोपदी की तरफ हाथ बढाया। द्रोपदी ने दोनो हाथ बढा दिये। अर्जुन ने उसे दोनो हाथो से उठाकर नाले के पास खडा कर दिया। द्रोपदी गर्व से भर उठी। अर्जुन के यह हाथ अब इस जगत्‌रूपी समुद्र से उसे पार उतार देगे।

सुख से भर उठी द्रोपदी। विश्वास-अविश्वास मे झूलता एक नाम अर्जुन। बचपन से ही कितनी बार सुना हे अर्जुन, वही अर्जुन मुझे जीत लाया हे। बचपन म तो सब कहते थे ऐसा कोन भाग्यशाली होगा जिसे द्रोपदी मिलेगी। भाग्यशाली तो द्रोपदी है जिसे अर्जुन मिला हे। जब सबको पता चलेगा कि मुझे अर्जुन ने स्वयवर मे जीता हे तो सभी मेरे भाग्य पर ईर्ष्या करगे।

इधर अर्जुन भी हवा मे उड रहा था। उसे स्वयवर का भव्य मण्डप स्मरण हो आया। इतने लोगो की दृष्टि सिर्फ कृष्णा पर थी। समस्त आकर्षण का केन्द्र कृष्णा अब सिर्फ मेरी होगी। मेरे जैसा भाग्यशाली कौन है?

अर्जुन ने बडे स्नेह से द्रोपदी से कहा। सामने जहाँ से धुआँ-सा उठ रहा हे, वहीं एक कुम्हार के घर हम ठहरे हे देवी। द्रोपदी ने देखा। द्वार पर अपना लट्ठ रखकर भीम ठिठका। सामने युधिष्ठिर आर नकुल, सहदव हाथ-मुँह धाकर सुस्ता रहे थ। युधिष्ठिर ने कहा, "आ गय भीम, चलो माँ को बताएँ।"

भीम हाथ-मुँह धोने लगा तो अर्जुन भी द्रौपदी के सग ऑगन मे आ गया। द्रौपदी नये स्थान पर हिरणी की तरह चारो ओर देखने लगी। अर्जुन ने जल की गगरी से हाथ पॉव धोकर द्रौपदी को जल दिया। "देवी आप भी हाथ मुँह धो ले।"

युधिष्ठिर ने सोचा माँ को एकदम चकित करूँ। उसने द्वार पर खडे होकर कहा, "माँ हम भिक्षा लेकर आये ह।"

कहीं भीतर से ही आवाज़ आयी, "बेटा, सभी मिलकर बाँट लो।"

द्रोपदी ने भयातुर दृष्टि से अर्जुन को देखा। अर्जुन ने बडे स्नेह से कहा, "देवी, माँ भिक्षा समझकर बाँटने को कह रही है, जब तुम्हे देखेगी तो "

द्रोपदी एकदम लाज मे डूब गयी।

युधिष्ठिर ने सोचा—यह क्या घटा। म तो कभी मिथ्या नहीं बोलता। और माँ की आज्ञा ही मेरे लिए सर्वोपरि है। माँ ने बिना देखे यह क्या कह दिया? पत्नी पति को मजबूरी मे बाँट सकती हे पर क्या पत्नी कोई बाँटता है? क्या सर्वश्रेष्ठ धनुर्धारी अपनी पत्नी बाँटेगा। देव यह क्या हो गया?

द्रोपदी अर्जुन के साथ द्वार पर खडी हो गयी। युधिष्ठिर भीतर गय। माँ को लिवा लाए। कुन्ती द्वार पर खडी द्रोपदी को देखने लगी। क्या इसे ही मने बाँटने का कह दिया? क्या यही द्रोपदी हे? कहीं मेरे पुत्रो का काल तो नहीं है यह। यह क्या किया मेने?

"मिल-जुलकर बाँट लो" यह क्या कह दिया मने।

कुन्ती द्वार पर आकर ठिठक गयी। उसके पाँचो पुत्र द्रोपदी के साथ खडे थे। जेसे पाँच योगियो के बीच मशाल जल रही हो। कुन्ती स्तब्ध हुई। यह क्या कह दिया मने? यह केस हो गया? अब क्या करूँ? शब्द ओर तीर तो वापस नहीं आते। यह अग्निशिखा क्या मेरा घर फूँक देगी?

माँ को चुप देखकर युधिष्ठिर ने कहा, माँ यह द्रोपदी हे। स्वयवर मे अर्जुन ने लक्ष्यभेद करके पाया हे इसे। तुम्हारे वचन के अनुसार " शब्द पूरे न होने दिये, कुन्ती ने फिर कहा नहीं युधिष्ठिर यह भिक्षा नहीं है। राजकन्या हे राजकन्याएँ बँटती नही। यह मेरे घर मे रोशनी करेगी ओर सबका जोडगी।"

युधिष्ठिर सोच मे पड गया। उसने कहा, "माँ तुम्हारा कहा मिथ्या नहीं हो सकता। तुम्हारी आज्ञा ही धर्म हे। काई न-काई राह ढूँढ निकालनी होगी।"

कुन्ती ने द्रोपदी का हाथ पकडा। भीतर ले जाते हुए बोली "राजकन्या, आओ भीतर आओ। म अर्जुन की मा तुम्हारा स्वागत करती हूँ। आओ कृष्णा, मेरा घर आलोकित करो।"

सकुचाते हुए द्रोपदी भीतर जाने लगी। देहरी लाँघते समय उसने अर्जुन का उत्तरीय थाम लिया। अर्जुन तटस्थ रहे। कुन्ती ने देखा एक आह भरकर सोचा— मेरी जाई तो नहीं ह। मेरा भाग्य क्यो लायी है। चोला बदलने मे बडा कष्ट होगा।

बडे सम्मान ओर प्यार से कुन्ती द्रोपदी को भीतर लिवा ले गयी। एक ऊँचे स्थान पर पत्तो और कुशा का आसन लगा था वहीं द्रोपदी को बिठाकर कुन्ती ने उसकी आरती उतारी। तभी कोलाहल हुआ ओर कृष्ण ने बलराम के साथ भीतर पदार्पण किया। पाण्डवो ने उनका स्वागत किया। दोनो यदुवीरो ने अपनी बुआ कुन्ती क चरण स्पर्श किये और कहने लगे हमे तो स्वयवर मण्डप म ही मालूम हो गया

था। द्रौपदी की सुगन्ध के पीछे-पीछे यहाँ आ पहुँचे। मन कितना प्रसन्न हुआ। विलम्ब सहना कठिन था।"

युधिष्ठिर ने कहा, "हम तो सोच रहे थे कोई पहचान नहीं पाएगा।"

कृष्ण ने कहा, "ऐसा विकट लक्ष्यभेद क्या अर्जुन के अतिरिक्त कोई और भी कर सकता है? अग्नि भी कहीं राख के ढेर में छिप सकती है। रंग छिप भी जाए पर आँच कैसे छिपेगी। मैं तो प्रसन्नता के मारे अर्जुन को वहीं पर गले लगा लेता। पर दुर्योधन भी वहीं था। उस प्रसन्नता के अवसर पर मैं नहीं चाहता था उसे पता चले कि पाण्डव बच निकले हैं। आपको देखकर आँखें जुड़ा गयीं। अब हम भी जाने की आज्ञा दीजिए। कुछ देर हम यहाँ न पाकर किसी को भी सन्देह हो सकता है। आज ही कई राजा वापस चले गये हैं। कल सुबह तक तो सभी चल जाएँगे। बुआ कुन्ती, आप बड़ी भाग्यशाली हैं। कृष्णा जैसी बहू हर किसी के घर की चौखट पर दीया जलाने नहीं आती।"

कुन्ती ने कहा "चिरंजीव होइए। भगवान् की इच्छा हुई तो इसी बहू के आने से हमारा भाग्य पलट जाएगा।"

उनके जाने के बाद कुन्ती ने अन्न के भाग किये। द्रौपदी के आगे भी केले का पत्ता बिछा दिया गया। सब भोजन करने लगे। द्रौपदी ने सोचा आज तक भोजन इतना स्वादिष्ट तो न होता था। धरती पर कितने स्वर्ग हैं।

अर्जुन आदि खाकर गये तो द्रौपदी संस्कारवश सबकी पत्तल उठाकर बाहर फेंकने चली। कुन्ती ने हाथ पकड़कर कहा, "शुभे, आज नहीं। यह काम रोज सहदेव करता है।"

उस बहुत बड़े घर में कुशा और पत्तों की सुखदायी सेज पर सोकर द्रौपदी ने अनुभव किया कि राजमहल के ऊपर भी राजमहल है जिसमें तृप्ति का अनुभव अनूठा है। राजमहल से कुम्हार की कोठरी में सहजता अधिक है यहाँ आडम्बर नहीं है। द्रौपदी को राजमहल के बाहर यह पहला अनुभव बड़ा सुखद लगा।

राजकुमार धृष्टद्युम्न यह जान लेने के बाद कि द्रौपदी को स्वयंवर में अर्जुन ने जीता है, तुरन्त राजप्रासाद गया और एक ही साँस में सारा वृत्तान्त सुना दिया। राजा द्रुपद

ने यह समाचार जानकर सुख की सास ली। फिर अचानक बेटे का गले से लगाकर रो पडे। धृष्टद्युम्न भी रोने लगा। दोनो ने सुख से एक-दूसरे को देखकर कहा, "आज द्रौपदी परायी हो गयी।"

द्रुपद ने कहा "यह समाचार तुरन्त अपनी मा को सुना आओ। उसके महल के दीये जग रहे है। ससुराल जाती बेटी की माँ के मन की तह तक कौन पहुँच पाएगा। जाओ, कल प्रात पुरोहित को बुलाकर पाण्डवो का कुलगोत्र दिखाकर शुभ लग्न भी निकलवाना होगा। स्वयवर के तुरन्त बाद ही विवाह भी हो जाना चाहिए।

द्रौपदी की माँ अपने महल म शीघ्रता से आ-जा रही थी। उसने जसे ही अपने पुत्र के पग की आहट सुनी जाकर उसके गले लगकर बोली "कहाँ है मेरी द्रौपदी?

'माँ तुम्हारा जामाता अर्जुन है। अर्जुन ने ही लक्ष्यभेद किया है।"

कहाँ है द्रौपदी?"

वह यहीं एक कुम्हार के घर म ठहरे है। वहीं तक म जाकर सारा पता कर आया हूँ। जैसे ही देवी कुन्ती उसे भीतर ले गयीं म भागा भागा यह समाचार सुनाने आ गया।"

द्रौपदी की माँ की रुलाई फूट पडी। उसने कहा "जाओ बेटी पति का घर ही अपना घर है। सुखी रहो मेरी बेटी। भगवान् ने अर्जुन तेरे लिए ही रखा था। उसने पुत्र से पूछा "क्या कुम्हार के घर पर ही रहेगी मेरी सुता?"

माँ पिताजी की आज्ञा है। प्रात जाकर सबको लिवा लाऊँगा।"

माँ के मन म ढाढस बँधा।

सूरज उगते ही रथ म बेठकर धृष्टद्युम्न मगन होकर बहन को लेने चला। पाण्डव अग्निहोत्र कर रहे थे। द्रौपदी भी कुन्ती के साथ खडी थी। देखकर धृष्टद्युम्न की आख जुडा गयी।

धृष्टद्युम्न भी हाथ जोडकर बहन के साथ जाकर खडा हो गया। पूर्णाहुति के समय कुन्ती ने नारियल धृष्टद्युम्न के हाथ मे देकर कहा लो बेटे इस घर के पहले सम्बन्धी हो। आज पूर्णाहुति तुम्हारे हाथ से हो।

धृष्टद्युम्न ने तृप्त होकर कहा मे द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न पिता की आज्ञा से आपको लेने के लिए आया हूँ। हमारा अहोभाग्य है जो हमारा सम्बन्ध पाण्डवो के साथ हुआ। अब घर चलिए।

सभी रथ पर सवार हुए तो द्रौपदी ने कुम्हार की चौखट को प्रणाम करके कहा "यहाँ जो सुख पाया वही सुख मुझ हमेशा मिले। उसे लगा कमलिनी एक सरोवर से निकलकर दूसरे सरोवर मे पहुँच गयी थी। अब सरोवरो मे ही रहने का भाग्य खुल गया है।

राजमहल म पाण्डवो का यथोचित स्वागत हुआ। सबको एक एक महल में ठहरा दिया गया। जब सब मिलकर बेठे तो राजा द्रुपद ने युधिष्ठिर से कहा "आप

अर्जुन को आज्ञा दे। विवाह का मुहूर्त आज ही का निकला है।"

युधिष्ठिर सोच मे थे। उन्होने कहा, "महाराज, विवाह तो अभी मेरा भी नही हुआ। माता कुन्ती की आज्ञानुसार द्रोपदी हम सबकी पत्नी होगी।"

राजा द्रुपद ने कहा, "एक पति के तो बहुत-सी स्त्रियाँ हो सकती है पर एक स्त्री के पाँच पति कैसे हो सकते है? यह धर्म के विपरीत है। द्रोपदी को लक्ष्यभेद मे सिर्फ अर्जुन ने जीता है।"

युधिष्ठिर ने कहा, "धर्म की कई तरह से व्याख्या हो सकती है। इस समय उसकी बात रहने दे। इस समय सबसे बडा धर्म माँ की आज्ञा का पालन है। और उसकी अवहेलना पाण्डुपुत्र नहीं कर सकते।"

राजा द्रुपद असमजस मे पड गये। क्या कहे? ऐसी बात तो उन्होने सोची न थी। तभी वहाँ महर्षि वेदव्यास का आगमन हुआ। उनके स्वागत अभ्यर्थना के बाद राजा द्रुपद ने वेदव्यास से प्रश्न किया, "भगवन्, एक स्त्री अनेक पुरुषो की धर्मपत्नी कैसे हो सकती है? यह तो अधर्म है।"

व्यासजी ने राजा द्रुपद को एकान्त मे ले जाकर कहा "मुझे यह विदित था, इसीलिए मै यहाँ आया हूँ। पिछले जन्म मे द्रोपदी ने भगवान् शकर से वरदानस्वरूप पाँच बार पति माँगा था। उसे पाँच गुणोवाला एक पति न देकर शिव ने पाँच पतियो का वरदान दिया है। अब आप इस बात को बढाये नही।"

राजा द्रुपद निरुत्तर हो गये। अब कहने को क्या बचा था? फिर भी चिन्ता उनका पीछा न छोड रही थी। उन्हें द्रोपदी की चिन्ता थी। अपूर्व सुन्दरी पुत्री बुद्धिमती भी थी और राजा द्रुपद ने उसे कभी भी पुत्र से कम नहीं समझा था। पता नहीं, दैव को क्या मजूर है?

जिसके बारे मे ये सब निर्णय लिये जा रहे थे वही द्रोपदी अपने महल के एकान्त कोने में बैठी सोच मे डूबी थी। अन्यमनस्क-सी शून्य मे देखती भाग्य का लेखा-जोखा कर रही थी।

कैसी विडम्बना है, न तो कोई अर्जुन को पूछता है जिसने लक्ष्यभेद करके मुझे जीता है न ही कोई मुझे पूछता है। क्या मै सचमुच भिक्षा हो गयी हूँ। क्या भिक्षा किसी की भी झोली मे डाल दी जा सकती है। अपने बारे मे मै निर्णय लेने का अधिकार खो चुकी हूँ। क्या मेरी इच्छा का कोई महत्त्व नहीं है? मेरे अपने पिता भी इस मर्म को क्यो नहीं समझते? स्वयवर जितना विराट् सत्य क्या मिथ्या हो जाएगा। भिक्षा भिक्षा द्रोपदी ने सोचा राजकुमारी होकर मै भिखारिन हो जाऊँगी क्या? यही नियति है क्या?

और अर्जुन

इतने पराक्रम से लक्ष्यभेद करके स्वयवर जीतकर क्या बँटने को छोड देगे मुझे? क्या कुछ नहीं कहेगे वो? मै तो उन्ही की होकर कुम्हार के घर पैदल जाकर

रह आयी। उनके साथ तो मैं खुले आकाश के नीचे भी रह सकती हूँ। पति के संग स्त्री झोपड़ी में भी रहे तो राजमहल होता है। पता नहीं, भाग्य में झोपड़ी है या महल। अर्जुन का साथ हो तो झोपड़ी भी महल है।

द्रौपदी ने ऊहापोह में एक गहरा निःश्वास लिया, फिर अपने-आप से कहा "नहीं, पाँच पतियों की पत्नी बनकर रहना सम्भव नहीं है। लक्ष्यभेद के बाद जब मैंने वरमाला अर्जुन के गले में डाली तब मैं और किसी की नहीं रह गयी। अर्जुन से पूरा ब्रह्माण्ड भर गया। इस पृथ्वी पर अर्जुन के अतिरिक्त और कोई नहीं है। अर्जुन ही मेरा सर्वस्व है। वही मेरे इस नये जीवन का आरम्भ है वही अन्त है। वही मेरे इस ब्याह का चाव होगा। यह अन्याय नहीं होना चाहिए। पिताश्री से कहकर यह अनुचित में न होने दूँगी।"

माँ कुन्ती ने जब बाँटने को कहा था, तब उनके मस्तिष्क में भीख थी, राजकुमारी द्रौपदी नहीं थी। नहीं तो वह ऐसा अनुचित कदापि न कहतीं।

नहीं ऐसा नहीं होगा।

धीरे धीरे किसी के कदमों की पदचाप द्रौपदी के कक्ष तक आ गयी। चौंककर खड़ी हो गयी द्रौपदी। उसने देखा उसके पिता महाराज द्रुपद उसके कक्ष में आ गये हैं।

उन्हें देखते ही उलझन में फँसी द्रौपदी घायल गौरैया की तरह पिता के सीने से जा लगी। महाराजा द्रुपद कन्या की दुविधा जानकर उसके सिर पर थपकी देते हुए बोले "कल्याणी महर्षि व्यास आये हैं। उन्होंने ही बताया कि पिछले जन्म में तुमने शिव से वरदान माँगा था। उसी के अनुसार पाँचों पाण्डवों से ब्याह करना होगा।"

द्रौपदी दुःख से बोली, "पिताश्री क्या कह रहे हैं आप।"

राजा द्रुपद ने कहा, "तुम नकार सकती हो। यह निर्णय तुम्हारा है। परन्तु विधि को कौन टाल सका है। इस क्षण लिया गया निर्णय तुम्हारे पूरे जीवन को कुहर से ढँक दे सकता है। पर निर्णय तुम्हीं ले सकती हो पुत्री। मैं क्या कहूँ? महर्षि व्यास से तुम्हारे पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुनकर मैं तो कुछ नहीं कह सकता।

द्रौपदी के हृदय में क्रोध का एक बवण्डर उठा। उसने अपने दोनों हाथों की मुट्ठियाँ कसकर भींच लीं। पाँचों उँगलियाँ इकट्ठी होकर लाल सुर्ख हो गयीं। उनमें लाल लहू भी इकट्ठा हो गया। द्रौपदी ने अपनी हथेली की तरफ देखा। उसे लगा ये पाँच उँगलियाँ पाँच पाण्डव हैं। जैसे इन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता, वैसे ही पाण्डवों को भी पृथक् करना असम्भव है। पर क्या सभी से ब्याह करूँ? क्या लक्ष्य सभी ने भेदा है। यह कहाँ फँस गयी मैं? पिता अपना परामर्श नहीं देंगे तो निर्णय अकेले ही लेना पड़ेगा। पर पाँच पुरुषों से ब्याह करके मैं सुखी रह पाऊँगी। पाँच पुरुषों की पत्नी बनने का कभी स्वप्न में भी विचार नहीं किया। नहीं मैं यह ब्याह

नहीं करूँगी। यह मेरे मन के अनुकूल नहीं। उसने अपने पिता को देखा—पिता सामने आकाश की तरफ देख रहे थे। उनकी सिकुडी हुई आँखे तरल थीं। क्या करे द्रौपदी? उसे अर्जुन का ध्यान आया। क्या इस सुन्दर पुरुष के बिना म पूरा जीवन काट सकूँगी? प्रथम दृष्टि म ही मैंने अपना सम्पूर्ण व्यक्तित्व इसमे लीन कर दिया। यदि पाँचों पाण्डवो से व्याह नहीं किया, तब अर्जुन से भी ब्याह न होगा और अर्जुन से ब्याह न हुआ तो द्रोपदी मरण को ही वरण करेगी। उस मरण से यह मरण कहीं अधिक दु खदायी है? वहाँ अर्जुन भी होगा, उसे देख तो सकूँगी। मेरा पति तो अर्जुन ही है। दो दिन मे ही मेरे हृदय के कपाट उनके लिए पूरे खुल गये हे। इसके भीतर जब तक अर्जुनरूपी भँवरा न आये कपाट खुले रहेगे। व्याह तो करना ही पडेगा। अर्जुन के लिए यह कर पाना कठिन नहीं। हाँ, म यह व्याह करूँगी। मरण को तो कभी भी वर सकती हूँ, परन्तु यह निर्णय तो अभी लेना पड़ेगा। प्रेम मे लोग इतने असहाय क्यो हो जाते ह? नकारने पर म अर्जुन को खोना नहीं चाहती। अर्जुन मे पूर्णतया समर्पित द्रौपदी सभी भाइयो के सग उनकी पत्नी बनकर रह लेगी। तुम्हारा लोभ मेरे रोम-रोम म बस गया हे। किसी मूल्य पर भी तुम्हे नही छोड सकती।

पिता द्रुपद अपनी पुत्री के बदलते भाव देख रहे थे। दो दिन मे ही बेटी का बचपन चला गया हे। किस दुविधा मे डाल दिया प्रभो।

द्रोपदी अचानक घूमी। उसने एकदम शान्त होकर पिता से कहा, "मे ब्याह के लिए प्रस्तुत हूँ पिताश्री।" पिता ने पुत्री को देर तक देखा। फिर एक आह भरकर चल गये।

द्रौपदी उसी स्थान पर खडी रह गयी जहाँ उसने व्याह करने का निर्णय लिया था। पिता के जाते ही उसने सिर ऊँचा किया। फिर जेसे शून्य मे कहा 'यदि एक बार मिल जाए अर्जुन तो उसी से पूछूँ—क्या म सच ही भिक्षा हूँ? अगर भिक्षा ही थी तो सिर्फ तुम्हारी ही गोदी म क्यो नहीं गिरी।

भिक्षा शब्द पर राजकुमारी फफक फफककर रो पडी। आँखो से अविरल धाराएँ बहने लगीं। मन म द्वन्द्व चलने लगा।

मैने पिता से कह दिया 'में पाँचो पाण्डवो से ब्याह करूँगी।' पर यह होगा कैसे? युधिष्ठिर अर्जुन के बडे भाई ह। क्या वो भी मेरे पति होगे? नकुल सहदेव भी मेरे पति होगे क्या? क्या मै अपन पति के छोटे भाइयों की भाभी न हो सकूँगी उनकी भी पत्नी? और भीम—पूरे परिवार का रक्षक भीम? हे भगवान क्या करूँ? क्या यह जन्म इसी तरह जाएगा? क्या भाग्य दिया? क्या करना चाहिए? नहीं जानती। अर्जुन मेरे जीवन के आँगन म चाँद की तरह चमके यही चाहती हूँ तो फिर कुछ तारे भी होगे। मेरी देह को यन्त्र होना पडेगा। मन तो यन्त्र नहीं हो सकता। क्या अर्जुन यह बात नहीं जानते? यदि जानते हे तो क्यो नहीं कुछ कहते। अर्जुन कुछ कहो न। कहो तुम अपनी पत्नी नहीं बाँटोगे। कहो अर्जुन तुम्हारा मौन

मुझे साँस नही लेने दे रहा। साँस घुटने से मरूँगी तो नहीं पर कष्ट होता हे अर्जुन। यन्त्र वनने से पहले एक बार पूछना चाहती हूँ। कहो अर्जुन, कुछ तो कहो। नहीं कहना चाहते तो सुनो उत्तर दो अर्जुन। मुझे तुम्हारे मन की थाह चाहिए।"

रोते-रोते द्रोपदी का भर्राया स्वर ऊँचा हो गया। जैसे उसने आसमान से प्रश्न किया।

क्या इसीलिए स्वयवर मे जीता था? बाँटने के लिए। क्या इतना भी नहीं जानते कि पति की सेज भरी होने पर भी उसमे हमेशा दूसरी स्त्री का स्थान रहता सुना गया हे। पर स्त्री की सेज पर पति के वाद कोई स्थान नहीं रहता। भर जाती हे वो। भर जाती हे सेज भर जाती हे पत्नी। म क्या करूँ अजुन, मुझे बता दो मेरा बल तुम हो। प्रेम ही वल हे, पर यह वल देता तो प्रेमी ही है न।

तुम्हारा उत्तरीय थामे मे केसे चल रही थी। पूर्ण सुहागिन बनकर। एक हो क्षण म वदल गयी थी मेरी दुनिया, जिसकी हर राह तुम तक पहुँचती थी। राह में तुमने मुडकर देखा तो लगा तुम मुझे आँखो मे विठाकर आकाश मे लेकर उड रहे हो।

फिर मुझे धरती पर किसने लाकर पटक दिया अर्जुन।

सच कहो अर्जुन क्या माँ कुन्ती के कहने से ही म बँट रही हूँ या मेरा रूप देखकर तुम्हारे भाई सयम मे नहीं रह सके? नहीं सहन कर सके? सिर्फ तुम्हारे पास सौन्दर्य की यह अतुल सम्पदा रहे। और मेरा मन, उसमे किसी ने नहीं झाँका।

अपने आँसू पोछकर द्रोपदी ने फिर कहा—हाँ स्त्री का सवसे वडा मित्र रूप ही है। सवसे वडा शत्रु भी वही हे। अगर मै रूपवान न होती तो तुम्हारे भाई मुझे वाटने की कल्पना भी न करते।

म क्या करूँ अर्जुन। मुझे बताओ म क्या करूँ? क्या सवकी पत्नी वनने पर भी तुम मुझे वेसे ही प्रेम से देख पाओगे जेसे तुमने मुझे राह में मुडकर देखा था? कर पाओगे इस देह से वसे ही प्रेम जेसे प्रेमी प्रेमिका की देह से करता है? क्या सहवास म तुम्हारे वडे भाइया द्वारा मेरी देह पर छोडे गये चिह्न तुम्हे मुझे प्रेम करने देगे। कर सकोगे मुझे प्रेम?

क्या करूँ? यह एक क्षण मेरे जीवन का निर्णय लेगा। अर्जुन तुम्हारे सामीप्य के लिए यह विवाह करना ही होगा। हा हाँ—कर सकती हूँ म अस्वीकार। कौन मुझे व्याह करने को वाध्य कर सकता है? पर क्या फिर तुम्हें देख पाऊँगी। नहीं न? इसीलिए इस घर मे रहूँगी। सवस व्याह होगा। सवकी पत्नी होऊँगी मे। पर तुम्हारी प्रेमिका रहूँगी अजुन। रहना ही पड़ेगा नहीं तो तुम्हे कहाँ देखूँगी?

हाँ यही निर्णय है मरा। पाँचों पाण्डवा की पत्नी वनूँगी। अजुन की प्रेमिका।

द्रापदी ने राना वन्द किया। आँचल स मुँह पाछा और तनकर खडी हा गयी।

मन का सारा कलुष मिट गया।

'अर्जुन तुम्हे पाये विना यह जगत् कुछ नही है। हाँ, मे तुम्हारी पत्नी कृष्णा तुम्हारे सभी भाइयो से शादी करूँगी। यही शर्त हे तो यही सही। दॉव पर लगने को तेयार है द्रौपदी। भगवान् शकर भी प्रसन्न हो ले। शकर विष को पीते रहे अमृत समझकर, मे अमृत को विष मान लूँगी।'

द्रोपदी की प्रिय परिचारिका और सखी ने भीतर प्रवेश करके द्रोपदी का एक नया रूप देखा। कुछ समझ न पायी। फिर बोली, "क्यों सखी, मुझे भी सग ले चलोगी या नहीं?"

"हाँ, सान्त्वना तुम्हे न ले जाकर म क्या करूँगी? क्या कभी मै तुम्हारे विना रहती हूँ।"

सान्त्वना ने देखा–द्रापदी एक ही स्थान पर देख रही है। उसे भय भी हुआ। लाल आँख आँसुओ की चुगली खा रही थीं। उसने पूछा, "दवी आँख क्यो लाल हैं?"

द्रोपदी ने उसके प्रश्न को सुने बगैर धीरे-से कहा, "सान्त्वना, क्या ब्याह से पहले अर्जुन से एक प्रश्न पूछने का सुयोग मिल सकता हे?"

सान्त्वना सोच मे पड गयी। फिर उसकी आँखो की लौ ऊँची हुई और वह बोली—'देवी, यह कठिन काम सहज हो सकता है। जब मे भोजन के उपरान्त पाण्डवो के हाथ धुलवाऊँगी तब अर्जुन के हाथ धुलवाने आप आ जाना। कपडे के पर्दे का प्रबन्ध करवा लूँगी। प्रश्न पूछने मे कोई कठिनाई न आएगी।"

द्रोपदी का चेहरा सामान्य हुआ। फिर उस पर मुस्कराहट आयी जैसे समाधान मिल गया हो। उसने प्रशसा से सान्त्वना को देखा, फिर प्यार से कहा, "सान्त्वना बलिहारी हे तुम्हारी बुद्धि। पर मुझे यह केसे नहीं सूझा? मेरे पति तो अर्जुन ही है। उनकी आज्ञा का सिरा पकडकर ही तो मे यह ससार सागर पार करूँगी। सान्त्वना तुम मेरी सखी भी हो, सगी भी हो।"

सान्त्वना में साहस का सचार हुआ। उसने कहा, "देवी सुन रही हूँ। आपका ब्याह पॉचो भाइयो से होगा। यह केसा अत्याचार हे।"

द्रोपदी ने अपनी आँख मींचीं। कुछ क्षुब्ध भी हुई फिर क्रोध को पीकर बोली, "उत्तेजित मत हो सान्त्वना। पाण्डव हिमालय के उस प्रदेश से आते हे जहाँ बहुपति प्रथा हे।"

'देवी व्यर्थ के तर्क मत दो। वो प्रथा वहाँ आर्थिक कारणों से दरिद्रता से है। राजकुमारी द्रापदी के लिए ऐसी कोई समस्या नहीं हो सकती।"

द्रौपदी ने फिर यत्न किया।

"सान्त्वना वडे भाई का विवाह न होने पर पहले छोटा भाई विवाह नहीं कर सकता। इसी कारण युधिष्ठिर का विवाह पहले होगा।"

देवी क्या भीम युधिष्ठिर के भाई नहीं हैं। क्या उनका पहले हिडिम्बा से

ब्याह नहीं हो चुका। क्या हिडिम्बा से किसी और भाई का भी ब्याह हुआ? तुम्हें समझ क्यों नहीं आ रहा? इस सामूहिक ब्याह का कारण है तुम्हारा अनिन्द्य सुन्दरी होना—तुम्हारा यह रूप। युधिष्ठिर बड़े विचारवान हैं। उनका अपना मन भी तुम्हारे रूप के मोह में फँस गया है, नहीं तो धर्मराज युधिष्ठिर ऐसा अन्याय होने देते? सिर्फ़ माँ के कहने से तुम भिक्षा नहीं हो जातीं। मेरी सखी, तुम बाँटने की वस्तु नहीं हो।

यह कहकर सान्त्वना रोने लगी। उसे फिर क्रोध हो आया। उसने कहा, "सिर्फ़ एक ब्याह के लोभ के कारण तुम्हें ये पाँच पाण्डव सहने होंगे। यह सहज नहीं है देवी। अभी भी समय है। सोचो। महारानी रो रोकर भगवान् से गुहार कर रही हैं मैं भी दुःखी हूँ। अर्जुन—अर्जुन में क्या लाल जड़े हैं, जो तुम उसके लिए पाँच पुरुषों की पत्नी बनोगी? क्षमा करना देवी, यह बात मेरी समझ से परे है।

"सान्त्वना शान्त हो जा। अपना भविष्य मुझे साफ नज़र आ रहा है। अर्जुन के बिना यह जीवन अधूरा है। अर्जुन के साथ रहने के लिए मुझे इन सबका साथ रहना होगा। यदि मैं इस ब्याह से मना कर दूँ तो अर्जुन को कभी देख न पाऊँगी। जब से होश सँभाला है अर्जुन का नाम सुना है। हमेशा उसके प्रति मन में कुछ कोमल उग आता रहा। आज जब उसने मुझे स्वयंवर में जीत लिया है, मैं उसी की होकर रहूँगी। उसके साथ रहने के लिए सभी पाण्डव सहने होंगे। यही होगा सखी! सान्त्वना मैंने सुना था इसी उम्र में लड़कियों को प्रेम हो जाता है। मुझे भी हो गया है प्रेम। मैं अर्जुन के विछोह में मरूँगी नहीं जियूँगी। अब अन्यथा नहीं हो सकता। पिताजी को मैंने हाँ कह दी है। यह इतना बड़ा देहदान तुम्हारे बिना न कर पाऊँगी। सान्त्वना मुझे तुमसे बल चाहिए निर्बलता नहीं। मेरी अच्छी सान्त्वना।"

"मैंने भी जब से होश सँभाला है तुम्हें ही देखा है। तुम्हारे साथ ही मेरा संसार घूमता है। जो तुम कहो वही करना मेरा धर्म भी है और इच्छा भी। पर एक बात कहे देती हूँ, मैंने अगर कभी ब्याह किया तो प्रेम नहीं करूँगी। प्रेम में यदि तिरस्कार भी है तो मुझे ऐसा प्रेम नहीं चाहिए।"

द्रौपदी प्रातः से घिरी बदली की तरह घुमड़ रही थी। सान्त्वना की यह बात सुनकर हँस पड़ी जैसे सूरज उग आया हो जैसे किसी गरीब के घर में कोई छप्पर फाड़कर धन गिरा गया हो जैसे कोई बच्चा नींद से जागा हो।

सान्त्वना को थोड़ी खीझ भी हुई। कैसे हँस सकती है राजकुमारी? इतनी विकट घड़ी है। महाराज जब पुत्री के कक्ष से निकलकर आये थे तब कैसे अनमने हो रहे थे। महारानी भी बड़ी दुखी है। और जिसके लिए ये काले बादल घुमड़ रहे हैं वो धूप की तरह खिली जा रही है। सान्त्वना ने देखा राजकुमारी उसी की तरफ देख रही थी। उसने कहा 'राजकुमारी कैसे हँस सकती हो तुम मैं तो सोच भी नहीं सकती। एक पुरुष के लिए तुम कितना अत्याचार सहोगी। क्या प्रेम में ऐसा

ही होता है?"

राजकुमारी ने गम्भीर होकर कहा, "यदि ऐसा ही है तो भी उसे प्रसन्नता से क्यो न लूँ? यही मेरी नियति है सान्त्वना। मुझे अपना भविष्य साफ नजर आ रहा है। कष्ट सिर्फ इस बात का है कि इतने वरसो से सँजोया यह यौवन, यह कामार्य यह चाव मुझे पहले युधिष्ठिर को अर्पण करना पडेगा। सान्त्वना, मे अपना सब अछूता, निर्मल, सुन्दर, कुँआरा अर्जुन को ही देना चाहती हूँ। सान्त्वना, कभी-कभी राजकन्या किसी भिखारी से भी तुच्छ हो जाती है। मेरी दुविधा का अन्त नही है। जिसका छोर पकडा है जिसने विकट लक्ष्यभेद कर मुझे जीता है वह मेरा अर्जुन कहाँ है सान्त्वना। अपनी पहली प्रेमभरी दृष्टि तो मने उसी को अर्पित की।"

सान्त्वना ने सोचा—राजकुमारी से कुछ भी कहने का लाभ नहीं है। उसने जाते-जाते कहा "देवी भोजन के उपरान्त हाथ धोनेवाले स्थान पर पर्दे लगवाकर सब प्रबन्ध हो जाएगा। अर्जुन के हाथ तुम धुलवाना आर जो पूछना हो पूछ लेना। म जाती हूँ। पाकशाला म भी देखना होगा।"

अर्जुन से बात करने का जब पूरा प्रबन्ध हो गया तब द्रौपदी ने सोचा—कही अर्जुन अपमानित तो न होगा। मन ही-मन मे जानती हूँ, इस मामले मे वह भी असहाय है। माँ और गुरुजनो की उपेक्षा वह कभी न करेगा। फिर भी मेरे मन मे जो दावानल जल रहा है वह उसी के लिए है, यह तो उसे मालूम होना ही चाहिए। मे इतना कठिन उसी के लिए करने को तत्पर हुई हूँ।

सान्त्वना न एकदम प्रवेश करते हुए कहा "दवी, मुझे भी तुमने दुविधा म फँसा दिया है और कुछ सोच ही नहीं सकती। पर्दे लगवाकर ऐसा प्रबन्ध कर आयी हूँ कि किसी को कानाकान खबर न होगी कि तुमने अर्जुन से बात की ह। पाकशाला का प्रबन्ध भी जाँच आयी हूँ। अर्जुन अपने भाइयो के साथ तैयार होकर अस्त्रशाला देखने गये हे। देवी तुम भी किसके लिए भावुक हो रही हो। क्या यह सूक्ष्म बात अर्जुन को बिना कहे समझ मे आएगी कि तुमने पाँच पाण्डवो की पत्नी होना सिर्फ उसके सान्निध्य क लिए स्वीकारा है। मे अन्तिम बार कहूँगी, कृष्णा, मेरी बहन मेरी सखी—तुमसे प्रिय मेरा कोई नहीं है यह सम्बन्ध नकार दो। एक पति को झेलना कठिन होता है। तुम पाँच पतियो को केसे झेलोगी।"

"मेरी सान्त्वना जब कभी इस जन्म मे तुम्हे किसी से प्रेम होगा तब म तुमसे पूछ लूँगी। तुम्हारे प्रश्न का उत्तर भी तब ही दे सकूँगी। अभी तुम्हारी समझ मे न आएगा। अच्छा बताओ, भोजन के लिए कब जाना होगा?"

"भगवान् मेरी सखी का शुभ करना। इसकी मति मारी गयी हे।" सान्त्वना ने यह कहा आर चली गयी।

युधिष्ठिर आर भीम भोजनोपरान्त हाथ धोकर बाहर निकले तो अर्जुन न हाथ

आगे कर दिय। सान्त्वना ने द्रौपदी का इशारा किया। द्रापदी अर्जुन क हाथ धुला रही थी। अर्जुन जैस वहाँ न था। हाथ धाकर उसने हाथ पाछन के लिए हाथ बढ़ाया तो द्रौपदी ने अपने आँचल का छोर उसके हाथ म थमा दिया। अर्जुन ने आकुल-व्याकुल आँखा से द्रौपदी को दखा तो धक से रह गया। दाना के हाथों में एक ही आँचल काँप रहा था। द्रापदी ने अपना सारा प्रश्न एक ही वार कर दिया, "मुझे वाँटने के लिए जीता था क्या?" अर्जुन के हाथ से आँचल का छोर छूट गया।

उसने कहा "कल्याणी, मेरे वश में कुछ नहीं है। म यहाँ असहाय हूँ। माँ की आज्ञा और गुरुजनो की सम्मति ने मेरे हाथ वाँध दिये है। ऐसा क्षण कभी भी मेर जीवन मे नहीं आया। हाँ यदि तुम चाहो तो मना कर सकती हो।" द्रापदी उसे टकटकी वाँधकर देख रही थी। उसने सोचा, यही क्षण है जव वता दूँ नहीं ता फिर वताने का समय होगा या नहीं कौन जाने?

"मना तो कभी भी कर सकती हूँ पर मना करके क्या तुम्ह फिर देख पाऊँगी? मैने अपने इस जीवन मे तुम्हारे अतिरिक्त कभी किसी पुरुष के वारे में नहीं सोचा।

अजुन ने कहा "तुम्हारा कल्याण हो देवी।"

यह कहकर वह गीले हाथो के साथ ही वाहर निकल गया। द्रौपदी उसक साथ लिपटी हवा को जाते देख भीतर चली गयी। नकुल आर फिर सहदेव हाथ धुलवाने आय ता सान्त्वना खडी थी।

द्रोपदी अपने कक्ष म जाकर शय्या पर लुढक गयी। अव उसे अर्जुन के असहाय होने का दु ख हो रहा था। उसने मन ही-मन सोचा—द्रोपदी भूल जा तन को, याद रख मन को। मन जो अव अपने वश म नहीं रहा, तन की क्या कहूँ?

एक आह भरकर द्रौपदी ने कहा, "कितना घमण्ड था इस रूप पर? सोचती थी—सारी उम्र पति को रिझा सकूँगी। कोन होगा द्रौपदी-जैसा? इस चोराहे पर खडी होगी द्रोपदी क्या विधाता जानते थे? सान्त्वना सच कहती है इसी रूप के कारण सव हुआ है। सवकी मोहित आँख इसी रूप पर पडी। अर्जुन अव तो जान जाएगा। मेरा यह सोन्दर्य सिर्फ उसके लिए है मेरा मन दास हो गया हे।" द्रौपदी करवट वदलने लगी। उसे खयाल आया—ये गणिकाएँ जिन्हे सब घृणा करते हे, ये कैसे-कैसे घृणित पुरुषो को अपनी देह सोपती होगी। पता नहीं किस हृदय के कपाट वन्द करके किस मस्तिष्क का द्वार खुला रखती होगी। केसे जहाँ मन न माने, देह सोपी जा सकती हे। ओह द्रोपदी! भाग्य ने तुम्हे कहाँ ले जाकर पटका है? कितने कुलीन घराना की स्त्रियाँ गणिकाओ से पति को रिझाने के नुस्खे पूछती हे। तव स्त्री को गणिका से घृणा नहीं होती। पति को रिझाना ही जेसे स्त्री का एकमात्र काम हे। अर्जुन अव तो जान गये होगे। में क्यो यह कठिन काम कर रही हूँ? क्यो प्रेम हुआ अर्जुन से? क्या अर्जुन भी मुझे प्रेम कर पाएँगे? पत्नी तो मे उन्ही की हूँ। हृदय

पर कर्तव्यो की शिला रखकर समय के प्रवाह मे बहने को प्रस्तुत हूँ।

शुभ लग्न मे पाण्डवो के पुरोहित धौम्य ने आकर अपना आसन सँभाला। सजी हुई वेदी वन्दनवारो से झिलमिला रही थी। सबसे पहले पण्डितजी ने मन्त्रोच्चार के बीच युधिष्ठिर और द्रौपदी का पाणिग्रहण करवाया। फिर अन्य भाइयो से विवाह हुआ। अर्जुन भाँवरे लेते समय माना नींद मे चल रहे हो। द्रौपदी ने सोचा सब ही तो मिल गया।

कुन्ती ने पुत्रवधू को सहस्रो आशीर्वाद देकर कहा, "भगवान् की कृपा से मेरे पुत्रो की महारानी बनकर पूरी पृथ्वी पर अपने पुत्रा सहित राज्य करो।"

ब्याह के पश्चात् अर्जुन एकदम गुमसुम होकर पाँचो भाइयों में ऐसे बेठे रहते, जैसे वहाँ हो ही नहीं। कर्तव्य की बलिवेदी पर जैसे उनके सारे चाव चढ चुके थे। द्रौपदी जब भी उपस्थित होती अर्जुन ओर मोन हो जाते। द्रोपदी मन ही-मन हँसती आर अर्जुन का देख देखकर प्रसन्न होती।

इतनी बडी घटना घट जाती आर भला नारदजी कैसे नारायण को लेकर नहीं आते। नारदजी ने आकर पाण्डवो को न सिर्फ आशीर्वाद ही दिया बल्कि उन्होने कहा "स्त्री को लेकर जैसे तिलोत्तमा को लेकर सुन्द उपसुन्द भाइयो का आपस मे लडना ओर मारा जाना हुआ, उसे देखते हुए पाण्डवो को द्रोपदी के विषय म कुछ नियम निर्धारित करने चाहिए।" सभी पाण्डवा ने नारद मुनि की आज्ञानुसार हर पाण्डव के घर द्रौपदी का एक-एक वर्ष रहना तय पाया। एक नियम ओर रखा। यदि एकान्त मे किसी भाई को दूसरा कभी द्रोपदी के सग देख ले तो वो बारह बरस तक वनवास मे रहकर ब्रह्मचर्य का पालन करे। ऐसे नियम निर्धारित करके नारदजी प्रसन्न होकर 'नारायण नारायण ' कहते कहीं आर चले गये।

अन्यमनस्क से अर्जुन को अब एकान्त अच्छा लगने लगा। अपना महल अपना कक्ष, लेकिन अपनी शय्या पर उसकी नींद उड गयी थी।

आज भी ऐसा ही हुआ। नींद न आने पर अर्जुन बाहर वाटिका मे पडी एक प्राकृतिक शिला पर जा बेठे। यह उनकी ससुराल की वाटिका थी। हर प्रकार की सुख-सुविधा के साथ एकान्त भी उपलब्ध था। रात ठिठकी हुई थी। आसमान उसे

घूर रहा था। अर्जुन वातावरण में रमने लगा। उसने देखा, युधिष्ठिर के महल में हल्की पीली सी रोशनी काँपती हुई तालाब में उतर रही थी। अर्जुन ने एक ककड़ी तालाब में डाली। उसमें भँवर पड़ने लगे। भँवरों में एक शय्या पर द्रौपदी के संग युधिष्ठिर भी थे। अर्जुन ने आँखें बन्द कर लीं।

बड़े भाई के साथ उनकी पत्नी को देखना—यह पाप है। उसके बारे में सोचना और भी बड़ा पाप है। नारदजी इसीलिए हम सबको नियमों में बाँध गये हैं। यह द्रौपदी जो सिर्फ मेरी कृष्णा होती—मेरी पत्नी, जिसे मैंने स्वयंवर में पाया पता नहीं मेरे बारे में क्या-क्या सोचती होगी। नहीं कल्याणी, मैं तुम्हारे बारे में नहीं सोचूँगा। हम सब बँध गये हैं—नियमों में समय में बाँटने में। हर किसी का अपना क्षण है। मैं तुम्हारे बारे में नहीं सोचूँगा। तुम्हारे बारे में सोचते ही उस दारुण त्रासदी का आभास हो जाता है जो मुझे सारी उम्र भोगनी है।

धीरे धीरे अर्जुन उठकर अपने महल में आ गया। मन ही-मन सोचा—भगवान् तुमने मुझे इतना सुख दिया। इतना बड़ा धनुर्धर बनाया, मगर संग में मुझे हर समय कुरेदनेवाली यह त्रासदी भी दे दी। पूरी आयु इसे उँगली से लगाकर चलाना होगा। अभी तो राह ही पकड़ी है। अर्जुन ने अपने दाना हाथ सिर के पीछे ले जाकर तकिया सा बनाया। आँखें बन्द कर लीं। अब उसे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था।

युधिष्ठिर ने अपने कक्ष में करवट बदली। उसे लगा—द्रौपदी सामने दीवार की तरफ आँखें खोले कुछ देख रही है। हल्की सी रोशनी में उन्हें भी कुछ हिलता-सा लगा। उन्होंने आँखें मलकर देखा। महल के बाहर जलाशय की हिलती परछाई दीवार पर मचल रही थी। युधिष्ठिर ने अपना हाथ द्रौपदी की तरफ बढ़ाया। हाथ सामने दीवार पर भी दिखाई देने लगा। हाथ खींचकर युधिष्ठिर ने बड़े स्नेह से कहा, "देवी नींद क्यों नहीं आ रही। आप तो अपने ही महल में हैं।"

द्रौपदी ने अलसाये स्वर में कहा "महल तो अपना ही है। पर एकदम नया। लगता है इस महल की दीवारें भी बदल गयी हैं। कुछ अपना नहीं लगता।"

'सो जाइए देवी। समाचार है कल ही महात्मा विदुर हमें लेने के लिए आ जाएँगे। महाराजा धृतराष्ट्र की आज्ञा से वो हमें लिवा ले जाएँगे। फिर आप अपने राज्य में महारानी के पद पर सुशोभित होंगी। आपके शुभ आगमन से हम भी अपने घर जाएँगे।"

द्रौपदी ने कहा "आर्य यह सत्य है। अपने मायके में मुझे ब्याह हो जाने का आभास नहीं हो रहा। वहाँ जाने पर ही ससुराल का अर्थ समझ पाऊँगी।"

युधिष्ठिर ने प्रसन्न होकर कहा "आपका स्वागत करने के लिए सारा हस्तिनापुर उमड़ आएगा। इतनी सुन्दर गुणवान और प्रतापी बहू हस्तिनापुर में पहली बार आ रही है।"

द्रौपदी को संकोच हुआ। उसने कहा 'धन्यवाद आर्य। यदि कभी मैं अपने

कर्तव्य का पालन ठीक से न कर पाऊँ तो मुझे गुरु की तरह सीख दीजिएगा। मै अपने-आपको धन्य समझूँगी। स्त्री का धर्म सभी को खुश रखना है। उसी यत्न में यदि सफल हुई तो भगवान् का बडा आशीर्वाद मानूँगी।"

युधिष्ठिर ने कहा, "देवी ऐसा ही होगा।"

दीवार पर हिलती जलाशय की परछाई जेसे तडप रही थी। उस पर से उडता हुआ एक पछी चीत्कार करता हुआ निकला। द्रौपदी ने सोचा क्या इसका साथी शाम को घर नहीं लौटा या यही घर का रास्ता भूल गया हे।

युधिष्ठिर सो गये है। द्रौपदी ने देखा—जैसे कोई देवता स्वप्न देख रहा हो। युधिष्ठिर-जेसे पुरुष इस धरती पर कितने हे?

मुझे भी सो जाना चाहिए? क्या अर्जुन सो पाया होगा? आँख वन्द करने पर भी वही क्यो दिखाई देता हे? क्या यह पाप ह?

द्रोपदी को नींद आ गयी। नींद के साथ ही सपना भी तिरता चला आया। कितना वडा जलाशय, जेसे समुद्र का एक कोना हो। उसके किनारे वशी डाले धैर्य से जो वैठा ह वही अर्जुन हे। वही होगा। और किस व्यक्ति मे इतना धेर्य हे।

पता नहीं कव तक सोती रही द्रोपदी। कव युधिष्ठिर चले गये। कव सूर्य ने धरती की चोखट पर माथा टेका। कव जग गयी द्रोपदी। सामने सान्त्वना खडी थी।

"उठो सखी, सूर्य घर मे पदार्पण कर रहा हे। तुम्हारी आँख अभी भी गुडहल के फूल की तरह लाल ह! क्या आर्यपुत्र ने रात भर सोने नहीं दिया।"

दुप्टता से मुस्करायी सान्त्वना। द्रोपदी शर्म से लाल न हुई। उसने उठते हुए अँगडाई ली ओर कहा "व्याह हो जाने के वाद भी मायके मे प्रात उठना कैसा तो लग रहा है। आज दिन कभी भी चढे, क्या अन्तर पडता हे।"

सान्त्वना बोली "क्यो सखी, ऐसे क्यो कह रही हो?"

द्रोपदी ने कहा "ओर आर्य युधिष्ठिर, उनके जैसे व्यक्ति धरती पर क्या और भी हे?" व्याह के वाद ससुराल मे प्रात हो तभी व्याह लगता है।"

"तो अर्जुन को भूल गयीं।"

"अपने-आप को कोई भूलता नहीं हे सान्त्वना। जेसी मे हूँ वेसा ही अर्जुन है। वाकी सव उसके कारण हे। पर तुम यह नहीं समझोगी। चलो स्नानागार मे मेरे वस्त्र चुन दो।"

सान्त्वना ने कहा, "सखि, पाण्डव वडे प्रसन्न हे। आचार्य द्रोण आर भीष्म पितामह की आज्ञानुसार महात्मा विदुर आप सवको लेने आ रहे हे। महारानी कुन्ती कह रही थीं, मेरी कृष्णा के आने से तो हमारा भाग्य ही चमक उठा है।"

सुना तो मैने भी है। पर मन में एक सन्देह भी उठ रहा है। वहाँ जाना उचित होगा या अनुचित। यह निर्णय कर पाना कठिन है।"

"महाराज धृतराष्ट्र का निमन्त्रण अस्वीकार भी तो नहीं किया जा सकता।"

द्रौपदी मानो उसे सुन ही नहीं रही थी। उसने जैसे अपने-आपसे प्रश्न किया। "सान्त्वना, क्या रात भर जलाशय का जल काँपता रहा?"

"देवी, आप क्या कह रही है। यदि सूखे पत्ते जल में गिरकर हवा को जरा दग ता काँपेगा नहीं।"

"तेरी बुद्धि की बलिहारी है। सान्त्वना सुनो, मैं आज हरे रग क वस्त्र पहनूँगी।"

"जो आज्ञा देवी।"

प्रात अर्जुन को महल मे घुसत भीम न देख लिया। बुद्धि तो उसकी बाँहों के बल मे रहती है। उसने छोटा भाई मानकर बडे स्नेह से कहा, "अर्जुन, प्रातःकालीन टहलना बडा लाभकारी है। मै अखाड़े मे ज़रा जोर लगाने गया था। मैने सोचा देखूँ इनके पहलवान कैसे है? मुझे देखकर सबने बडा आदर किया।"

फिर भीम हँसे, 'अर्जुन मै भूल ही गया था। मैं ससुराल में हूँ। सभी पहलवान मेरी मालिश करने को उत्सुक थ। इतन बरसों बाद आज आनन्द आ गया। देखा तो बाँहो की मछलियाँ चमक उठी है। कल फिर जाऊँगा। पर क्या तुम बहुत दूर निकल गये थे। मैने तो तुम्हे कहीं नहीं देखा।"

"हाँ भीम बहुत दूर निकल गया था। बडा सुन्दर प्रदेश है। प्रकृति की सम्पदा का भण्डार खुला पडा है। प्रकृति हमेशा लुटाती है।"

"अर्जुन, हस्तिनापुर भी कितना सुन्दर है। उसके वन, अखाडा और मल्लयुद्ध जस स्वप्न ही हो गये है।"

'आपके स्वप्न सच होन जा रह ह। अभी सुनकर आ रहा हूँ महात्मा विदुर हमे लेने आ रहे है। महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा है।"

भीम ने कहा, "तो क्या कल अखाडे में जाना न होगा? फिर कहीं हस्तिनापुर मे कोई बखेडा खडा हो गया ता इस बात की चिन्ता नहीं है भैया को? अब तो द्रौपदी भी हमारे साथ है।"

अर्जुन न कहा "यह निर्णय भैया पर छोड दो। उनकी आज्ञा जहाँ होगी चल देंगे।"

"हाँ, ठीक है। यही ठीक है।"

अर्जुन न मन मे सोचा, जैसे यह अन्यथा कर पाएगा मेरा भोला भाई'

अर्जुन की आँखे पूरी रात जागने स कितनी लाल हा गयी ह। भीम ने यह लक्ष्य नहीं किया। उसने सोचा नहा धोकर आये तो कुछ अल्पाहार हो जाए।

द्रौपदी तैयार होकर सास कुन्ती के कक्ष मे चरणस्पर्श करने गयी। कुन्ती ने द्रोपदी की चिबुक उठाकर उसे छाती से लगा लिया।

द्रौपदी का चेहरा अति सुन्दर था। उसका चेहरा किसी नयी वधू का चेहरा नहीं किसी कन्या का ही दिखाई पडता था। कुन्ती का स्मरण हुआ। दवर्षि नारद

ने द्रापदी को कोई ऐसी योगिक क्रिया वतायी थी जिसके आचरण से वह प्रतिदिन अक्षत कन्या हो जाती थी। कुन्ती वडे स्नेह ओर लाड से बहू को निहार रही थी। उसने उसे पास विठात हुए कहा, "कृष्णा, लगता है तुम्हें पाते ही हमारी भटकन समाप्त हो गयी हे। सुनती हूँ महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा से महात्मा विदुर हमे आज ही हस्तिनापुर ले जाने के लिए आ रहे हे। तुम्हारा आना हम सवके लिए वडा शुभ है। अगर वे अपने मन का कलुप मिटाकर हमें ले जाएगं ता हम भी अपने मन मे कोई मेल न रखेगे। तुम्हारा आना हमारे लिए नया सवेरा लेकर आया हे। तुम सुखी रहो। मेरे सभी पुत्र तुमसे प्रसन्न रहे। सदा सुहागिन रहो—यही मेरा आशीर्वाद हे।"

महात्मा विदुर का रथ जव राजा द्रुपद की राजधानी मे प्रविष्ट हुआ तव लोगो ने जान लिया कि अव हमारी राजकुमारी ससुराल चली जाएगी।

द्रुपद की राजधानी म महात्मा विदुर का समुचित आदर हुआ। द्रुपद अपने महल मे उन्हे लिवा ले गये। सभी पाण्डवो के मुँह अपने पितातुल्य चाचा को देखकर चमक रह थ। महात्मा विदुर उन्ह देखकर अति प्रसन्न हुए। विदुर पाण्डवो आर द्रोपदी के लिए तथा राजा द्रुपद के लिए वहुत-से उपहार लेकर आये थे। उन्होने द्रुपद से कहा, 'महाराज धृतराष्ट्र ने अपने पुत्रो और मन्त्रिमण्डल के सहित कुशलमगल पूछा हे। अव आप पाण्डवो को हस्तिनापुर भेजने की तेयारी कीजिए। वहाँ नववधू द्रोपदी को देखने के लिए सभी लालायित है।"

द्रोपदी ने सुना तो उसे एकदम आभास हुआ—विदा की वेला द्वार खटखटा रही हे। कितनी शीघ्रता से भाग रहा हे समय, पीछे घिसट रही हूँ म। उसने अपने कक्ष म आकर अपनी प्यारी मेना को सोने के पिजरे से निकाल उसका सिर चूमा और द्वार से आकाश मे उडा दिया। मैना उडने की अभ्यस्त न थी। सामने पीपल की टहनी पर जा वैठी। वही से चिल्लाने लगी—'कृष्णा, कृष्णा, कृष्णा जाओ, जाओ'। द्रोपदी की आँखे भर आयी। उसने मेना को रोहिणी नाम दिया था।

"जाओ रोहिणी, तुम स्वतन्त्र हो। पिजरे म तो अव मै वन्द हो जाऊँगी। फिर तुम्हारी ही तरह उडना भूल जाऊँगी। अगर मेरे पिजरे का द्वार खुला भी रहा तो भी उसमे पाँच ताले लटके होगे ओर म द्वार तक भी न जा पाऊँ कोन जाने' द्वार पाँच भी हुए तो भी पाँच द्वारो पर मेरे पॉच पति होगे। द्रौपदी विध गयी। गाण्डीव के तीरा से।"

द्रोपदी पिजरे से सिर जोड़े हुलक हुलककर रोने लगी। पता नहीं कितनी देर रोती रही। मैना अव सान्त्वना को पुकारकर गाली दे रही थी। यह गालियाँ सान्त्वना ने ही उस सिखायी थी। सुनकर भी द्रोपदी की हँसी न निकल सकी। उसे अपने कन्धे पर एक स्नेहिल परिचित हाथ का आभास हुआ आर स्वर सुनाई दिया।

"राहिणी की गाली भी नही सुन पा रही हो सखी' इस किस दाप से मुक्त

किया? मेरी तरह अब यह भी तुम्हारी डाल के अलावा और कहीं नहीं बैठेगी।

दोना सखियाँ गले लगकर रोने लगीं। सान्त्वना ने अलग होकर रोहिणी को पुकारा, "आओ मुई, अपने पिंजरे म आ जाओ।" रोहिणी डाल पर अपने पाँव इधर-उधर करके उड़ी। फिर पिंजरे मे लौट आयी। सान्त्वना ने द्रौपदी से कहा, "सखी, म भी आज ही आपके साथ जाऊँगी। महारानी की यही आज्ञा ह।"

द्रोपदी ने कातर होकर कहा, "सान्त्वना कहाँ ह, महारानी कहाँ ह, मेरी माँ—मेरी माँ।" कहकर द्रोपदी फिर सुबक उठी।

महारानी ने भीतर घुसते ही यह शब्द सुने और अपनी बाँहे पसारकर बेटी को सीने स लगा लिया। आसमान की चारों दिशाएँ माँ-बेटी के बिछोह के क्षणो म काँप उठीं।

महारानी ने सयत होकर कहा "मे धन्य हो गयी बेटी' सभी तुम्हारा गुणगान कर रहे ह। आज मेरी बेटी ससुराल जाएगी। बेटी का असली घर तो वही होता ह।"

द्रापदी ने पूछा 'मॉ म फिर यहॉ कब आऊँगी।"

"जब चाहो आना। तुम्हारा महल इसी तरह रहेगा। सदा तुम्हारी प्रतीक्षा में तुम्हारी मॉ की तरह।"

मॉ म केसे इतनी लम्बी प्रतीक्षा करूँगी, बडा कठिन है?"

"वसे ही करना जेसे बेटियाँ करती ह। सास कुन्ती ओर गान्धारी में कोई अन्तर न करना। महाराज धृतराष्ट्र को पितातुल्य जानना। अपने पतियों का प्रसन्न रखना।"

द्रौपदी बोली 'मॉ अच्छी पत्नी बनना बडा कठिन होता होगा न' मुझे आशीर्वाद दो माँ तुम्हे कभी कोइ शिकायत न मिले।"

"बेटी सुखी रखना सुखी रहोगी।"

द्रौपदी न भराई आवाज म कहा "माँ मुझे शीघ्र बुलवा भेजना। नये परिवेश मे जुड़ने के लिए मुझ पुराने तन्तुओ की आवश्यकता होगी। बीच-बीच म आती रहूँगी तो मन स्थिर रहेगा।"

महारानी ने द्रौपदी का एक लम्बा हार अच्छी तरह रखते हुए कहा "मे जानती हूँ बेटी इसीलिए सान्त्वना को तुम्हारे साथ ही भेज रही हूँ। युधिष्ठिर से सलाह करके इसका ब्याह वहीं करवा दोगी तो इसका मन भी यहा पर कम अटकेगा।"

द्रौपदी ने चमककर माँ को देखा फिर पूछा "मॉ क्या ब्याह करने भर से मन कहीं अटकता नहीं ह। इसका ता एक ही पति होगा। मेरे तो पॉच होगे। क्या मेरा मन कभी घर आने को न करेगा?"

"घर तो अब वही होगा बेटी।" महारानी न ठण्डी आह भरकर कहा "रही पाँच पतियो की बात वो तो सुन रही हूँ। पिछले जन्म म तुमन ही शकरजी से पाँच

बार पति माँग लिया था। सो उन्होंने पाँच पति दिये। पति दो, पति दो, तुम्हीं ने कहा था बेटी।"

"माँ, क्या शकरजी एक ही पति मे पाँच गुण नहीं देख सकते थे? क्या सिर्फ अर्जुन म ही ये पाँच गुण नहीं है। मैने तो सिर्फ अर्जुन की पत्नी होना चाहा था, जिसने मुझे स्वयवर मे जीता ह।"

महारानी ने कहा, "बेटी सिर्फ अर्जुन म सभी गुण देखना अब पाप है। तुम्हे अपने पाँचो पतियो में गुण-ही-गुण नजर आने चाहिए।"

"हाँ माँ—यही करूँगी मे पर क्या पाँच पतियो से ब्याह होना पाप न हुआ? मुझे तो भय लग रहा ह माँ! तुम तो अवश्य जानती होगी। क्या एक ही पति काफी नहीं होता?"

महारानी ने दूसरी तरफ मुँह कर लिया। वह अपने आसू द्रोपदी को न दिखाना चाहती थी। उन्होने सयत होकर कहा "बेटी, पुरुष कम म होनेवाली बाते रनिवास म सिर्फ सूचना की तरह आती ह। कोई उनकी सम्मति की अपेक्षा नहीं करता। महाराज ने जब यह सूचना मुझे दी, तब मने भी कडा विरोध किया था। पर तुम्हारे पिता ने जब सारी बात बतायी, तब मेने भी देव की इच्छा के आगे अपनी गर्दन झुका दी।"

द्रोपदी ने अपनी अलमारी मे झाँकते हुए माँ से पूछा, "देव कहाँ ह माँ? म उनसे पूछना चाहती हूँ—क्या वे कभी किसी की पत्नी बने ह? बडा भय लग रहा ह माँ। युधिष्ठिर यदि मेरे पति ह तो उनके अनुजो की पत्नी केसे बनूँगी माँ! मेरे लिए देवर जेठ न रहे पति ही पति हो गये। आज तक जो सब सुना था वो क्या झूठ था माँ? जो मेरे पति हे वो जेठ भी ह ओर देवर भी। यह केसी भूल भुलेया होगी माँ! इस भूल-भुलेया म गुम हा जाने के लिए मुझे किसने छोड दिया। क्या यहाँ से कभी कोई राह भी निकल पाएगी?"

माँ चुप रही।

"म जानती हूँ माँ। महर्षि व्यास की मुहर के ऊपर अब कोई प्रश्न नहीं उठाएगा। पर माँ क्या भगवान् शकर अपनी पार्वती किसी से बाँट सकते ह? क्या पत्नी भी बाँटने की वस्तु हे माँ? सीताजी ने तो सिर्फ अग्निपरीक्षा दी थी। मुझे तो निरन्तर अग्नि ही मे रहना पडेगा। तभी तो कह रही हूँ माँ मुझे बुलाती रहा करना ताकि अग्नि के ताप के बीच ठण्डी बयार भी सुख देती रहे।"

"तुम्हारा कष्ट म समझती हूँ, पर विवश हूँ बेटी। धर्मराज युधिष्ठिर से अधिक पाप पुण्य कोई नहीं जानता।"

"माँ, तेरी बेटी इतनी रूपवती न होती तो शायद यह स्थिति न होती। इस रूप ने ही सबको लुभा लिया। पर जिसने मुझे लुभाया उसके लिए म पूरा जीवन अग्नि ताप सकती हूँ। यह कहना कि पहले बडे भाइ का विवाह होना चाहिए—उचित

है पर क्या पहले भीम का हिडिम्बा से विवाह नहीं हुआ? फिर अर्जुन का ब्याह द्रौपदी से क्या नहीं हो सकता? मैं जानती हूँ माँ, स्त्री का रूप बड़े-बड़े धर्मात्माओं को अपने विवेक से गिरा देता है। मैं इतनी रूपवान न होती तो शायद एक पति का सुख पाती। उससे प्रेम करती। उसके पुत्रों को जन्म देती। पर मैं तो उसे इसमें धँसती जा रही हूँ। लगता है प्रेम करना मेरे लिए पाप है। पत्नी को तो अवधि में बाँधा जा सकता है पर प्रेम को नहीं। क्या अर्जुन के बाद मैं किसी और पुरुष को प्रेम कर सकूँगी? और अब क्या अर्जुन को भी कर पाऊँगी? मैं तो विद्रोह भी नहीं कर सकती माँ। विद्रोह करने पर कहाँ देख पाऊँगी अर्जुन को।"

महारानी अपनी विवशता पर झुँझला पड़ीं। अपनी अनिन्द्य सुन्दरी पुत्री के लिए क्या-क्या सपने देखे थे—सभी चूर हो गये। उसने अपने मन पर पत्थर रखकर कहा "बेटी, स्त्री हर युग में विवश रही है। इसी तरह चलते रहेंगे—युग-युगान्तर, उसके साथ घिसटती रहेगी स्त्री।"

द्रौपदी तुरन्त बोल उठी, "नहीं माँ हमेशा ऐसा नहीं होगा। कभी-न-कभी स्त्री को मालूम हो जाएगा कि उसका शोषण हो रहा है। और फिर वह इससे निपटकर ही दम लेगी।"

"बेटी स्त्री के पैरों में कई बेड़ियाँ होती हैं। सबसे बड़ी प्रेम की बेड़ी उसके बाद बच्चों की घुंघराली बेड़ी है—जिससे वह स्वयं ही मुक्त होना नहीं चाहती। अपनी सन्तति को गले लगाने के बाद स्त्री का जीवन तृप्त हो जाता है। उसे फिर किसी से कोई शिकायत नहीं रहती।"

'मा स्त्री कभी-न-कभी जरूर विद्रोह करेगी। इसी आशा में मैं अग्नि में तपने को प्रस्तुत हुई हूँ।"

"अग्नि क्यों कहती हो बेटी स्त्री होकर पैदा होना बड़े भाग्य की बात है।

हाँ माँ मैं स्त्री होऊँगी पाँच पतियों की। सब अपनी-अपनी अवधि में मुझे बहुत प्रेम करेंगे। पर क्या एक ही देह भोगते पाँच भाइयों को मैं भी प्रेम कर पाऊँगी? यह मुझसे न होगा मा! ऐसा करने को कभी न कहना।"

"बेटी प्रेम से भी ऊँचा है कर्तव्य। तुझे कर्तव्य से गिरता न देखूँ, न सुनूँ।

द्रौपदी ने आतुर होकर कहा माँ अपनी बेटी को एक बार भींचकर गले से लगा लो। इसके बाद गले लगाने पर शायद ही तुम्हें तुम्हारी बेटी मिले। हाँ विश्वास करो कर्तव्य अवश्य मिलेगा।"

मेरा हृदय क्यों नहीं फट जाता बेटी मैं किस हृदय से तुम्हें विदा करूँगी। हमेशा इसी रूप में तुम याद आओगी कृष्णा।"

चिन्ता न करो माँ मैंने मन ही मन यन्त्र की तरह रहना सीख लिया है। जब अर्जुन ने ही विरोध न किया तो मैं क्या कर सकती हूँ? भ्रातृयुद्ध की आशंका से तुम्हारी बेटी के टुकड़े हुए हैं माँ क्या यह नहीं समझ पा रही हो। तुम्हारी यह बेटी

अब सिर्फ भिक्षा है माँ, जो बारी बारी से पाँच पाण्डवा की झोली में पडेगी। मे भिक्षा हुई तो ये धनुर्धर भी भिखारी ही हुए। बराबर का मामला ह, न काइ कम, न अधिक। रोती क्यो हो माँ, ओर कोई विकल्प नहीं हे। मे बँटने के लिए प्रस्तुत हूँ। माँ, मे जानती हूँ द्रोपदी का नाम कभी भी सम्मान से नहीं लिया जाएगा। सिर्फ बहुपति स्त्री ही द्रौपदी कहलाएगी। कोई कुलीन पतिव्रता स्त्री को कभी द्रापदी न कहेगा। मुझे पतिव्रता मत कहना मॉ। पतिव्रता के पाँच पति नहीं होते।'

महारानी ने अपने आँसू बहने दिये ओर रुआँसे स्वर मे कहा, "बेटी जो भी हो गया, अब वही अटल हे। तुझे सीख देना मेरा धर्म हे। कभी एक पति की बात दूसरे को न कहना। अपने मन मे पाँच राज्य बनाना। उनम से किसी एक राज्य का समाचार दूसरे राज्य म न जाए। यही तेरा धर्म हे पुत्री। यदि पति कभी आर ब्याह करे तो उनकी पत्नियो से बहना जेसा व्यवहार करना बेटी।"

"माँ, क्या द्रौपदी को भोगने के पश्चात् भी वे ओर ब्याह करके वैसा ही सुख पा सकेगे? सुना हे भिक्षा का भोजन बडा स्वादिष्ट होता हे। भीम की पत्नी हिडिम्बा तो भिक्षा नहीं बनी, वह सिर्फ भीम की थाली मे परोसा जानेवाला पकवान हे। उसे तो कोई ओर भाई देखेगा भी नहीं।"

सान्त्वना ने शीघ्रता से भीतर आकर कहा, महारानीजी, देवी कुन्ती अपनी परिचारिकाओ के साथ इधर ही आ रही ह।"

तब तक कुन्ती भीतर आ चुकी थी। उसने दोनो मॉ-बेटी की सूजी आँखे देखकर कहा 'महारानी तुम्हारी कन्यारत्न को म अपने भाग्य पर सजाऊँगी। द्रापदी मेरे घर की लो हे। इसके शुभ चरण पडने के बाद ही हम इतने बरसा बाद घर जा रहे ह। मेरी सुलक्षणा बहू मेरी बेटी भी हे। मने बेटी पदा तो नहीं की लेकिन बेटे देकर बेटी ली हे। तुम्हारे वियोग को अपनी मॉ क रूप म चीन्ह सकती हूँ। मेरी माँ की आँखे भी ऐसे ही सावन भादो हुई थी। महारानी चिन्ता न करो। तुमन एक माँ की गोद से उठाकर बेटी दूसरी मॉ की गोद मे दी हे। स्त्री को ही विधाता ने यह गुण दिया है कि वे एक स्थान से उखाडकर दूसरे स्थान पर रोपे जाने पर ही फल देती हे। इस जगत् की जननी तो स्त्री ही हे। महात्मा विदुर का कहना हे हस्तिनापुर के नर-नारी द्रोपदी को देखने के लिए आतुर ह।"

महारानी आश्वस्त हुई। उसने कहा 'देवी कुन्ती यह अब आपकी ही बेटी हे। इसके अवगुणो को क्षमा करती रहिएगा।"

"जी छोटा न करो महारानी। मेरी द्रोपदी बडी भाग्यवती हे।"

महात्मा विदुर महाराज द्रुपद से लोटने की आज्ञा मॉगते हुए कह रहे थे "महाराज अब पाण्डवो को द्रोपदी सहित जाने की अनुमति दीजिए। कौरव-कुल की स्त्रियाँ उत्साह से राह देख रही होगी। महाराज धृतराष्ट्र ओर महारानी गान्धारी भी

अपनी बहू के आने की आहट पर कान लगाये होंगे।"

महाराज द्रुपद ने द्रौपदी के सिर पर हाथ रखकर कहा "पुत्री जाओ अपने घर जाओ यह तो तुम्हारा पड़ाव था। जाओ सुखी रहो।"

द्रौपदी एक बार 'माँ' कहकर महारानी के गले लगकर रो पड़ी। उसने धीरे से कहा, "माँ, पिताजी को कुछ मत बताना। हो सके तो तुम भी भूल जाना। चली तुम्हारी बेटी अग्निपरीक्षा के लिए।"

महारानी ने कहा "नहीं बेटी ऐसा न कहो। बहुत सुख पाओगी। अपनी माँ को न भूल जाना।"

रथों पर सवार होते ही घोड़े अपने घर की दिशा को सूँघकर चौकड़ियाँ भरने लगे। घोड़ों की पदचाप जैसे मृदंगों पर पड़ती थाप हो। राह की निस्तब्धता टूटने लगी जैसे नयी दुल्हन के आगमन पर मंगलगान बिखर कर निस्तब्धता को तोड़ देते हैं।

कुन्ती के मन की आकुलता द्रौपदी के हृदय की ऊहापोह कभी-कभी उनींदापन बनकर उनकी आँखों पर छाने लगती। फिर किसी मोड़ या किसी आहट से टूट जाती। द्रौपदी सोचती ससुराल जाना अनायास ही हो गया। कैसा होगा हस्तिनापुर? कैसा स्वागत होगा पाण्डवों का? पाँचों पाण्डवों के अपने-अपने महल होंगे। द्रौपदी का महल कैसा होगा? पाँच पति हैं पर किसी से पूछ नहीं सकती। मेरे महल में आने का नियम से पालन करेंगे सब। बड़े शालीन और मर्यादापूर्ण लोग हैं।

द्रौपदी ने देखा खूब लम्बा चौड़ा रास्ता कट गया है। द्रुपद की राजधानी व प्रदेश पीछे छूट गये हैं। यहाँ वृक्षों में भी नये नये वृक्ष हैं। पहनावा भी बदला है। उत्सुकता से रथों को देखती स्त्रियों के चेहरे भी नये नये हैं। मकानों की छतों छतों पर बच्चे कैसे तो रथों को देखकर खुश हो रहे हैं।

द्रौपदी ने सोचा आज पता नहीं कौन से महल में रात होगी। मेरा महल एक मन्दिर सा होगा या किसी वारांगना का प्रासाद कौन जाने? उसने यह विचार हृदय से परे हटाकर सान्त्वना से कहा, सान्त्वना देखो कितने सुन्दर वृक्ष हैं। फूलों से

लदे। धरती पर झुके ये वृक्ष किसी स्त्री जेसे नहीं लगते क्या?"

सान्त्वना कुछ खीझी हुई थी। उसने कहा, "देवी आपकी कल्पनाएँ मेरी समझ से परे हे।"

द्रौपदी ने हँसकर कहा, "तुम्हारा ब्याह भी जल्दी करवाना होगा। महारानी की ऐसी ही आज्ञा हे। पर अपने दूल्हे के प्रेम म यह न भूलना कि माँ न तुम्हें सिर्फ मेरे लिए भेजा हे।"

"फिर दूल्हा क्यो चाहिए। वह भी तुम्हारी ससुराल का।"

"क्या मेरे मायके मे तेरा कोई था?" सान्त्वना ने इस प्रश्न का उत्तर न दिया। कहने लगी, "जोड-जोड दु ख रहा है। तुम्हारी ससुराल के रथ की चूले ढीली हे। और यह देखो दूर से हस्तिनापुर भी दिखाई देने लगा हे। कहीं-कही से धुआँ भी उठ रहा है।"

"यह धुआँ ही तो हे। निर्मल आकाश को चीरकर यह धुआँ कैसे पूरे ब्रह्माण्ड म फेलता दिखाई देता है। फेलने से धुएँ की घुटन कम हो जाती हे। मेरे मन के भीतर जो धुआँ हे वो भीतर-ही-भीतर घुमडता है। उडता भी हे तो बैठ जाता हे।"

सान्त्वना ने अनसुना करते हुए कहा, "देवी देखो, नगर कैसे फूलों झाडिया के वन्दनवारो से सजा हे। वाद्ययन्त्र यहाँ तक सुनाई दे रहे ह। तुम्हारी अगवानी के लिए स्त्रियाँ फूल मालाएँ लिये मगलगान कर रही है।"

द्रौपदी ने कोई उत्तर न दिया। उत्साहित होकर सान्त्वना ने फिर कहा 'देखो देवी सभी तुम्हारे रथ को दखकर प्रसन्न हो रह ह। पाण्डव तो मुख्य द्वार तक पहुँच गये ह। कितना उत्साह हे लोगा के मन म' अब हमारा रथ भी पहुँचने ही वाला है। देवी कुन्ती को नगरवासियो ने घेर लिया हे। सब तुम्हारे रथ पर दृष्टि जमाये हुए है। नयी वहू तो तुम ही हो न।"

रथ के रुकते ही स्त्रिया ने द्रौपदी को घेर लिया। द्रापदी मुस्कराती हुई अपनी सास कुन्ती के पास जा खडी हुई। पाँचो पाण्डवा पर द्रौपदी की दृष्टि लगी तो उसने पाया अर्जुन उसे देख रहा है। शायद देख ही रहा होगा। द्रापदी को स्त्रियाँ बार-बार देख रही थीं। सब महल की ओर जाने लगीं। कुन्ती ने द्रौपदी का हाथ पकडकर कहा, "महारानी गान्धारी का हाथ पकडकर चरण छूना।"

द्रौपदी ने आकाश मे उठी अट्टालिकाओ को देखा। फूला की सुगन्धित टहनियाँ झरोखा तक जा रही थीं। अट्टालिकाआ म से स्त्रियाँ झाँक झाँक कर द्रापदी को देख रही थीं। द्रापदी प्रसन्नता से भर उठी। कुन्ती की आखा म आनन्द के आँसू थे। उसने घूमकर अश्रुपूर्ण नेत्रो से द्रापदी से कहा "कृष्णा, ससुराल म तुम्हारा स्वागत है।"

महारानी गान्धारी के महल म मृदग की थाप का स्वर सबस मुखरित था। उसके महल म छोटी कन्याएँ नृत्य कर रही थीं। गान्धारी न द्रापदी की अगवानी

के लिए आयोजन किया था। वह पट्टी बाँधे अपने आसन पर बठी थी। उसने परिचारिका को कह रखा था, ज्यो ही देवी कुन्ती आये उसे द्वार तक ले जाए। कुन्ती ओर द्रौपदी ने ज्या ही पदार्पण किया गान्धारी उठ खडी हुई। कुन्ती ने चरणस्पर्श किये ओर गले लग गयी।

"अहा दीदी, कितने दिना वाद तुम्हारी गन्ध पायी है।"

"कहॉ हे हमारी द्रोपदी?"

द्रोपदी ने सास के कहे अनुसार गान्धारी के चरण छूकर उसका हाथ पकड लिया। गान्धारी ने दोना हाथो से उसका हाथ पकडकर कहा, "इतना कोमल और पख सा हल्का हाथ तो हमारी द्रोपदी का ही होगा।"

द्रोपदी ने विनम्र होकर कहा, "प्रणाम करती हे कृष्णा।"

आहा कितना मीठा स्वर—कृष्णा तुम्हारा स्वागत है।"

गान्धारी के महल मे कोलाहल ओर उपहारा के ढेर लग गये थे। कन्याएँ गीत गा चुकी तो गान्धारी ने द्रापदी से कहा, "इन सव कन्याओ को उपहार दो कृष्णा! उपहार यहॉ रखे ह।"

द्रोपदी ने उपहार देकर गान्धारी का हाथ पकड लिया। जैसे कहीं से उसकी मॉ का स्वर सुनाई दिया— देवी कुन्ती ओर गान्धारी मे अन्तर न करना।

गान्धारी गद्‌गद हो गयी। उसने कितने ही आशीर्वाद दे डाले—"अपन पतिया के सग खुश रहो। जिन पतिव्रता स्त्रियो का नाम लेकर लोग नमन करते हें वैसे ही तुम्हारा यश हो। अपने महल मे जाओ। राह की थकान तो कल तक मिट जाएगी। लेकिन मायके की स्मृति हमेशा सालती रहेगी। बूढे हो जाने पर भी मायके का स्मरण आस-पास मॅडराता रहता हे। आज तुम्हारी मॉ की ऑख भी बार-वार भर आती होगी।"

"कृष्णा तुम्हारे सारे उपहार तुम्हारे महल म भेज दिये ह। कभी-कभी मेरे पास आती रहना। दीदी अव आप भी विश्राम करे। देव ने मिलने का सुख भाग्य मे लिखा था। नही तो केसी-कसी वाते सुनने मे आती थीं।"

कुन्ती आर द्रापदी के अपने महल म जाते ही गान्धारी का महल खाली सा हो गया। पर उसका मन भर उठा था। कितना कुछ कितनी शीघ्र हो गया।

धृतराष्ट्र ने पाण्डवो का स्वागत करके कहा 'अपने भाई के बच्चा को सकुशल पाकर म कृतार्थ हुआ। भीष्म पितामह की आज्ञानुसार आपके लिए एक पृथक् राजधानी का निमाण होगा। तव आप वहीं जाकर रहेगे। वहू द्रोपदी के स्वागत म कोई कमी न रहनी चाहिए। उसके आने के वाद पृथक् राजधानी ओर भी आवश्यक है। वहीं आप सव भाई द्रापदी के सग सुखपूर्वक रहो।"

इस तरह जगल मे मगल हुआ। इन्द्रप्रस्थ का निर्माण। अद्‌भुत वागा जलाशयो वावडिया अट्टालिकाआ वाज़ारा, उपवना स इन्द्रप्रस्थ सज गया। कई

व्यापारियो ने अपनी दुकान खोल लीं। बाज़ार लग गये। गलियाँ सज गयीं। पाण्डवा के उच्च प्रासाद आकाश छूने लगे। वहीं सव भाई सुखपूर्वक रहने लगे। कृष्ण ओर वलराम भी उनको सुखी देखकर वडे प्रसन्नचित्त द्वारिका लोटे। इन्द्रप्रस्थ की ख्याति सव जगह फेल गयी। कई स्थानो से लोग इन्द्रप्रस्थ देखने आने लगे।

द्रोपदी के साथ समागम की अवधि नारदजी निश्चित कर गये थे। द्रोपदी युधिष्ठिर के पार्श्व मे वेठी इन्द्राणी-सी शोभती। अर्जुन को अव अभ्यास हो गया था। सवके साथ रहते हुए भी जैसे वह सवसे अकेला था। कभी-कभी उसे आभास होता—महारानी द्रोपदी उसे देख रही हे पर वह उस तरफ कभी न देखता था। अपने हृदय पर उसने शिला रख ली थी।

सभी दिवस एक ही तरह व्यतीत हो रहे थे। न द्रापदी का आभास न क्षणा मे उल्लास न विछोह की पीडा, न मिलन का सुख, न देखने का चाव—कुछ भी अर्जुन को व्यापता न था। जेसे सव रुक गया हो, थम गया हो। एक कर्तव्य था जो अपने कवच मे लिये-लिये घूम रहा था अर्जुन। अर्जुन—एक अच्छा छोटा भाई जिसने अपनी पत्नी अपना सुख अपना जीवन भाइयो को विलग न होने देने के लिए हाथ से छोड दिया था।

यह कर्तव्य ही तो था—जिसने अपन हाथा वनाये शीशमहल को अपने ही हाथा से तोड दिया था। उसकी किरचो से हाथ लहूलुहान थे पर कोइ भी शिकायत होठा तक न आती थी। अर्जुन एक ठहरा हुआ गहरा जलाशय था या स्वयवर मे घूमता हुआ एक यन्त्र।

तभी विधाता ने एक ककरी मारी ओर उसे हिलाकर रख दिया।

नये नय इन्द्रप्रस्थ म दोपहर सकुचाती हुइ आ रही थी। अर्जुन अपने महल म वठा समय का अनुमान लगा रहा था। समय को काटने के सभी उपाय उसने जान लिये थे। तभी किसी की गुहार सुनकर वह सतर्क हुआ। द्वार पर एक ब्राह्मण हाथ जोडे अपनी गायों के नाम पुकार पुकारकर विह्वल हो रहा था।

"मेरी कल्याणी, मेरी गगा, मेरी जमुना मरी नन्दी "

अजुन न देखा और पूछा क्या हुआ ब्राह्मण देवता कुछ कहिए ता सही।"

ब्राह्मण ने कहा 'धनुधारी तस्कर मेरी गाय चुराकर भाग रहे ह। मेरी इतनी दुधारू इतनी सुन्दर गाय दिन दहाड़े खोलकर ले गये।"

अर्जुन ठिठका। एस माका पर सबस पहल ध्यान शस्त्र की ओर जाता है। शस्त्र वहीं थे जहाँ महाराज युधिष्ठिर द्रोपदी के साथ एकान्त म बठे थे। यह बात भी निर्धारित थी कि यदि कोई भाई द्रोपदी को अन्य भाइ के पास बठा हुआ दख लेगा तो उसे बारह बरस तक ब्रह्मचारी बनकर बनवास भागना पडेगा।

बनवास अर्जुन का चेहरा चमका। क्या अब बनवास नहीं है। द्रापदी का आस पास होने का आभास उसके चरमराते कपडा की सरसराहट, उसकी देह से निकलती मादक सुगन्ध उसक दामिनी की तरह चमकत नेत्र, उसकी सावर की तरह डोलती दृष्टि, उसका कक्ष को आलाकित करता रूप। महाराज युधिष्ठिर के पाश्व मे बठी द्रापदी क्या उसकी भाया है? अर्जुन क्षुब्ध हुआ। उसने थोडे घमण्ड के साथ मन ही-मन सोचा।

अपने पराक्रम से लोगा की नीद भगानेवाला अर्जुन कब से नहीं सोया, कौन जानता है? अब अर्जुन समय को नहीं बाँधता समय ने अर्जुन को बाँध रखा है। क्या बाढ आने पर नदी पानी को बाँध सकती है? समय तो अनन्त है अपार ह समुद्र की तरह। इसी समुद्र म डूब गया ह अजुन। साँस आती है पानी की सतह पर बुलबुले उठते ह पर कोन जानता है यह अर्जुन के नि श्वासो से उठनेवाले बुलबुले ह। क्या होती है स्त्री? क्या हाती ह अपनी भार्या? एक सृष्टि म दो जीव, एक आत्मा म दो शरीर एक डाल पर दो फूल, दो जुडे हुए हाथो म एक नमस्कार।

पर अर्जुन कहाँ जान पाया।

अर्जुन को यो चुप और विचारमग्न देखकर ब्राह्मण ने कहा, "क्या साच रह ह। लुटेरे मेरी गाय लेकर दूर निकल जाएँग।"

अर्जुन न निणय ले लिया—मे नियम भग करके बनवास जाऊँगा। यही मेरा कर्तव्य है। ब्राह्मण की गाय भगाकर ले जानेवाला से गाये छुडाना ही इस समय मरा कर्तव्य है। आर यह सयोग भी तो भाग्य से ही मिला है।

अर्जुन न ब्राह्मण से कहा, "ठहरो विप्र म शस्त्र लेकर उपस्थित होता हू। चोर अभी बहुत दूर न गये हाग। निश्चय ही तुम्हे अपनी गाय मिल जाएँगी।"

युधिष्ठिर जहाँ बठे थे अर्जुन न वहाँ जाकर द्वार खटखटाया और भीतर चला गया। युधिष्ठिर का प्रणाम करक सारी घटना बताकर कहा "ह भ्राता, म क्षमाप्रार्थी हूँ। शस्त्रा की आवश्यक्ता आ पड़ी है इसीलिए नियम भग करके आना पड़ा नहीं ता विप्र की गाय चार ले जाता।"

युधिष्ठिर न कहा "अजुन तुमने अपने कर्तव्य का पालन किया ह। विप्र की सहायता करना हमारा धम भी ह। जाआ उसकी गाय छुड़ाकर उस लाटा दा।"

अर्जुन भीतर स शस्त्र लकर अपन ही तीर की तरह लाट गया। चारा का

पीछा करके सारा गोधन छुड़ाकर लाया और ब्राह्मण को सौंप दिया। ब्राह्मण अपनी रँभाती हुई गायों को गले लगा लगाकर अर्जुन को आशीर्वाद दे रहा था। अर्जुन यह दृश्य देखकर प्रसन्न हो गया। उसे लगा, सुख देने में ही सुख है।

अर्जुन ने युधिष्ठिर को गोधन लौटाने का समाचार सुनाकर पूछा, "अब मेरे लिए क्या आज्ञा है? मैंने द्रौपदी के साथ आपको एकान्त में देखकर नियम भंग किया है। अब मैं नियमानुसार बारह वर्ष तक वनवास के लिए जाऊँगा।"

युधिष्ठिर विचलित हुआ। उसने कहा, "अर्जुन तुमने कोई अपराध नहीं किया। बड़े भाई के पास छोटा भाई जब चाहे आ सकता है। इसलिए मेरी बात मानकर वनवास जाने का आग्रह छोड़ दो।

अर्जुन ने दोनों हाथ जोड़कर कहा "हे तात, मैंने आपसे ही सीखा है कि धर्म का आचरण छलपूर्वक नहीं करना चाहिए। मैं हाथ में शस्त्र लेकर शपथ खाता हूँ, मैं धर्म से विचलित न होऊँगा। अब मुझे वनवास जाने की अनुमति दीजिए। बारह बरस पश्चात् आपके श्रीचरणों में ही उपस्थित होऊँगा।"

युधिष्ठिर ने अर्जुन को फिर कहा, 'मत जाओ अर्जुन।" पर मन-ही मन वह भी जानता था कि अब अर्जुन नहीं रुकेगा।

यह सब तुरन्त ही हो गया। किसी ने भी इस स्थिति में यह न देखा कि द्रौपदी का मुँह किस तरह पीला पड़ गया है। उसने सोचा, अर्जुन इस प्रकार जा सकता है, यही बात मेरे मन में नहीं आयी। उसे अपना सारा संसार गिरता हुआ लगा। बारह बरस के लिए अर्जुन चला जाएगा। कौन-सी आशा लेकर जियूँगी। उसने युधिष्ठिर से कहा, 'आर्य मैं अपने कक्ष में जाने की अनुमति चाहती हूँ।"

अर्जुन के वनवास जाने का समाचार सुनते ही कई वेदपाठी ब्राह्मण, सन्यासी, कथावाचक भी अर्जुन के साथ चल पड़े। अर्जुन एक तपस्वी की तरह धार्मिक कथाएँ सुनता, यज्ञ, अग्निहोत्र जप, स्नान और पवित्र स्थल देखता गंगाद्वार पर आ गया। जहाँ भी वो अपना ठिकाना बनाता, वहीं लोग चले आते। इस तरह का जीवन उसे बड़ा अच्छा लगने लगा। द्रौपदी आँखों से ओझल होकर मन के और पास आ गयी थी। यहाँ उसे बाँटनेवाला कोई न था। अर्जुन के मन में एक ही फाँस गड़ी थी। उसे लगता, मुझे द्रौपदी से विदा लेकर आना चाहिए था या नहीं। पता नहीं वो अपराध था या अब अपराध कर रहा हूँ। युधिष्ठिर को झुककर प्रणाम करते समय उसने द्रौपदी की तरफ भी सिर सम्मान में झुकाया था पर उसे देखे बगैर तीर की तरह भाग आया था। डर था भैया रोक न लें, डर था कुछ द्रौपदी न कह बैठे। द्रौपदी दुखी तो अवश्य हुई होगी। मैं तो इसलिए भी गया दवी कि रोज-रोज मुख देखकर तुम आहत न होओ। पर क्या मैं आहत नहीं हूँ? जीती हुई वस्तुएँ बाँटते-बाँटते भाइयों को कुछ भी बाँटना इतना सहज लगने लगा कि मेरी द्रौपदी भी बँट गयी। इस स्थिति से क्या कभी उबर सकता हूँ?

कृष्णा कर सकोगी मुझे क्षमा? क्या जान पायी हो, म स्वय कितना असहाय हूँ? अपन इर्द गिर्द यह जाल बनाकर अब स्वय जाल को काटकर भाग जाना चाहता हूँ। भागते भागते चाहे कितनी बार ब्रह्माण्ड के चक्कर लगा लूँ पर इस स्थिति से छुटकारा पाना चाहता हूँ। म कायर की तरह नही भाग रहा कृष्णा। मे लज्जा ढँकने के लिए भाग रहा हूँ। हाँ मुझे लाज आती है। मुझे लाज आती है अपनी पत्नी को अपने बडे भाई के पार्श्व म बैठे हुए देखने पर, मुझे लाज आएगी जब वह एक वर्ष तक भीम की अकशायिनी होगी और लाज आएगी जब मेरे दोनों अनुज भी एक-एक वर्ष के लिए उसके पति हागे। म इस अवधि मे कई-कई बार मरण को वरूँगा। कृष्णा, यह जीना नहीं हे।

अपनी कुटिया मे बेठा अर्जुन दु ख और क्षोभ से कॉप रहा था। विवशता का तलेया मे उसका रोम-रोम लज्जा मे डूब रहा था। उसे लगा इस स्थिति से छुटकारा पाना कठिन ह। उसने अपने दोनो हाथा से उन्हे ढाँप लिया। अश्रुधारा बह चली। उसने कुछ न किया। क्या करता, उसका रोम रोम क्षमा-क्षमा की गुहार लगा रहा था। उसने हिचकियाँ लेते हुए धीरे धीरे कहा "कृष्णा क्या कभी मेरा अपराध क्षमा कर पाओगी। क्या जान पाओगी कि मे कितना असहाय हूँ। जो हुआ वो इतना अप्रत्याशित था कि म आज तक स्तब्ध हूँ, म तो मानो काठ का हो गया हूँ। आज भी स्तब्ध हूँ दवी। आज भी तुम्हारे सान्दर्य की आँच तुम्हार बेठने के स्थान से आती तपन, तुम्हारे तन से वहती सुगन्ध तुम्हारा सान्निध्य यहाँ तक महसूस करता हूँ। कहाँ हो तुम प्रिया कहाँ हो कृष्णा। तुम मेरे साथ जुडा एक चक्र हो गयी हो जो पॉच शिखरा के सम्मुख घूमता रहता हे। जो भी शरीर तुम्हारे सामने आएगा तुम उसी की हो। हर समय वदलते रहने से तुम थक नहीं जाओगी कृष्णा' यन्त्र होने पर तुम्हारी वो प्रथम प्रणयी दृष्टि क्या हुई कृष्णा? केसे देखा था तुमने मुये? क्या सिर्फ उस दृष्टि के पल को बाँधकर रखने के लिए तुम यन्त्र हो गयीं। कृष्णा जुड गयी पाण्डवा क साथ। सिर्फ मेरे लिए। तुम्हारे सोन्दर्य ने सबको माहित किया पर मुझे तो राख ही कर डाला।"

"कृष्णा!" एक कराह की तरह अर्जुन का स्वर निकला। उसे लगा सामन ही वठी हे द्रापदी। उसने वहुत प्यार से कहा "कृष्णा, मरे भीतर अव कुछ नहीं धधकता। स्त्री को देख मन आलोडित नहीं होता। कोई चाव नहीं उपजता। एक लो की तरह धधका था चाव वादल फटने से मिट गया।

"कृष्णा स्त्री तो सिर्फ तुम हा जिसके लिए मने लक्ष्यभेद करके सोचा था— अर्जुन का धनुर्धर होना साथक हो गया। कृष्णापति होकर ससार पा लिया मन। धरती पर चलनेवाला स म एक हाथ ऊपर चल रहा हूँ। सब मुयस इय्या कर रहे ह। फिर क्या हुआ वसा ही जीवन भोगने से पहले ही तपस्वी हो जाना पडा। रतन वरसा ब्राह्मण वश म भिक्षा मागन मणि हाथ लगी आर वट गयी। घर आन ही यह

वनवास। वनवास ही वनवास। यह जीवन ही अब वनवास हो गया है। भागते-भागते छुपते-छुपते आँखें चुराते जीनेवाला जीवन वनवास से भी ख़राब है।"

अर्जुन को माँ के हाथ की तरह सहलाती हुई बयार ने प्यार से छुआ। अर्जुन सतर्क हुआ। उसने देखा ध्यान म पता ही न चला कि वह गगा किनारे जा रहा है। गगा उछल-उछलकर मानो उसे अपने पास बुला रही है।

उसे याद आया वो तो गगा स्नान के लिए ही घर से निकला था। कितना भुलक्कड हो गया है अर्जुन! सिवाय कृष्णा के कुछ भी ठीक स्मृति की पकड म नहीं आता। गगा स्नान करके अवश्य हल्का हो जाऊँगा। स्नान से कलुष तो मिट ही जाते है मन की जमी हुई मैल भी धुल जाती है।

अर्जुन न अपने वस्त्र किनारे पर रखकर रेत म चलते हुए रेत के कण कदमा के नीच सुरसुराते हुए महसूस किए। उसने सोचा धरती काँटे चुभाती है, गुदगुदाती भी है। गगा मे उतरते ही पाँव एकदम सुखमय हो गये। तन-मन शीतल हुआ। अर्जुन साँस रोककर तैरने लगा। जल कितना सुख देता है। जल मे मैं हूँ या जल मुझमे। यह निर्णय कर पाना कठिन है। अर्जुन ने सोचा कितना सुन्दर ह यह जगत्। कितना कोमल है जल का स्पर्श। कितना भव्य है इसमे आँख मूँदकर शून्य म तैरते रहना।

हल्के और स्वच्छ ताज़ादम होकर अर्जुन ने जल को जल से तर्पण किया। फिर अग्निहोत्र करके बाहर निकल रहा था। तभी नागराज की पुत्री ने कामनावश होकर उसे गगा मे ही खींच लिया।

इस तरह अनायास कोई स्त्री जल मे से खीचती हुई ले जा रही ह, अर्जुन को समझ ही नहीं आया। यह क्या घट रहा ह? जब गगा के दूसरे किनारे पर स्त्री के हाथा खिचते अर्जुन ने अपने-आपको खड़ा पाया तो देखा एक रमणी उनके पैरा से आकर लिपट गयी है। अर्जुन ने पूछा 'कौन हो तुम, ऐसा साहस कसे किया? मैं कुन्तीपुत्र अर्जुन हूँ। बारह बरस की अवधि के लिए वनवास पर हूँ। यह कौन सा स्थान है।"

स्त्री ने कहा "म उलूपी हूँ। कोरव्य नागपति की पुत्री। तुम्हे देखकर मोहवश खीच लायी हूँ।"

'देवी म अग्निहोत्र के लिए बाहर निकल रहा था। क्या म अग्निहोत्र सम्पन्न कर सकता हूँ।"

उलूपी अर्जुन को अग्नि क पास ले गयी। अर्जुन ने अग्निहोत्र सम्पन्न किया। उलूपी वहीं पर लज्जावश गर्दन झुकाये खडी थी। अर्जुन ने लज्जा ओढती उलूपी को देखकर पूछा, "यहाँ क्यो लायी हो? यह कौन सा स्थान है? कौन हो तुम?"

फिर वही प्रश्न सुनकर उलूपी ने बडे मृदु स्वर मे कहा 'हे पुरुष सिंह म कोरव्य नामक सर्पराज की पुत्री उलूपी हूँ। तुम जब गगा म स्नान कर रहे थे तब

म तुम्हे देखकर मोहित हो गयी। इसीलिए यहाँ तक लायी हूँ। मुझे स्वीकार करो। म तुम्हारा बड़ा उपकार मानूँगी।"

अर्जुन ने उसे देखकर बड़ी विनम्रता से कहा "मुझे क्षमा करना देवी, मैं कुन्तीपुत्र अर्जुन एक नियम म बँधा हुआ हूँ। स्वतन्त्र भी नहीं हूँ। धर्मराज युधिष्ठिर की आज्ञा से मुझे बारह बरस तक ब्रह्मचर्य के साथ वनवास में रहना है। हे नागकन्या, मुझे अन्यथा मत लेना। मैं तुम्हारा प्रिय कार्य नहीं कर सकूँगा। अपने और प्रतिज्ञा भंग करना मेरे वश म नहीं है। मुझे क्षमा करो देवी।"

उलूपी ने कहा, "मैंने तो तुम्हे स्नान करते समय ही पहचान लिया था अर्जुन। मैं यह भी जानती हूँ कि तुम किस कारण से घर छोड़कर आये हो। यह भी सत्य है कि तुम्हारा ब्रह्मचर्य का व्रत सिर्फ द्रौपदी को लेकर है। मेरे साथ सहवास करके तुम्हारी प्रतिज्ञा भंग न होगी। कोई भी वीर पुरुष किसी कामपीड़िता स्त्री को दुत्कारता नहीं है। मेरी कामना सफल करना तुम्हारा धर्म है। शास्त्रों म भी यही लिखा है। इसमें कोई दोष नहीं है। यदि तुम मेरी इच्छा पूर्ण न करोगे तब तुम निश्चय ही पाप करोगे। यह पाप न करो अर्जुन।"

अर्जुन निरुत्तर हो गया। उलूपी के साथ जाते हुए वह सोच रहा था—क्या यह द्रौपदी के प्रति अन्याय न होगा। यह देह कभी किसी स्त्री की चाह म नहीं रही। चाह की सुगन्ध तो द्रौपदी को देखकर ही फैली थी। उसे देखकर ही देह का रोम-रोम खुल गया था। बस हाथ भर बढ़ाने की देर थी। दूरी भी कहाँ थी, हमारे मध्य सिर्फ उत्तरीय था। प्यास दोनों तरफ चरम पर थी। अमृत पान दूर ही-दूर होता चला गया। अब तो लगता है जैसे कुछ हुआ ही न था। सब छलावा था। कृष्णा तुम्हारे प्रति यह निश्चय ही अन्याय है। मुझे क्षमा कर सकोगी। लगता है पूरी आयु एक भिखारी की तरह क्षमा माँगता म तुम्हारे द्वार पर खड़ा रहूँगा। तुम तो जानती हो मैंने ऐसी कामना कभी न की थी। सच तो यह है कि अब कोई कामना ही नहीं रही।

अर्जुन उलूपी के संग जा रहा था। उसने सोचा यदि इसका अनुरोध ठुकरा देता हूँ तो पाप का भागी होता हूँ। यदि अनुरोध रखता हूँ तो कृष्णा का अपराधी तो होता ही हूँ। क्या मैं हमेशा तुम्हारा अपराधी ही रहूँगा कृष्णा?

अपनी विवशता पर मेरा वश नहीं है तभी तो भाग आया धर्मराज के आग्रह पर भी नहीं रुका। तुम्हारी लाचारी तुम्हारी विवशता मै नहीं देख सकता था। देह का भी धर्म होता है, पर यह देह तो सिर्फ तुम्हारी थी। तुम मेरी अखण्डयौवना चिरकुँआरी पतिव्रता स्त्री हो कृष्णा। यही समझना तुम्हारा पति भटक गया है।

एक स्त्री के साथ रात्रि व्यतीत करके कदाचित् म तुम्हारे और समीप आ पाऊँगा। क्योंकि मेरे लिए पत्नी का अर्थ सिर्फ कृष्णा है उसी तरह जैसे तुम्हारे लिए पुरुष सिर्फ मैं हूँ। कृष्णा मुझे ऐसा क्यों लगता है कि जब भी कोई पुरुष किसी

स्त्री से मिलता हे तो वे अर्जुन और द्रौपदी ही होते हे। वहुत सी स्त्रियो के साथ समागम एक भटकन ही होता होगा। भटकन न प्रेम हे न सकल्प। मे भटकाया जा रहा हूँ। भटकने के लिए वनवास पर नहीं आया। मेर रोम रोम के वातायन से सिर निकालकर देखती स्त्री सिर्फ तुम हो कृष्णा!

अर्जुन का हाथ पकडकर जाती उलूपी ने हाथ ज़रा कसकर पकडा आर खींचा तो अजुन वास्तविक स्थिति म आ गया। उलूपी के कक्ष मे जव तक दीया जलता रहा, यही थी। जव दीया वुझ गया तव सिर्फ द्रापदी रह गयी। द्रौपदी जो सदा स थी।

अर्जुन ने सोने से पहले द्रौपदी से पूछा, "द्रोपदी इस समय तुम कहॉ हो किसके पास हो? मेरे भाइया मे कोन तुम्हारा पति है? वॅटने मे निश्चय ही तुम मेरे हिस्से म भी आओगी, पर मुझे तो हिस्सा नहीं चाहिए था। सिह पुरुप हिस्सा नहीं मॉंगते। हिस्सा नहीं लेते। कृष्णा, मेरी पत्नी, सुना देह एक माध्यम हे पाने से पाने तक का पर सभी कुछ तो नहीं हे देह।"

उलूपी के सग रात बिताकर अर्जुन गगा मे उसी स्थान पर नहाने आ गये। कृतज्ञ उलूपी अर्जुन को वहीं छोडने आयी, उसने अर्जुन को यर दिया 'अर्जुन, तुम्ह कभी किसी जलचर से कप्ट न होगा। तुमने मेरी इच्छा पूर्ण करके पुण्य का काम किया हे। जाओ वीर, उलूपी धन्य हुई। एक पूर्ण पुरुप को पाना पूरे व्रह्माण्ड की चाह को पा लेना है। यह रात मेरे समस्त जीवन पर चाँदनी की तरह छायी रहेगी।"

गगा म निमल होकर अर्जुन न ज्याही अपनी देह पोछी, उसे लगा उसने पूरी रात गमछे की तरह धोकर झाड ली है। उलूपी की दह पहली स्त्रीदेह थी। उसे देह ही स भागा, आत्मा से नहीं। भोगना दोनो को ही ह, चाह आत्मा हा चाहे देह। पर देह ऊपर नहीं ह, अमर तो आत्मा ही हे।

अर्जुन ने गगा को अर्घ्य देकर प्रणाम करक कहा "माँ तुम्हारा पुन भटककर फिर तुमम आ गया ह निर्मल होने पावन होने मुक्त होने। मेरा अर्घ्य स्वीकार करा।"

गगा ने अर्जुन के पॉंव जेसे वॉंध लिये थे। नीचे खिसकती रेत उसे और वॉंध रही थी। मन ही मन अर्जुन ने कहा—देह का मिलन आत्माओ के मिलने का एक पथ हे, मिलन नहीं। निश्चय ही स्त्री देह सृष्टि का एक अपूर्व आश्चर्य है। आत्मा से होकर जो राह स्त्री के ससर्ग तक जाती है वही प्रेम हे। प्रेम के विना ससर्ग मे कोई सुख नहीं। कोई तृप्ति नही। कोई पूर्णता नहीं। मेरी कृष्णा दूसरे पुरुपा के साथ रहकर भी सिर्फ मेरी ही हे। यह म उलूपी के ससर्ग म आये विना केसे जान पाता? उलूपी म तुम्हारे निमन्त्रण को धन्यवाद देता हूँ। स्वेच्छा से मेने उलूपी का सग नही किया। न करके मे पाप का भागी न होना चाहता था। पर समुद्र म स्वय जाकर तेरने और किसी नियति द्वारा धकेल दिये जाने म अन्तर ता हे ही। समुद्र

म डूबने के बाद मनुष्य बाहर निकलने को आतुर होता है। पर स्वय समुद्र में प्रवेश करने पर उसका मन बाहर निकलने को नहीं करता। पर क्या देवी द्रौपदी मेरी इस ऊहापोह को समझ लेगी?

गगा की बयार गगा से बाहर भी झूम रही थी। अर्जुन अपने स्थान पर पहुँचा तो देखा सभी ब्राह्मण और ऋषि चिन्ता म थे। उन्होने रात न आने का कारण पूछा। अर्जुन ने सब सत्य कह दिया। कोई भी चकित न हुआ। धर्मराज युधिष्ठिर के अनुज से झूठ की अपेक्षा कौन कर सकता था। अर्जुन ने सबके साथ मिलकर अग्निहोत्र किया। ऋषियों से कई वार्ताएँ सुनी। उसके मन में कहीं कोई विकार या अपराध बोध न था। देह निश्छल थी जैसे कहीं कुछ न हुआ था।

अर्जुन को गगा बहुत प्रिय थी। वहीं रहकर यज्ञ हवनादि म समय व्यतीत होने लगा। रोज प्रात गगा की तरफ उठते पग अर्जुन म उत्साह भर देते। गगा अपनी गोद म लेकर झुलाती रहती। गगा की एक एक बूँद अर्जुन थी। देह पर मोती न्योछावर करती रहती। एक दिन अर्जुन ने सोचा—कितनी सुन्दर है प्रकृति? कितनी सुन्दर है धरा? कितने सुन्दर है पहाड? सभी देखना चाहिए। सभी देखूँगा। मन में घुमक्कडी की ओर पृथ्वी का कोना-कोना देखने की छू लेने की जी लेने की एक उद्दाम इच्छा जगी। गगा से जुडे सारे स्थान देखने की लालसा मानो लहू मे बहने लगी।

इन्द्रप्रस्थ मे देवी द्रौपदी युधिष्ठिर के साथ बैठी थी। युधिष्ठिर उसे जुए का कोई दाँव समझा रहे थे। दोनो ही बडी तन्मयता से पासो पर दृष्टि गडाये थे। सान्त्वना ने भीतर आकर देखा और कहा "महाराज, वीर अर्जुन का समाचार लेकर कोई दूत आये है।

युधिष्ठिर ने कहा "भीतर लिवा लाओ सान्त्वना।" जाते-जाते सान्त्वना ने देखा देवी के हाथ से पासे छूट गये है।

प्रहरी ने भीतर आकर आगन्तुकों को महाराज युधिष्ठिर के सम्मुख लाकर खडा कर दिया। महाराज ने पूछा "कहिए क्या समाचार है?"

दूतो ने कोई भूमिका बाँधे बिना कहा "महाराज वीर अर्जुन नागराज कन्या

उलूपी के आग्रह पर उसके साथ एक रात व्यतीत करके हिमालय की तरफ चले गये ह। वहाँ वह स्थान-स्थान पर यज्ञादि करते हुए समुद्र-तट पर जाकर फिर दक्षिण की तरफ जाएँगे।"

महाराज युधिष्ठिर ने थोडा विराम देकर पूछा, "वह कुशलपूर्वक तो हे न?"

"जी महाराज, यही सवाद सुनाने हम प्रस्तुत हुए है।"

युधिष्ठिर ने कहा, "इसके बाद भी समाचार देते रहोगे।"

"जो आज्ञा" कहकर सब चले गये। उनके जाते ही द्रोपदी ने युधिष्ठिर से कहा, "महाराज, म अपने महल म जाने की अनुमति चाहती हूँ।"

"जाओ देवी, पर खेल तो अधूरा ही रहा।"

द्रोपदी ने कहा, "यह खेल मुझे भाता नहीं है। लगता हे मे कभी भी यह दाँव-पच सीख न पाऊँगी।"

युधिष्ठिर ने हँसकर कहा, "उतना बुरा भी नहीं है देवी। पर फिर कभी इच्छा हो तो यत्न करना।"

युधिष्ठिर भी एकान्त चाहते थे। द्रोपदी के जाते ही चिन्ता म डूब गये। कोन है यह उलूपी? क्या यह सब अर्जुन की इच्छा से हुआ होगा? क्या हमारे परिवार म कुछ गलत हो गया? क्या द्रापदी को प्राप्त न करने से ही अर्जुन भटक रहा हे? क्या द्रोपदी का देखने के बाद हम ही अपने मन पर क़ाबू न रख सके? जब चार बरस तक द्रोपदी हमारी पत्नी न होगी तो क्या हम भी किसी उलूपी के सग रात्रि व्यतीत कर सकेगे?

'नही।" युधिष्ठिर ने काँपकर कहा, "ऐसा कभी नही होगा।" फिर उन्होने घबराकर आस पास देखा। कही कोई सुन ता नहीं रहा। प्रभो, कहीं कुछ गलत हो गया। पता नहीं अभी क्या-क्या समाचार आएँगे?

अपने कक्ष म जाकर द्रौपदी आधे मुँह पलग पर गिर गयी। एकदम जड हो गयी द्रोपदी। न रो सकी न ही कुछ सोच सकी। एक तीव्र वेदना आग की लपट की तरह उसके मन से निकलकर मस्तिष्क तक उठने लगी। उसने दोना हाथों से अपनी कनपटियो को कसकर पकड लिया। पर पीडा बढती ही गयी आर द्रौपदी चेतनाशून्य हो गयी।

द्रोपदी के कक्ष का द्वार खुला देखकर उधर से निकलती सान्त्वना ने सोचा, युधिष्ठिर के कक्ष से इतनी शीघ्र केसे आ गयी देवी। वो शीघ्रता से भीतर आयी ता देखा द्रोपदी अपने पलग पर बेसुध पडी ह। आधे बाल उसकी देह के नीचे है आधे पलग के नीचे। मस्तक पसीने की बूँदा से यूँ दिखाई देता है जैसे माती जडे हा। साँस के आने का पता सिर्फ उसके वक्ष के उतार-चढाव से चल रहा हे। सान्त्वना घबरा गयी। कुछ पल तो वह अपने स्थान पर जड-सी हा गयी। फिर उसने सोचा। यहाँ इसकी बीसियो दासियाँ ह पर सखी तो मेरे सिवा ओर कोई नहीं हे। उसे रुलाई

सान्त्वना न धीरे स कहा, "देवी, कुछ दिन माँ के घर चल। तुम्हारा मन वदल जाएगा और महारानी भी खुश हागी।"

द्रौपदी न सिर उठाकर कहा, "कौन-से घर जान को कहती हो सान्त्वना? कहाँ है घर? घर तो यही है। जहाँ कभी तो अर्जुन के आन की आशा है। अर्जुन के विना घर नहीं हाता सान्त्वना। अगर हा सकता तो म, मैं द्रुपद की राजकुमारी इतनी असहाय न होती। क्या करूँगी वहाँ जाकर। यहाँ पर अर्जुन के समाचार तो आते है। सान्त्वना, मैं दीवारो के बीच थोड़े से स्थान म फँस गयी हूँ। अव कोई उपाय नहीं है।"

सान्त्वना ने कहा, "देवी थोड़ा हाथ-मुँह धोकर स्वस्थ हो ला। महाराज युधिष्ठिर यहाँ आ सकते है।"

"सान्त्वना, तुमने वहुत अच्छा किया। याद करवा दिया मै महारानी द्रौपदी हूँ। महाराज युधिष्ठिर की महारानी का अर्जुन से क्या सम्बन्ध? जिसे जी भरकर देखा ही नहीं उसे वाँधकर रखना कहाँ हो सकता है? सिर्फ वह एक दृष्टि कहीं अटक कर रह गयी है। रह गया है उँगलिया म काँपता उनके उत्तरीय का छोर। कुछ मूक शब्द भी थे जिन्हें न अर्जुन वाणी दे सके, न मैं। चला सान्त्वना, महारानी द्रौपदी का शृगार करो। महाराज आते ही होगे।"

महारानी द्रापदी के वाला की कघी करते-करते सान्त्वना ने साचा, यदि विवाह वन्धन है तो मै विवाह न करूँगी। सखी द्रौपदी के वच्चे ही मेरे वच्चे हागे। म सखी को अकेला नहीं छोड़ सकती। महारानी माँ ने कितना विश्वास किया है मुझ पर। म इस पचड़ मे नहीं पड़ूँगी। याल सँवारते सँवारते सान्त्वना के हाथ स कघी गिर गयी। उसे हँसी आयी। जव भी कृष्णा के वाला मे कघी करते समय कघी गिर जाती थी तो महारानी कहती थीं—कृष्णा, आज जरूर कोई पाहुना आएगा।

अनायास ही द्रौपदी ने पूछा, "सान्त्वना, आज कौन आएगा?" दोना ही हँस पडीं जैसे वचपन का कोई क्षण हाथ लग गया हो। द्रापदी ने पूछा "वह तुम्हारे कार्तिकेय का क्या हुआ? उसकी तुमम काफी रुचि लगती है। हमेशा पीछे पीछे आता रहता है।"

सान्त्वना ने कहा, "देवी मुझे उसका उतावलापन अच्छा नहीं लगता।"

"तभी मेरे याला को जोर से पकड़कर सुलझा रही थी। जोर से सुलझाने पर कोई उलझन नहीं सुलझती।"

सान्त्वना ने सोचा, म महारानी के वच्चे तो पालूँगी ही पर व्याह भी कर लूँगी। यही ठीक है।

द्रापदी ने मन ही मन सोचा—शीघ्र तैयार हो जाऊँ। महाराज आ गये तो आँखे लाल न होनी चाहिए। उसने सान्त्वना से कहा, "मेरा काजल ले आ। आँख मे आँज लूँ।"

आने लगी। क्या करूँ? इस इसी तरह आराम करने देना उचित होगा या जगाना चाहिए? उसने घबराकर इधर-उधर देखा। कहीं कोई न था। एक अस्फुट-सा स्वर द्रोपदी के काँपते होठो से निकला। सान्त्वना ने तुरन्त द्रौपदी के पास जाकर उसके बालो पर हाथ फेरा।

"देवी, क्या हुआ? कृष्णा, इस समय यहाँ कैसे आयी।" उसने पूछा।

द्रोपदी ने आँख खोलकर सान्त्वना को देखा। पर अनचीन्ही दृष्टि से फिर सामने दीवार पर दृष्टि जमा ली।

सान्त्वना चिन्तित हुई।

द्रौपदी की दृष्टि म झाँका तो लगा यह पूछ रही है, 'कोन हो तुम?' सान्त्वना ने घबराकर कहा "सान्त्वना को भूल गयी देवी। लो थोडा जल ग्रहण करो।"

जल ग्रहण करके द्रोपदी ने भर्राई आवाज म कहा, "सान्त्वना मेरे वीर अर्जुन किसी उलूपी नाम की स्त्री के साथ रात्रि व्यतीत करके कहीं हिमालय में घूम रहे है।"

यह कहते ही द्रोपदी की हिचकियाँ बँध गयी। उसने दोनो हाथो से सान्त्वना के हाथ पकड लिय और अपने-आपको रोते रोते उसकी गोद मे डाल दिया।

सान्त्वना ने अपनी सखी को रोने दिया। फिर कहा 'कृष्णा कुछ कहो, अपने मन की व्यथा बह जाने दो। यहॉ सिर्फ हम दोनो ह ओर कोई नहीं ह। होता भी तो तुम्हारी व्यथा न समझ पाता। बोलो सखी, बह जाने दो अपने शब्दो को अपने ऑसुओ की बाढ म।"

सान्त्वना ने माँ की तरह द्रापदी का मुँह पोछा आर बाल सीधे करने लगी। उसके बालो मे उँगलियाँ फेरकर उलझने निकालती सान्त्वना ने फिर कहा "सखी कुछ कहो न।"

यहॉ से चले गये बारह वर्षो के लिए। तुम क्या नहीं जानतीं जाने से पहले विदा लेने आना भी ठीक न समझा। ओर आज यह समाचार। क्या अर्जुन नहीं जानता म यहाँ उसी के लिए तो हूँ। द्रोपदी आज सिर्फ युधिष्ठिर की महारानी हो गयी। क्या अर्जुन की कुछ नहीं हूँ म? सान्त्वना, हिडोले की तरह अवधि मे यन्त्रवत् घूमती क्या म द्रुपदकन्या हूँ। क्या म इसीलिए पदा हुई। अर्जुन ये क्या किया, क्या किया तुमने? मेरा जीवन ही रणक्षेत्र बना न्यिा। जीवन के रणक्षेत्र मे न कोई हारता हे न जीतता ह। सिर्फ लडता है, युद्ध करता है। निरन्तर युद्ध। युद्ध म तो मनुष्य जीतता भी है, पर जीवन के युद्ध मे नहीं। मने तो सोचा था अर्जुन को ऑखों में बसा रखूँगी। पर जितनी देर काजल रहता है उतनी देर भी वे न रह पाये मेरी आँखो के सामने। आज मै पूरी तरह बिखर गयी हूँ सान्त्वना' क्या करूँ? बन्धनो ने जकड लिया है। सबसे बड़े ब धक हें महाराज युधिष्ठिर। वे इतने अच्छे व्यक्ति है कि म कोई शिकायत भी नहीं कर सकती।"

सान्त्वा ने धीरे से कहा, "देवी, कुछ दिन माँ के घर चलें। तुम्हारा मन बदल जाएगा और महारानी भी खुश होंगी।"

द्रौपदी ने सिर उठाकर कहा, "कौन-से घर जाने को कहती हो सान्त्वना? कहाँ है घर? घर तो यही है। जहाँ कभी तो अर्जुन के आने की आशा है। अर्जुन के बिना घर नहीं होता सान्त्वना। अगर हो सकता तो मै, मै द्रुपद की राजकुमारी इतनी असहाय न होती। क्या करूँगी वहाँ जाकर। यहाँ पर अर्जुन के समाचार तो आते है। सान्त्वना, मै दीवारों के बीच थोड़े से स्थान मे फँस गयी हूँ। अब कोई उपाय नहीं है।"

सान्त्वना ने कहा, "देवी थोडा हाथ मुँह धोकर स्वस्थ हो लो। महाराज युधिष्ठिर यहाँ आ सकते हैं।"

"सान्त्वना तुमने बहुत अच्छा किया। याद करवा दिया मै महारानी द्रौपदी हूँ। महाराज युधिष्ठिर की महारानी का अर्जुन से क्या सम्बन्ध? जिसे जी भरकर देखा ही नहीं उसे बाँधकर रखना कहाँ हो सकता है? सिर्फ वह एक दृष्टि कहीं अटक कर रह गयी है। रह गया है उँगलियों मे काँपता उनके उत्तरीय का छोर। कुछ मूक शब्द भी थे जिन्हे न अर्जुन वाणी दे सके, न मै। चलो सान्त्वना, महारानी द्रौपदी का शृंगार करो। महाराज आते ही होगे।"

महारानी द्रौपदी के बालो की कघी करते-करते सान्त्वना ने सोचा, यदि विवाह बन्धन है तो मै विवाह न करूँगी। सखी द्रौपदी के बच्चे ही मेरे बच्चे होंगे। मै सखी को अकेला नहीं छोड सकती। महारानी माँ ने कितना विश्वास किया है मुझ पर। मै इस पचड मे नहीं पड़ूँगी। बाल सँवारते सँवारते सान्त्वना के हाथ से कघी गिर गयी। उसे हँसी आयी। जब भी कृष्णा के बालो मे कघी करते समय कघी गिर जाती थी तो महारानी कहती थीं—कृष्णा, आज जरूर कोई पाहुना आएगा।

अनायास ही द्रौपदी ने पूछा, 'सान्त्वना, आज कौन आएगा?' दोनो ही हँस पडी जैसे बचपन का कोई क्षण हाथ लग गया हो। द्रौपदी ने पूछा यह तुम्हारे कार्तिकेय का क्या हुआ? उसकी तुममे काफी रुचि लगती है। हमेशा पीछे पीछे आता रहता है।

सान्त्वना ने कहा, "देवी मुझे उसका उतावलापन अच्छा नही लगता।"

"तभी मेरे बालो को जोर से पकडकर सुलझा रही थी। जोर से सुलझाने पर कोई उलझन नहीं सुलझती।"

सान्त्वना ने सोचा, मै महारानी के बच्चे तो पालूँगी ही पर ब्याह भी कर लूँगी। यही ठीक है।

द्रौपदी ने मन ही मन सोचा—शीघ्र तैयार हो जाऊँ। महाराज आ गये तो आँखे लाल न होनी चाहिए। उसने सान्त्वना से कहा "मेरा काजल ले आ। आँख मे आँज लूँ।"

हिमालय की सुन्दर पर्वत-शृखलाएँ अर्जुन की आँखो म ठण्ड भर रही थीं। एकदम ऊपरी शिखरा पर जमी वर्फ स ठण्डी हवा के झाक आकर आखा का सुख दे रहे थे। आँख वन्द करने और खोलने मे अर्जुन का बहुत अच्छा लग रहा था। इतना सुख है। हिमालय म देखो, देखते ही रहो, कभी मन न भरे। जैसे प्रेमी को देखते-देखते मन नहीं भरता। अचानक द्रापदी का ध्यान आया। अव तक उसे उलूपी के सग रात व्यतीत करन की घटना पता चल गयी होगी। उलूपी के पुत्र होगा तो द्रौपदी का वह सपना भी भग हो जाएगा। द्रौपदी का पहला पुत्र ता महाराज युधिष्ठिर से ही होगा। यच्चा आन से सब खूब प्रसन्न हो जाएँगे। बच्चा आना जैसे जगत् का फिर भर जाना। द्रौपदी भी माँ बनकर पूर्ण तो होगी। कहते है माँ बन जाने पर स्त्री सिर्फ माँ बन जाती है उसके बाकी रूप उसी माँ के विराट् म समा जाते है।

अर्जुन न सामन देखा युरच के वृक्ष पर तोता-मैना अपनी भाषा म खूब बातें कर रहे थे। मना बढ़ चढकर वाल रही थी। अर्जुन ने सोचा—शायद तोता किसी ओर मैना का सग कर आया होगा। अर्जुन मुस्कराया। देह की भाषा क्षणिक ही सही पर अमिट छाप छोड़ती ह। अक्षरश समझ मे आती है। वोलने, सीखने, समझने की इच्छा जगती ह। इसका प्रवाह गगाजल न सही पर भीगता ता ह मनुष्य। उलूपी का क्षणिक सम्बन्ध ही कहाँ भूल पा रहा हूँ। इसी हिमालय पर ही कितनी बार वह द्रापदी क सग आ खडी होती हे। मने उलूपी को देखा ही कितना। ओर जितना देखा उसम भी वह कितनी थी। अधिक ता द्रौपदी ही थी।

अर्जुन तीव्रता से पहाडी की ढलान उतरने लगे। आँखो म ठण्डी बयार जल भर लायी थी। राह सूझ न रही थी। एक वृक्ष की टहनियाँ पकडकर नीचे उतरने लगे तो देखा किसी पक्षी के बच्चे चाककर चूँ चूँ करते हुए मुँह खोल रहे है। चुग्गा लिए माँ आ गयी है। अर्जुन मन्त्रमुग्ध होकर बच्चो के खुले मुँह देखता रहा। यही तो सृष्टि हे। यही हे माँ का सारा वल दूध चुग्गा। उलूपी का पुत्र भी ऐसे ही मुँह खालकर दूध माँगेगा।

अर्जुन को स्मरण हो आया। माँ कुन्ती कहती थी वचपन मे म उसे चिढाने के लिए छिप जाता था। वह खोजती खीजती चिन्ता करती तो बहुत अच्छा लगता। कितनी कितनी देर सामने न आता। वह रुआँसी होकर सबको पूछती तो बहुत खुश होता। माँ, म आजकल फिर छिप गया हूँ। कदाचित् यह कहना ठीक हागा कि भाग आया हूँ। भाग आया हू द्रापदी की बहकती दृष्टि से, भाग आया हूँ युधिष्ठिर के चेहर पर आती तृप्ति की लो से भाग आया हूँ भीम की आशा स ओर न जाने कितनी चीजो से भाग आया हूँ।

पता नही कब तक भागता रहूँगा। यह स्त्री जो मेरे भाइयो को सन्तोष दे सकी है मरे मन म क्या उपद्रव मचाती रहती हे?

चूँ चूँ की आवाज सुनकर अर्जुन ने देखा, चिड़िया आ गयी थी। अपनी चोच बच्चों के खुले मुँह मे डाल डालकर चुग्गा खिला रही थी। कुछ गिर भी रहा था। अर्जुन मुस्कराकर पहाड़ी की ढलान उतरने लगा। उसकी घुमन्तू प्रवृत्ति से सभी परिचित ह। पर यह भी जानते हैं कि वह यज्ञ मे जरूर सम्मिलित होता है। अर्जुन के पग शीघ्रता से उठने लगे। फिर राह के सिवा दृष्टि मे कुछ न रहा।

यज्ञ की ओर से आती हवनकुण्ड की सुगन्ध आर मन्त्रो के स्वर जगल को चीरते हुए चले आ रहे थे। अर्जुन तीव्रता से आश्रम की ओर बढने लगा।

हिमालय ऐसा नहीं है कि वहाँ से जी कभी उचाट हो। उसका नित नया रूप, रग बदलता स्वरूप हर मोड पर नयी आभा, कभी यह दृश्य कभी वह दृश्य नित नवीन छटा--मनुष्य को वहाँ से निकलने नहीं देती।

घुमक्कडी का यह सुयोग तो अर्जुन को अनायास ही मिल गया था। अर्जुन की इच्छा हुई--अपनी धरा के पोर-पोर को देखना चाहिए। हिमगिरि के बाद वहाँ के सभी तीर्थों के दर्शन करके अर्जुन नैमिपारण्य आये। हिमालय की पुत्रियाँ यहाँ-वहाँ राह रोके बह रही थीं। सभी नदियो मे स्नान करके अर्जुन कलिग पहुँचे। मन्दिर मठ, आश्रम, तपोभूमि सब पैरो से नापते हुए। कलिग के द्वार पर आकर कई सहायको और विप्रो से विदा लेकर अर्जुन गिरि महेन्द्र होते हुए मणिपुर पहुँचे।

मणिपुर के मन्दिरो के दर्शन कर ओर यज्ञादि म लिप्त रहकर अर्जुन के मन की भटकन को थोडा विराम मिला। वहाँ के राजा चित्रवाहन का बडा नाम सुना था। एक दिन उनके दर्शन करने गये तो वहाँ की राजकुमारी चित्रागदा को अर्जुन ने अचानक ही देख लिया। उस सुन्दरी को देखते ही अर्जुन ने जान लिया कि यह कन्या मेरी पत्नी बनने के योग्य है। उसने सोचा म इससे विवाह करूँगा। विधिवत् महाराज से मिलकर राजकुमारी को माँगना होगा। यही उचित हे। पर राजकुमारी की इच्छा कैसे जान पाऊँगा। यदि उसकी इच्छा न हुई तो अपमान होगा। पर समुद्र मे कूदना है तो छलॉग लगा देनी चाहिए। समुद्र अपनी इच्छा से पात्र को डुबोकर या किनारे पर लगाकर बचा सकता है। हाँ, यही ठीक है। अर्जुन न महाराज के पास जाकर अपना अभिप्राय बताया। राजा चित्रवाहन ने एक जिज्ञासु पिता की तरह पूछा 'आप किसके पुत्र है?"

अर्जुन ने कहा, "म कुन्तीपुत्र धनजय हूँ। पाण्डवा मे तीसरा भाई हूँ।"

महाराज चित्रवाहन ने विचार किया था कि मैं अपनी पुत्री का विवाह वहाँ करूँगा जहाँ जामाता मेरे घर मे ही रहे। उसने अर्जुन को सक्षेप म बताया।

'हे धनजय, बहुत दिनो पहले हमारे कुल म प्रभजन हुए थे। उनके कोई सन्तान न थी। उन्होने शिव की आराधना करके उन्हे प्रसन्न किया। शिव आशुतोष ठहरे। उन्होंने वरदान दिया, तुम्हारे कुल म सदा एक सन्तान होगी ताकि वश नष्ट न हो। तब से हमारे कुल में एक ही सन्तान होती है। मेरे भी यही कन्या चित्रागदा

ह। इस मन हमशा पुत्र ही समझा है। यदि आप इसस उत्पन्न पहला पुत्र मुझ दे द, जा मरा वश चलाये, तो मैं अपनी पुत्री का हाथ आपके हाथ म द दूँगा।" अजुन ने कहा, ठीक हे, ऐसा ही होगा।"

महाराज चित्रवाहन ने अपनी पुत्री का ब्याह बडी धूमधाम से अजुन के सग कर दिया। इसक बाद अर्जुन तीन वर्ष तक मणिपुर म ही रह। जब पुत्र पदा हुआ तब अर्जुन न अपनी पत्नी स कहा, 'चित्रागदा, यह पुत्र हमारा नहीं इस राज्य का है।" अपने पति से यह बात सुनकर चित्रागदा को बडा सन्तोष हुआ। उन्होंने राजकुमार का नाम बभ्रुवाहन रखा। अजुन ने चित्रागदा से कहा, "प्रिये जब तक तुम इसे बडा करोगी में तीर्थयात्रा पर जाना चाहता हूँ।"

चित्रागदा ने उदास होकर कहा "क्या म आपके साथ तीर्थाटन पर नही जा सकती?"

अर्जुन सोच मे पड गया। उसने कहा, "बभ्रुवाहन अभी बहुत छोटा है। वनवास की अवधि समाप्त होने तक यह बडा भी हो जाएगा ओर उसे यह भी मालूम हो जाएगा कि वह यहाँ का राजकुमार है, तब तक तुम्हारा इसके साथ रहना ही उचित है।"

'जो आज्ञा", कहकर चित्रागदा ने कहा, "तीर्थ यात्रा से शीघ्र लौटिएगा।"

अर्जुन न कहा, "देवी, यह देश इतना सुन्दर हे कि हर स्थान देखने की इच्छा होती है। यहाँ हर प्रदेश की अपनी भाषा, अपनी सस्कृति, अपना पहनावा अपना सौंदर्य अपनी विशेषता ह। म तो चाहता हू कि हर प्रदेश म जन्म लूँ ओर उसे अपनी मातृभूमि की तरह जानूँ। मुझे पृथ्वी से बडा मोह हे चित्रागदा।'

चित्रागदा मोहित होकर अर्जुन को देख रही थी। अर्जुन ने विदा लेते समय पत्नी से कहा, "देवी एक बात हमेशा स्मरण रखना। बभ्रुवाहन के पिता महाराज चित्रवाहन हे ओर मा महारानी।"

अजुन तीर्थाटन पर चले गये। अर्जुन की इच्छा दक्षिण म जाकर ऋषियो के आश्रम पुण्यस्थल मन्दिर आदि देखने ओर वहाँ की नदियो म स्नान करने की थी। राह म उसे बार बार चित्रागदा का स्मरण होता रहा। मन ही-मन अर्जुन न सोचा, यदि

द्रौपदी से पहले चित्रागदा से मिला होता तो ओर कोई कामना न करता। जव चित्रागदा 'जो आज्ञा' कहती हे तो प्रतीत होता हे म इस सुन्दर भारत देश का एकमात्र शासक हूँ। पर मेरे इस अपने भारत देश पर द्रोपदी एक उजाले की तरह छायी हुई है, ओर इस आकाश पर कभी रात्रि नही आती। पूरे अस्तित्व को अपने घेरे म लेनेवाली मेरी द्रौपदी अव तुम माँ होकर वह चाव से भरी छोटी वच्ची नही रहीं, जिसने राह मे मेरा उत्तरीय थामा था।

अजुन ने दक्षिण के तीर्थो के वारे मे कई वार सुना था। एक स्थान पर पूर्वकाल से कई ऋपिया, तपस्विया ने वहाँ तपस्या करके उसे पावन वना दिया था। वहॉ पॉच तीर्थ परम सुन्दर स्थान पर वने हुए थे। इतना रमणीक एकान्त स्थान देखकर अर्जुन ने सोचा, यहाँ तपस्वी क्या नहीं ह? इतना उजाड सा क्या ह? इससे सुन्दर स्थान तपस्या के लिए ओर कहाँ हो सकता हे? अर्जुन जिज्ञासावश वहॉ घूमते हुए यही वात जानने के लिए तपस्वियो से मिलने गये आर उन्होने ऋपियो से पूछा "आपने पाँच तीर्थो की इस सुरम्य स्थिति से मुँह क्यो मोड लिया हे? प्रकृति की गोद का इतना रमणीय कोना खाली रहे, यह आश्चर्य की वात हे।"

तपस्वियों ने बताया—"अर्जुन, उसका कारण हे। यहाँ जल के भीतर घडियाल रहते है। जव भी कोई ऋपि यहाँ तपस्या करने आता है या जल म स्नान करता ह तो घड़ियाल उन्हे जल मे खींचकर ले जाते है। फिर वडी यातनाएँ देते ह। इससे तपस्या भग हो जाती हे। तभी हमने वहाँ जाना छोड दिया हे।"

अर्जुन ने सुना तो उसे एक चुनाती सी लगी। उसने ऋपिया को प्रणाम करके उनसे विदा ली ओर फिर उसी स्थान पर जाकर जल मे उतर गया। स्नान करते-करते अर्जुन तट के साथ अति प्रसन्नता से केलि कर रहा था। तभी एक घडियाल ने उसका पेर पकड़ लिया। इस तरह पैर पकडे जाने पर अर्जुन ने उछल-कूद करके घडियाल को बाहर खींच लिया। जल से बाहर निकलते ही वह घडियाल एक सुन्दर स्त्री मे वदल गया। इस अनुपम सुन्दरी स्त्री को देखकर अर्जुन आश्चर्यचकित रह गया। उसने पूछा 'सुन्दरी तुम किस कारणवश जलचर बनकर इतने वर्षो से इस स्थान पर रही। क्या पूर्वकाल म किये पापो से यह दुर्गति हुई? कोन हो तुम?'

उस सुन्दरी ने विनम्रता से कहा, मै धनपति कुवेर की नित्यप्रिया वर्गा हूँ। मेरी ओर चार अति सुन्दर सखियाँ इस स्थान पर जलचर होकर जी रही ह। हमसे वहुत वडा अपराध हुआ था। हम सखियाँ एक समय मार्ग से कहीं जा रही थीं तो हमने एक वहुत सुन्दर तपस्वी को तपस्या म लीन देखा। उसके आस पास का मारा वनप्रदेश जैसे उसकी आभा स आलोकित हो रहा था। उसे देखकर हम सव मुग्ध हो गयीं और काम के वशीभूत होकर उसे लुभाने लगीं। हम हर तरह का कोशल करके हार गयीं पर तपस्वी को आकर्पित करने मे सफल न हुई। तत्पश्चात् उस व्राह्मण तपस्वी ने हम शाप दिया कि तुम सो वर्प तक यहीं घडियाल हाकर रहो।

हम सभी तुरन्त उससे क्षमा माँगती हुई उसकी शरण म जाकर उसके चरणो म गिर पड़ी। हमने कहा, शरणागत की रक्षा करना महान् व्यक्तियो का धर्म होता है। आप हमारे पापो को क्षमा करे। हमारी बहुत अनुनय विनय के बाद उन्होंने कहा, जब कोई श्रेष्ठ नर आपको जल स खींचकर बाहर ले आएगा, तब आप अपना वास्तविक स्वरूप पा जाओगी।

इसके पश्चात् हमे नारदजी ने आकर कहा, आप दक्षिण समुद्र तट के समीप पचतीर्थ के जलाशयो म जाकर रहो। वहीं पाण्डुकुमार वीर अर्जुन आकर आपका उद्धार करेगे। मेरी चार सखियाँ अभी जलाशय म ही है। हे धनजय, आप उन्हे भी इस घड़ियाल योनि से मुक्त करे।" अर्जुन बारी-बारी से सबको ऊपर खींच लाये। सभी सुन्दर स्त्रियाँ उनका उपकार मानती हुई वहाँ से प्रसन्नचित्त चली गयीं।

उसके पश्चात् तपस्वियों ने वहीं आकर तपस्या करनी शुरू की और अर्जुन को आशीर्वचन कहे।

तीर्थस्थान देखने और घूमने की अर्जुन की लालसा बढ़ती ही चली गयी। उसने सोचा यह वनवास तो दैव का प्रसाद है। अगर मै इन्द्रप्रस्थ मे ही होता तो द्रौपदी के साथ अपनी अवधि आने के दिन गिनता रहता या दुखी होता रहता। वह स्थिति बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण थी। न जी सको न मर सको। बस एक अपराध बोध के पहाड तले दबे रहो। पर उस स्थिति के लिए मै अपने-आपको ही सबसे बडा दोषी पाता हूँ। मे दृढ रहता तो कौन मेरी पत्नी को बाँट सकता था। तब न कहीं उलूपी होती न चित्रागदा।

उलूपी का सग तो धर्मसकट म हुआ। पर झूठ क्यो कहूँ? चित्रागदा को देखते ही लगा था यह मेरी पत्नी होने योग्य है। उनके जैसी पत्नी सौभाग्य से मिलती है।

अर्जुन को विचार आया—क्या मै सच मे भटक गया हूँ? आज यहाँ कल वहाँ, स्त्रियो के प्रति बढ़ता लालच मोह, यह सब क्या ह? कहीं म प्रतिशोध तो नहीं ले रहा? कहीं द्रौपदी को यह तो नहीं दिखा देना चाहता हूँ कि एक से एक सुन्दर स्त्री मेरी चाह करती है। कोई भी स्त्री मुझ नकार नहीं सकती। म इस युग का सबसे श्रेष्ठ धनुधारी अर्जुन हूँ। अर्जुन—द्रोण का प्रिय शिष्य।

चलते चलते अर्जुन एक वृक्ष के तने पर बैठ गया। फिर अनायास ही फूट फूटकर रोने लगा। क्यो रोया, यह तो जान न पाया। पर एकान्त मे घने जगल के एक वृक्ष के मोटे तने पर बैठकर रोने से उसके मन में घुमडे दुःख के बादल बरसकर थोडा हल्का कर गये। सिर्फ अहकार बना रहा। अर्जुन ने सोचा अहकार और स्वाभिमान की सीमा-रेखा कहाँ है? स्वाभिमानी तो मै हूँ? पर अहकारी भी हूँ।

तभी एक परिन्दा पेड से उडकर आकाश मे चला गया। अर्जुन ने सोचा शायद यह सब जानता होगा। द्रौपदी के बारे म अगर जानता होता तो जरूर पूछता। तब यह अहकार कहा था जब तुम्हारी पत्नी का बँटवारा हुआ? उसके पाँच टुकडे हो

गये। जब वह असहाय होकर आँखा ही-आँखो मे आर्तनाद करती पुकारती रही। तब मैं अनसुनी किये बैठा रहा? क्या नारदजी के आने से और सुन्द उपसुन्द की कथा सुनकर डर गया था मैं? या मेरे भाइयों के हृदय न मैले हो जाएँ इसीलिए चुप रहा। सुन्द उपसुन्द भी सगे भाई थे। उस अप्सरा के लिए कट मरे। कम से-कम उसे बाँटा तो नहीं। मैं क्या नहीं कट मरा अपनी द्रौपदी के लिए? कौन मुझे कुछ कहता? मैं ही कायर निकला। पर वास्तव मे यह सब देवताओं की चाल थी। चालों के कुचक्र मे देवताओं से आग कोई नहीं जा सकता। अर्जुन ने विचार किया—क्या द्रौपदी के बँटने मे भी देवताओ की कोई चाल हो सकती है? क्या उसे पाकर मैं अपना कर्तव्य भूल जाता? क्या मैं ऐसा अधम हूँ? नहीं ऐसा नहीं हो सकता था। द्रौपदी से तो मुझे बल ही मिलता। उसके न होने से म बलहीन हो गया हूँ। कायर हो गया हूँ। कृष्णा, मैं कायर भी तुम्हारे ही लिए हुआ हूँ। उलूपी ने मेरे सयम का बाँध तोड़ दिया। चित्रागदा उस बहाव में एक ठहराव लाने म सफल हुई है पर बाँध को तो तुम्हीं बाँधकर रखने में सक्षम थीं। कहाँ हो कृष्णा, इस समय मेरे किस भाई के पार्श्व में हो? यह सोचकर अर्जुन फिर एक पेड़ से लगकर फूट-फूटकर रो पड़ा।

कृष्णा, कहीं से भी हो आऊँ। मुझे शान्ति सिर्फ तुम्हारे पार्श्व म मिलती है। कदाचित् मै हर तरफ इसीलिए घूमता हूँ कि तुम्हारे पास आकर फिर शान्ति पा सकूँ। क्या इतना अशान्त हो गया हूँ मै? क्या बिखर रहा हूँ?

इन्द्रप्रस्थ मे द्रौपदी ने सुना था उलूपी के पुत्र हुआ है। तब उसे अधिक कष्ट न हुआ। फिर सुना चित्रागदा के भी पुत्र हुआ है। ओह यह क्या हो रहा है? मेरा पुत्र होता अर्जुन से—अर्जुन-जैसा छोटा अर्जुन। उसने कक्ष मे खेलते बच्चो को देखा किसी मे भी अर्जुन का कोई साम्य न था। युधिष्ठिर का पुत्र निरा अपने पिता पर था। वो वहीं खड़ा ठुनक रहा था। उसने उसे उठाकर चूमा, फिर कन्धे से लगाकर आँखा मे आती आँसुओं की बाढ को पी लिया। बालक ने माँ के सान्निध्य मे उसका काँपता हृदय सुनकर पूछा, "माँ क्या हुआ? द्रौपदी उसे थपथपाने लगी ओर फिर बोली, "तुम बडे हो गये हो न अब मेरे पास नहीं आते।" पुत्र थोडा हेरान हुआ। फिर बोला, "माँ म तो तुम्हारे पास ही होता हूँ। सान्त्वना मौसी सबको डाँटती रहती

है। फिर कहती है माँ को बोल दूँगी। पर तुम तो मेरी माँ हो न, मासी क्यों ऐसे डाँटती है?"

द्रौपदी सिर्फ यह सोच रही थी—अर्जुन पिता हो गये, मैं मा न हुई।

सान्त्वना ने भीतर आते सुना, "मैं माँ न हुई।" उसने घबराकर पूछा, "देवी स्वस्थ हो?"

द्रौपदी ने आँख खोल विस्मित होकर सान्त्वना को देखा फिर संयत होकर कहा, "इन बच्चों की माँ तो तुम हो, मेरे पास कहाँ आते है।"

"देवी बलशाली भीम के पुत्र को जन्म देने के बाद तुमने मुझ पर यह उपकार किया है कि मेरा एक क्षण भी मेरा नहीं रहा। तुम्हारे दूसरे पुत्र मुझे तंग नहीं करते पर यह तो सारा दिन मुझसे प्रश्नोत्तर करता रहता है। जो पुत्र अब तुम पैदा करोगी उसे मैं शुरू से ही हाथ के नीचे रखूँगी।"

द्रौपदी को हँसी आ गयी। उसने कहा, "मेरे पेट में बेटा ही है, ऐसा तुम कैसे कह सकती हो?"

"वही लक्षण है सारे जो हमेशा होते है। मक्खन खाती हो और झट से बेटा जनती हो।"

"तो क्या मलाई खाने पर बेटी पैदा करूँगी?" दोनों सखियाँ हृदय खोलकर हँस पड़ी। द्रौपदी ने बड़े प्यार से सान्त्वना से कहा, "मेरी बहन तुम क्यों कार्तिकेय को इतने चक्कर कटवा रही हो? कहो कब तुम्हारा ब्याह कर दूँ?"

'आर्य भीम का पुत्र ज़रा बड़ा हो जाए तो फिर सोचूँगी। तुम्हें तो वह मानता नहीं और मेरी दण्ड बैठक करवाता रहता है। वह कक्ष में आता है तो मैं घबरा जाती हूँ। उसके आदेश क्या कम होते है? एक पल चैन नहीं लेने देता। अब तुम्हारा आनेवाला बेटा भी ज़रा बढ़ने लायक होगा तब ब्याह के बारे में सोचूँगी। तुम अर्जुन के बच्चे की माँ बनोगी तो उसे सँभालना। वह अपने बाप की तरह धैर्यवान होगा।"

द्रौपदी एकदम उदास हो गयी। उसने कहा "अर्जुन के दो पुत्र हो गये सान्त्वना।"

"जानती हूँ महारानी।"

"सोचा था हम एक मार्ग से बहेंगे। पता नहीं कब मार्ग अलग हुआ?" द्रौपदी ने एकदम भावुकता को द्वार से मोड़ दिया। और सान्त्वना से कहा, "सान्त्वना तुम्हारे बच्चे होंगे तो मैं पालूँगी। मुझे बच्चे जनने का अभ्यास हो गया है अब पालने का सुख पाना चाहती हूँ।"

"कृष्णा स्त्री को बच्चा पैदा करने के लिए सिर्फ पुरुष का संग करना पड़ता है। उसे पैदा करना बड़ा करना, मनुष्य बनाना तो स्त्री का ही काम है। माँ की गोद में बच्चा ऐसे आता है जैसे टहनी पर फूल।"

द्रौपदी ने सान्त्वना को छेड़ते हुए कहा "मेरे इन बेटों से तुम्हें कार्तिकेय के

पास बैठने का समय कहाँ से मिलता है? आजकल बडी बुद्धिमानी की बात करने लगी हो।"

"धन्य हो देवी, सारा दिन इन बच्चों को खिलाते, बहलाते, नहलाते बीत जाता है। कार्तिकेय को देखने का समय भी है मेरे पास? भीम का पुत्र तो खाते खाते नाक मे दम कर देता है। सारा दिन ये ला, वो ला, मौसी दे न खाने को करता रहता है। धन्य है इसकी भूख! स्वाद का उतना लालच नहीं जितना पेट भरने का है। पेटू कहीं का।"

द्रौपदी ने हँसकर कहा, "चलो हटो मेरे पुत्र का भोजन गिनती रहती हो। मै भी सोच रही थी यह दुबला क्या हो रहा है।"

"हाँ देवी नजर तो उसे मेरी ही लगेगी। और पुत्र ही नहीं पिता को भी हमारे व्यजन बहुत पसन्द है। ये चाहते हैं म ही बनाऊँ। मेरा एक चक्कर पाकशाला मे और दूसरा बच्चा के पास। यहाँ ब्याह की किसे सूझती है? अब कार्तिकेय को लगने लगा है म ब्याह नहीं करूँगी।"

"ऐसा नहीं करना सान्त्वना, उसका हृदय टूट जाएगा।"

"हृदय तो उसका टूटता है ये समाचार सुनकर कि तुम अब एक और पुत्र की माँ बननेवाली हो।"

द्रौपदी सुख से मुस्करायी।

अर्जुन ने यज्ञ करने के उपरान्त पूर्णाहुति दी और हाथ जोड़कर आँखे मूँद लीं। उसने देखा एक पौधा जो कभी अकुर था बड़ा होता होता विशाल वृक्ष हो गया है। कितनी शाखाएँ, कितनी टहनियाँ, कितने पत्ते, कितने घोंसले कितने फल। वृक्ष माना बाँहे फेला फेलाकर उन्हें बुला रहा है। अर्जुन ने मन ही-मन उस वृक्ष को प्रणाम किया। फिर एक अँगूठे पर सामग्री लगाकर अपने माथे पर तिलक किया। उसे ध्यान आया मैने कितनी बार कल्पना की थी—युद्ध से लौटूँगा तो द्रौपदी अपने हाथों से आरती उतारेगी। चन्दन का तिलक लगाकर सारी देह सिहरा देगी। एक स्वप्न था जो स्वप्न मे ही विलीन हो गया।

अर्जुन ने ब्राह्मणो और ऋषियों को प्रणाम करके आकाश को देखा। वहाँ उठता

धुआँ फेलकर कहीं निलीन होता जा रहा था। सामग्री की सुगन्ध से पूरा वातावरण पावन हो रहा था। यज्ञमण्डप स अधजली लकड़िया के टूटकर काँच चटखने की आवाज़े आ रही थीं। आग की आँच अभी सब जगह व्याप्त थी। सबको प्रणाम करके अर्जुन अपने कक्ष मे गया। कमरे की उदासी अर्जुन ने भाँप ली। उसे लगा अब यहाँ से चलने के दिन आ गये लगते है। मन एकदम उचाट हो गया है। पता नहीं कैसी भटकन है यह। जब तक भागता रहता हूँ मन में एक ठहराव सा रहता है। ज़रा सा टिकाऊपन आते ही फिर भाग जाने की इच्छा होती है। क्या सारी आयु भागते ही बीतेगी। बारह बरस पूरे होते वहीं जाना है जहाँ से भागकर आया हूँ। सत्य से साक्षात्कार तो होगा ही। द्रोपदी प्रतीक्षा कर रही होगी। क्या पता भागने का शाप उसी ने दिया हो। उसे अधिकार है। जो भी शाप देगी मै स्वीकारूँगा। माथे पर चन्दन के टीके की तरह सजाऊँगा। उसका दोषी तो मै हूँ।

ये जीवन नहीं है। मन होता है गाण्डीव के सारे बाण बरसा दूँ, पर किस पर? किसको घायल करूँ? अर्जुन को क्रोध आया और सारे शरीर में व्याप्त हो गया। वह काँपने लगा। उसे आभास हुआ जैसे उसके भीतर का सारा आक्रोश रोम-रोम से निकलकर बाहर आ रहा है। अर्जुन को ध्यान आया एक बार चित्रांगदा के पास चलना चाहिए। बभ्रु अब बातें करने लगा होगा। महाराज को पिता कहेगा और महारानी को माँ। यह सुनकर मै निश्चिन्त हो जाऊँगा। पर अभी कई और स्थान देखने है। एक बार चित्रांगदा को मिल आऊँ तो कम-से-कम अपराध बोध से बच जाऊँगा।

मणिपुर की हरीतिमा देखते ही अर्जुन का मन प्रफुल्लित हो गया। हरे रंग के कितने ही विविधरूप हल्का हरा गहरा हरा गाढ़ा हरा मूँगिया हरा, हरा ही हरा। अर्जुन मुग्ध होकर देखने लगा। एकदम उसे इनमे अपने पुत्रों के चेहरे नजर आने लगे। इरावान को तो शायद फिर कभी न देखूँ। पर बभ्रुवाहन को अवश्य देखूँगा। जब आया था तब तुतलाता था। अब अवश्य स्पष्ट बोलता होगा। बड़ा हो गया होगा। इरावान तो सिर्फ उलूपी का पुत्र है, उसकी इच्छा से धरती पर आया है। मै तो निमित्त हूँ, पर पुत्र तो मेरा ही कहलाएगा।

बभ्रुवाहन के विषय में विचार करते-करते प्रफुल्लित होता रहा अर्जुन। मन ही-मन उसकी बातें स्मरण करता रहा। अब कैसा होगा? यह सोचता जा रहा था तो उसने पाया वह मणिपुर मे राजमहल के द्वार पर खड़ा है। सब स्वागत करने को आ गये है। अर्जुन एकदम प्रसन्न हो गया। चित्रांगदा अर्जुन को देखकर कमलिनी की तरह खिल उठी। अर्जुन इस तरह आ जाएँगे उसने कल्पना ही न की थी। बभ्रुवाहन आश्चर्यचकित होकर अर्जुन को देख रहा था। बाँस से बना अपना धनुष बाण उसने अर्जुन को देकर कहा, "लो।" और खिलखिलाकर हँस पड़ा। अर्जुन ने सोचा, मेरा पुत्र धनुष-बाण से ही तो खेलेगा।

चित्रागदा ने मुस्कराकर कहा, "बाँस का धनुष इसे पिताजी ने दिया है। और किसी खिलौने के साथ यह नहीं खेलता।"

अर्जुन प्रसन्न हुआ। उसने हाथ मे धनुष-बाण लेकर कहा, "प्रत्यचा खींचोगे?"

बालक एक जिज्ञासु की तरह देखने लगा। फिर उसने माँ से पूछा, "चित्ता ये तोन है?"

चित्रागदा ने उसे गले से लगाकर कहा, "ये अर्जुन है।"

बालक अर्जुन के हाथ स धनुष-बाण लेते हुए बाला, "ये मेला है।"

अर्जुन ने मुस्कराकर कहा, "ये तुम्हारा ही है। हम नहीं दोगे?"

बभ्रुवाहन ने कहा "नहीं, तुम जाओ।"

अर्जुन ने उसे उठाया, प्यार किया और कहा, "हम तुम्हारी माँ से मिलने आये है।" यह कहते ही अर्जुन को अपनी त्रुटि का आभास हुआ। बभ्रुवाहन ने कहा, "माँ उदर है। ये चित्ता है।"

अर्जुन प्रसन्न हुआ। चित्रागदा ने बभ्रुवाहन को समझा दिया था कि उसके माता पिता कौन है?

अर्जुन कुछ दिन वहाँ रहा। तो उसने यह जाना कि बालक को अभी चित्रागदा की बडी आवश्यकता है। भावनात्मक तरीके से वह उसी से जुडा है। महाराज और महारानी की राजकाज में लगे रहने पर आयु भी बढ़ रही है। चित्रागदा इस विषय म कुछ न कहे, पर वह बालक के सग ही रहना चाहती है। कुछ दिन वहाँ रहकर एक दिन अर्जुन ने चित्रागदा से कहा, "अभी हमारी तीर्थयात्रा और यायावरी समाप्त नहीं हुई। बीच में तुम्हे दखने की इच्छा हुई। यहाँ आकर पाया, बभ्रु अभी बहुत छोटा ह। इसे तुम्हारी आवश्यकता है। जब भैया युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ करगे तब तुम पिता के साथ इन्द्रप्रस्थ आना। अभी हमें कई ओर स्थान देखने है। फिर पता नहीं ऐसा सुअवसर मिले या न मिले। चित्रा, यह धरा इतनी सुन्दर हे कि जी करता है घूमता ही रहूँ। कहीं कोई स्थान दूसरे से नहीं मिलता और हर स्थान अद्भुत है।"

चित्रागदा उदास हो गयी पर उसने विचार करने के बाद कहा, "जैसी आपकी इच्छा।"

अर्जुन ने भी कुछ अनमने हृदय से विदा ली और मार्ग पकड लिया। मन मे सोचा यही जीवन-यात्रा है। जैसे राह मे इतने सुन्दर वृक्ष अद्भुत दृश्य, पहाड नदियाँ ओर उपत्यकाएँ छूट जाती हे वसे ही अपने बहुत प्रिय भी किसी-न किसी पडाव पर रह जाते है। अब पता नहीं मणिपुर कब आ पाऊँगा?

दक्षिण में समुद्र के उत्तरवर्ती तीर्थो की यात्रा करके अर्जुन पश्चिमी समुद्र के तटवर्ती तीर्थो की यात्रा पर निकल गया। तत्पश्चात् वह प्रभास क्षेत्र मे पहुँचा। प्रकृति के पास उठते-बैठते, सोते-जागते, पैदल चलते जैसे वह भी प्रकृति का एक हिस्सा हो गया था। जसे-जैसे वनवास के दिन समाप्त होते जा रहे थे अर्जुन के मन मे

एक उदासी सिर उठा रही थी। मुक्त था अर्जुन। एकदम मुक्त। अपने आश्रम में बैठकर, इसी बात पर विचार कर रहा था। अर्जुन इन दिनों प्रभास क्षेत्र में था। उसे वहाँ भगवान् कृष्ण के आने का समाचार मिला। दूतों से समाचार सुनकर उसे लगा—इसी समाचार की तो प्रतीक्षा कर रहा था मैं। प्रकृति ने अपने आँचल में इस तरह कसकर लपेट लिया था कि यह ध्यान भी कहीं लुप्त हो गया कि मेरे परम सखा श्रीकृष्ण ही हैं। उन्हीं के सान्निध्य में मेरी भटकन समाप्त होगी। वहीं मेरी ऊहापोह के उत्तर मिलेंगे। वही बताएँगे—क्या हमेशा अपराधबोध रहता है मुझे? क्यों हमेशा लगता है द्रौपदी के टुकड़े मैंने ही किये हैं? ये विचार मन से हटता ही नहीं। भाग रहा हूँ—भाग रहा हूँ। किससे भाग रहा हूँ, यह मुझे कृष्ण ही बता पाएँगे। मेरे मन की यह भटकन चित्रांगदा भी दूर न कर सकी। मेरे धधकते हृदय पर उसने फाहा अवश्य रखा पर पीड़ा कम नहीं हुई। पीड़ा छुप गयी है। कहीं घर बनाकर बस जाने की इच्छा नहीं होती। जिस द्वार से भी भीतर जाऊँ, चौखट पर द्रौपदी को खड़ा पाता हूँ। एक साये की तरह रहती है वह मेरे साथ। क्या मैं उस साये से भाग रहा हूँ। या साया ही मुझे पकड़ना नहीं चाहता। कैसी दुविधा है। यह सिर्फ प्रेम की दुविधा नहीं हो सकती। यह अधिकार पर छापा पड़ने की दुविधा है। यह दुविधा असहायता की है। अपने भाई तो मुझे प्राणों से भी प्रिय हैं। पर द्रौपदी तो मैं स्वयं हूँ। मेरे प्राण हर लेते, पर मेरी द्रौपदी सिर्फ़ मेरी रहती। मैंने उसे भिखारी की तरह नहीं, एक वीर की तरह स्वयंवर में प्राप्त किया है। मैंने उसे क्या बँटने दिया? यह सोचने का धैर्य मुझमें आज भी नहीं है। कौन रोकता है मुझे यह सब सोचने से? क्या माँ! हाँ माँ ही होगी।

अर्जुन की आँखें भरकर बहने लगीं। मन पर रखी चट्टान धीरे धीरे पिघलने लगी। अर्जुन ने जल ग्रहण करके हाथ मुँह धोया और कृष्ण की राह में आँखें बिछाकर बैठ गया। कभी भी आ जाएँगे कृष्ण। उस क्षण की प्रतीक्षा अर्जुन अपना रोम-रोम खोलकर करने लगा। मुँह से निकला "कृष्ण सखा पहले ही क्यों नहीं आ गये। तुम्हारा यह मित्र अर्जुन भाग-भागकर थक गया है।"

कृष्ण धीरे-से आकर द्वार पर खड़े हो गये। उन्होंने देखा अर्जुन की आँखें बन्द हैं पर मस्तिष्क पर बनती बिगड़ती लकीरें उसकी सोच की चुग़ली खा रही हैं। अर्जुन की उदास भंगिमा ज्यादा देर नहीं देख सके कृष्ण। उन्होंने जाकर उसे एकदम गले से लगा लिया। अर्जुन बिना कुछ बोले रोते रहे। कृष्ण का उत्तरीय भीगकर टपकने लगा। उनके हृदय के एकदम पास अर्जुन का हृदय बवण्डर की तरह उछल-कूद कर रहा था। दोनों मित्र मौन में मुखर हो रहे थे। अर्जुन बार-बार कृष्ण को भींचकर फिर हिचकियों में डूब जाते। कृष्ण ने कहा "अर्जुन अब मैं आ गया हूँ। चिन्ता का त्याग दो।"

"कहाँ थे कहाँ थे वासुदेव अपने अर्जुन की सुध ही नहीं ली।"

कृष्ण हँसकर बोले, "तुम सारी पृथ्वी नाप रहे थे। मैंने सोचा, हम भी पृथ्वी पर है, हमारी ओर भी देख लोगे।"

अर्जुन ने कहा, "पहले ही आ जाते मित्र, विचारा म भी नहीं आये। स्वयवर के समय सोचा था। द्रौपदी को लेकर आपके पास आऊँगा, पर वह अपने हिस्से म ही नहीं आयी। हिस्सों मे ही बँट गयी मेरी कृष्णा। कृष्ण, म कायर निकला। मैं धनुर्धारी अर्जुन, मैंने अपनी द्रोपदी की पुकार भी अनसुनी कर दी। तब से भाग रहा हूँ उसकी दृष्टि से जो हर स्थान पर मेरा पीछा करती है। भाग रहा हूँ उसके प्रश्ना से जिनके उत्तर मेर पास नहीं है। कभी-कभी लगता हे मै हत्या करके भाग रहा हूँ। बडा असहाय हो गया है अर्जुन। जो किसी के बाणो से पराजित नहीं हुआ वह कृष्णा के प्रश्ना से पराजित हो गया।"

कृष्ण ने अर्जुन के दोनो हाथ थाम लिये। फिर कुछ कहने को शब्द ढूँढ़ने लगे। क्या कहे जिससे अर्जुन शान्त हो जाए, जिससे अपराध-बोध पीछा छोड दे। फिर बोले कृष्ण "*शान्त हो जाओ अर्जुन! यह विधि का लिखा था।* देवी द्रौपदी ऐसा नहीं समझतीं जेसा तुम सोच रहे हो। वह तुम्हारे लिए बडी चिन्तित रहती हे। वह जानती हैं तुम लाटकर वहीं आओगे। बारह वर्ष बीतने को बहुत समय नहीं रह गया। युधिष्ठिर समेत तुम्हारे सभी भाई तुम्हारी प्रतीक्षा मे दिन गिनते ह। द्रापदी का सभी बहुत ध्यान रखते हैं। द्रौपदी तुम्हे बिलकुल अपराधी नहीं समझती तुम्हे भी अपने-आपको अपराधी नहीं समझना चाहिए।" कृष्ण ने अजुन को चुप देखकर आगे कहा "अजुन चुनौतियाँ तो बचपन समाप्त होते ही आरम्भ हो जाती है। चुनोतियाँ सभी के लिए ह, उन्ह झेल जाना ही जीवन है। आज मैंने तुम्हारे लिए कई विविध मनोरजक कार्यक्रम रखवाए हे। हम दोनो मित्र वहीं जाएँगे।"

अर्जुन एकदम प्रसन्न हो गया। तुरन्त उठकर कहा "जो आज्ञा प्रभु! आपको देखकर मेरे मन की सारी पीडा बह गयी है। कुछ दिन आपके सान्निध्य मे रहूँगा तो मन एकदम शान्त हो जाएगा।"

प्रभास क्षेत्र मे कृष्ण ओर अर्जुन दोना ही घूमने निकले। कृष्ण की आज्ञानुसार रैवत पर्वत खूब सजाया गया था। कई प्रकार के भोजन की व्यवस्था थी। भोजनोपरान्त नटो, नर्तको, गायको नृत्यागनाओं की कला का रसास्वादन करके दोनो मित्र विश्राम करने क लिए वापस पहुँचे। दोनो इतने दिना बाद मिले थे एक-दूसरे की नजरो से ओझल ही नही होना चाहते थे। बातो के घटनाओ के क्रम समाप्त ही नहीं हो रहे थे। कभी कोई सूत्र हाथ लगता कभी कोई छूट जाता। दोनो को लग रहा था जैसे जन्म-जन्मान्तरो के बाद मिले ह। बात समाप्त होते ही तुरन्त दूसरी बात का स्मरण हो आता। सोते-सोते अर्जुन फिर एकदम उठकर कोई घटना सुनाने लगता। कृष्ण ने कहा "अर्जुन अब तो हम बहुत दिन साथ रहेग। थोडा निद्रा को भी समय दो।"

अगले दिन के सूर्य ने दोनों मित्रों पर अपनी कृपादृष्टि डाली। हल्की हल्की धूप जरा सी तेज हुई तो कृष्ण अर्जुन दोनों एक साथ ही जगकर एक-दूसरे को देखने लगे फिर हँस पड़े। प्रभात आज बड़ी शीघ्रता में है।

कुन्तीपुत्र के स्वागतार्थ द्वारिका नयी बहू की तरह सजी थी। जब कृष्ण के साथ अर्जुन ने द्वारिका में प्रवेश किया तो लाखों की भीड़ उन्हें देखने को उमड़ आयी। लोग प्रसन्नता से अर्जुन और कृष्ण को देखकर हाथ हिलाने लगे। द्वारिका के सुन्दर लोग स्त्रियाँ बच्चे सब बहुत प्रफुल्लित दिखाई देते थे। रथ भीड़ में से स्वयं राह बनाकर चल रहा था। अर्जुन ने सोचा यह भी हो सकता था कि द्रौपदी मेरे साथ द्वारिका में आती। अब कहाँ है द्रौपदी? अपने बच्चों में वह मगन होगी। महाराज युधिष्ठिर के पार्श्व में बैठी वह इन्द्राणी से अधिक शोभायमान होगी। उसके होने से ही इन्द्रप्रस्थ की इतनी ख्याति है।

एक नि श्वास के साथ अर्जुन ने यह विचार झटक दिया। कृष्ण ने पूछा "किस सोच में हो धनजय क्या चित्रांगदा की स्मृति में हो।"

अर्जुन हँसे फिर कहने लगे "कृष्णा यह सौभाग्य किसी को नहीं देती मित्र। चित्रांगदा को जब भी चाहूँ पा सकता हूँ, पर द्रौपदी को समय की अवधि के परे देखना भी पाप है।"

"क्या पाना ही सब कुछ है अर्जुन? लोग कहते हैं मेरी सोलह हजार रानियाँ हैं। पर क्या सब मुझे पा सकी हैं। कभी-कभी तो लगता है खोना ही पा लेना है। इस जीवन में कितना कुछ है। रुक्मिणी है पर राधा भी तो है। रुक्मिणी मेरे महल की साम्राज्ञी है पर राधा मेरे हृदय में विराजमान है। हर वस्तु हर स्थान पर है। राधा को लोग दीवानी कहते हैं पर वह क्या दीवानी है यह मैं जानता हूँ। मैं उसे स्मरण नहीं करता। स्मरण तो उसे किया जाता है जो स्मृति से परे है जो स्मृति के खण्ड में ही रहता है उसे क्या स्मरण करे? राधा कृष्ण है और कृष्ण राधा है। मैं उसी के संग रहता हूँ। राधा को पाने के लिए मुझे उसके पास नहीं जाना पड़ता। वह मुझमें ही होती है।

अर्जुन यह जगत् है। जहाँ हर किसी को सब कुछ भुगतना पड़ता है। यहाँ नर और नारायण में कोई भेद नहीं है अर्जुन। तुम जो अपराध-बोध से भाग रहे हो। क्या तुमने कभी यह सोचा यदि द्रौपदी इस ब्याह से मना कर देती तब तुम क्या करते? अकेले तो तुम उससे ब्याह नहीं कर सकते थे। फिर पता नहीं उसका कहाँ ब्याह होता। यदि कुँआरी भी रहती तो भी तुम कहाँ उसे देख पाते। कहीं और ब्याह हो जाता तो समाचार भी न मिलता। अब जब इन्द्रप्रस्थ जाओगे द्रौपदी वहीं होगी तुम्हारी प्रतीक्षा में आरती का थाल सजाकर बैठी होगी। बस यही नहीं बदला है। बाकी क्या इन्द्रप्रस्थ वैसा ही है? सब बदल गया है। बच्चे बड़े होकर अस्त्र शस्त्र में व्यस्त हैं। अब तक तो सान्त्वना का भी ब्याह हो गया होगा। जाओगे तो जान

पाओगे समय कैसे आर कितना आगे चला गया ह। सिर्फ द्रोपदी वहीं खडी हे।"

अर्जुन ने कहा, "माधव, इसी बात के लिए अपराध-बोध होता हे। उसने मेरे लिए पाँच पतियो की पत्नी बनना स्वीकार किया, और म ही वहाँ नही हूँ। क्या सोचती होगी द्रोपदी? मने चित्रागदा से व्याह किया उलूपी का सग किया। भविष्य के गर्भ में क्या हे, कोन जाने? इस भटकन से कब छूटूँगा। हर घडी यही इच्छा होती हे कहीं भाग जाऊँ तो इस भटकन से मुक्ति मिले।"

कृष्ण ने कहा, "यह भटकन भी जीवन है, तुमने कुछ गलत नहीं किया अर्जुन। यदि इतने यज्ञ, इतनी तपस्या, इतनी आराधना करने के बाद भी तुम्हे अपराध-बोध है तो उसका एक ही अर्थ हे कि तुम बहुत भावुक ओर बहुत अच्छे व्यक्ति हो। इसीलिए तुम्हे हमेशा द्रोपदी के प्रति किये गये अपराध का बोध होता है, पर द्रोपदी तुम्हे अपराधी नहीं समझती।"

'मित्र, यदि वह सत्य ही मुझे अपराधी नही समझेगी तब भी यह जाएगा नहीं, कम हो सकता है। इतने वनों, पर्वतो, जलाशया जगलो, उपवनो की खाली एकाकी राहो मे घूमता रहा हूँ। वृक्षो के पत्तो मे भी वही दिखाई देती है। सच तो यह हे कि एकान्त म उसके सिवा कहीं भी कोई नहीं होता। जब आप उससे मिले थे तो कैसी थी, वह बताइए न माधव। उसकी बात सुनने की बडी इच्छा होती हे।"

द्रौपदी इन्द्रप्रस्थ की महारानी हे अर्जुन। उसके हृदय का आलोडन उसके चेहरे पर नहीं आता। वह सहज होकर सबको प्रसन्न करने मे लगी हे। उसके भाग्य स ईर्ष्या करते हें लोग। अर्जुन द्रोपदी जेसे प्रकृति हे। वह सिर्फ दोना हाथो से लुटाती है। खिलती है, महकती हे। तुम्हारी प्रतीक्षा भी करती हे। जो जिम्मेदारी उसने ली है उससे पीछे नही हटेगी।"

"और सान्त्वना ?"

"सान्त्वना उसके साथ परछाई-सी लगी रहती है। द्रोपदी के बच्चे उसे भी माँ जेसा स्नेह सम्मान देते ह। द्रोपदी को सान्त्वना का बडा सहारा है।"

"यह जानकर सुखी हुआ कृष्ण। द्रोपदी की वह बचपन की साथिन हे। अपना अन्तरग मित्र मिल जाने पर कोन सुखी नहीं होता? आपके दर्शन करके म कितना हल्का फुल्का हो गया हूँ यह म ही जानता हूँ। ऐसा लगता हे हृदय के सारे प्रश्नो के उत्तर मिल गये है। सारा आकाश साफ हो गया ह कहीं कोई दुविधा नहीं ह।"

कृष्ण प्रसन्न हो गये। उन्होने कहा 'अर्जुन द्वारिका में कल से उत्सव प्रारम्भ हो रहा है। तुम ओर म दोनो खूब घूमेगे।"

"द्वारिका वसन्त मे खिली प्रकृति की तरह सज रही है माधव। अपनी नगरी कितनी अपनी लगती हैं। मेरा भी हृदय इन्द्रप्रस्थ जाने को आतुर हो रहा है। माँ का देखे भाइयो को देखे भी कितने ही दिन हो गये। माँ भी मेरी चिन्ता करती होगी न मित्र?"

"हाँ अर्जुन, बुआ को तुम्हारी बहुत चिन्ता है। वह कुछ कहती नहीं पर अपना प्रिय पुत्र अर्जुन सदा उनकी चिन्ता का कारण रहता ह।"

रात्रि म अर्जुन पहले से हल्का होकर प्रय आश्वस्त होकर सोया। कितने वर्षो बाद सखा की बगल म उसी तरह नींद आयी जैसे अपन भाइया और माँ क सग आती थी। रात को सपन म भी कोई नहीं आया। जसे एक शिशु माँ के साथ सोता है वैस ही सोये रहे अर्जुन। पूरी तरह निश्चिन्त होकर।

अगले दिन सुबह स पहल बाधा का हल्का हल्का सगीत, लागा के उतावली म उठते पग, आवाज शखनाद पूजा की घण्टियाँ सबने मिलकर एक मधुर शार-सा कर दिया। अर्जुन न आँख खोली तो कृष्ण का सुन्दर मुख देखकर खिल उठा। अर्जुन ने तृप्त होकर कहा, "ऐसा लगता है जैसे वर्षो बाद घर आ गया हूँ। जैसे-जैसे परिवार स मिलन के दिन पास आ रहे ह म भरता जा रहा हूँ। अपने पूरे अस्तित्व में यह भावना लहराती रहती है।"

कृष्ण ने कहा "अर्जुन, तुम्ह पाकर मै भी बड़ा प्रसन्न हूँ। देवी रुक्मिणी को मैने कह दिया था कि अर्जुन के आने पर मै घर न आऊँगा। इतने वर्षो की एकत्रित घटनाएँ बात न जाने कब समाप्त हा।"

"क्षमा करना कृष्ण। यह तो देवी रुक्मिणी के प्रति अनजान म अन्याय हो गया। इस बात का ध्यान ही नहीं आया, आपको पाकर म कितना पूर्ण हो गया।"

"नहीं अर्जुन, ऐसे न सोचो। रुक्मिणी को मेरे कई अन्याय सहने पडते ह। पति तो मै उसका ही हूँ, पर सखा सखा के कई रूप ह जिनम तुम्हे मिलनेवाला रूप सबस मुखर है।"

"कृतज्ञ हुआ।" अर्जुन ने कहा तो कृष्ण बोले "यह प्रसन्नता हम दोना की है अर्जुन। अब हम नहा धोकर तैयार हो जाएँ। उत्सव को पूरा जीने के लिए शुरू से ही देखना होगा। इस उत्सव की प्रतीक्षा हम गोकुलवासी पूरा वर्ष करते ह। इस वर्ष म यह उत्सव तुम्हारी आखो से देखना चाहता हूँ।"

अर्जुन कृतार्थ हुआ। उत्सव मे जेसे सारा गोकुल ही सम्मिलित हो गया था। कृष्ण और अर्जुन जहा से भी निकलते सभी की दृष्टि उधर घूम जाती। दाना मित्रो के मन मे बचपन की स्मृतियाँ कोंध रही थीं। कभी दोनो एक-दूसरे का हाथ पकड़ लेत। कभी गलबहियाँ डालकर चलते। जेसे मेले मे और कोई भी कहीं भी न था। कृष्ण के साथ अर्जुन को देखकर लोग अनुमान लगाने लगते। फिर शीघ्र ही सबको मालूम हा गया कि ये कुन्तीपुत्र अर्जुन ह।

उत्सव मे स्त्रियाँ विभिन्न टोलियो मे घूम रही थी। रग बिरगे परिधाना मे स्त्रियाँ-युवतियाँ एक-दूसरी के ऊपर टहनिया की तरह गिरती पड रही थीं। यूँ लगता था बादल घिर आने पर मोरनियाँ पख फेलाये नृत्य कर रही हें। कहीं गधर्वो का गायन हो रहा था। कहीं मल्लयुद्ध मे दॉव पेच चल रहे थे कहीं नटो के करतब

कहीं वीणा की झंकार—हर दिशा से कई-कई स्वर मुखर हो रहे थे। उत्सव चरम सीमा पर था। गन्धर्वों का मधुर गायन सुन-सुनकर लोग झूम रहे थे। गायन के पण्डाल में बलरामजी अपनी पत्नी रेवती के साथ बैठे खूब मगन हो रहे थे। मदिरा की सुगन्ध कई दिशाओं से अपने नये तेवर और रूप के साथ बह रही थी। सभी गायन में झूम रहे थे।

अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा, "माधव चलो, हम भी यहाँ बैठकर गायन सुनते हैं।"

श्रीकृष्ण ने अर्जुन की तरफ देखा और मुस्कराकर बोले—"इस समय भैया मदिरा में डूबे हैं। हमें देखकर उन्हें अटपटा लग सकता है। फिर उत्सव में तो बैठने में नहीं घूमने में ही आनन्द है। चलो अभी तुम द्वारिका के नटों के करतब देखकर आनन्द पाओ।" अर्जुन और कृष्ण फिर मेले में गुम होने लगे। लहरों पर जैसे कोई कश्ती डूबती-उतराती है उसी तरह कभी मित्र यहाँ से दिखाई दे जाते, कभी वहाँ छुप जाते।

दोनों मित्र हाथ पकड़कर भीड़ को चीरते हुए जाते फिर कहीं खड़े होकर उत्सव की शोभा देखने लगते। कृष्ण का तो सब जाना-पहचाना था पर अर्जुन को सब नया ही-नया लग रहा था। इतने वर्षों बाद पास आती वनवास समाप्त होने की अवधि, इतने वर्षों बाद कृष्ण का सामीप्य-सुख, इतने वर्षों बाद द्रौपदी के बारे में खुलकर सारी बात जान लेने का सुख। अर्जुन बड़े प्रसन्न थे। तभी अर्जुन की दृष्टि बहुत सी युवतियों के झुण्ड पर पड़ी। उनके मध्य अपना भारी घाघरा सँभालती एक कन्या ध्रुवतारा की तरह शोभायमान थी। अर्जुन ठगा सा रह गया। पर वह ठगा हुआ ही कृष्ण का हाथ पकड़े उनके साथ यहाँ-वहाँ से खिंचता चला जा रहा था। मन में एक विचार भी कौंधा, क्या कृष्णा से सुन्दर भी कोई स्त्री है इस संसार में?

दोनों ही मित्र हर तरफ से उत्सव की शोभा देख रहे थे। जहाँ से निकलकर जाते वहीं फिर आकर एक-दूसरे को देखते और खिलखिलाकर हँस पड़ते। कृष्ण ने अर्जुन का हाथ पकड़ा और भीड़ से ज़रा-सा हटकर चलने लगे। सहसा कहा, "अर्जुन, लोग अपनी कल्पना से ही—देखो कितनी सुन्दर वस्तुएँ बना लेते हैं।"

सामने गेहूँ की बालियों को रँगकर एक सुन्दर पुष्पगुच्छ रचे एक ग्रामीण खड़ा था। अर्जुन ने कहा, "माधव गेहूँ बोकर उसे बड़ा होते देखना अपने-आप में पूरे ब्रह्माण्ड की रचना करना है। अंकुर फूटने के बाद गाढ़े हरे रंग में उसे बड़ा होते देखना, फिर हरे रंग से पीली होती गेहूँ की बालियाँ कैसे सोने के कुण्डल हो जाती है।"

कृष्ण प्रसन्न होकर कहने लगे, "अर्जुन हमारे इधर तो गेहूँ की बालियाँ कानों में लटकाकर बालाएँ बड़ी प्रसन्न होती हैं। लगता है जैसे सोने के कुण्डल ही कानों में झिलमिला रहे हैं। खुले खेतों में गेहूँ की बालियाँ भूनकर खाने का अपना अलग

ही स्वाद है। गेहूँ पककर जब अपनी मस्त सुगन्ध पूरी हवा म घोल देता है तब उसकी मस्ती को पूरी तरह पीने मै कई-कई बार खेतों म जाता हूँ। उन्ह देखना भी बहुत भला लगता है। किसान गेहूँ की बालियाँ मक्खन में भिगोकर रख देते हैं। मैं जाता हूँ तो अगारा पर भूनकर मुझे देते है। उसका स्वाद बड़ा अनूठा होता है। उसकी सुगन्ध से ही तृप्त हो जाता हूँ मै।"

यह कहकर जसे ही कृष्ण ने अर्जुन को देखा तो पाया कि अर्जुन का हाथ तो उन्हीं के हाथ में है पर उसकी दृष्टि युवतियो की चुहल करती टोली पर है। कृष्ण मुस्कराये। उन्हाने टोली को देखा तो पाया सबके मध्य तो उनकी बहन सुभद्रा खड़ी हैं। अर्जुन टकटकी बाँधे उसे ही मन्त्रमुग्ध होकर देख रहे हैं। कुछ समय तक कृष्ण भी अर्जुन को देखते रहे। फिर उन्होने कहा, "अर्जुन, यह सुभद्रा है। हमारी बहन।"

अर्जुन थोड़ा खिसियाने हुए फिर कहने लगे, "द्रौपदी से कम सुन्दर नहीं है सुभद्रा।"

"हमारी बड़ी लाडली बहन है यह। तुम तो भावातिरेक से उसे ही देखे जा रहे हो अर्जुन।"

अब अर्जुन पूरी तरह सजग होकर बोले "सखा मोह कई रूप बदलकर आता हे, भगा देने पर भी आता ही रहता है। उसे पहचानने में समय लग सकता हे पर होता वही है, एकमात्र माह।"

"अर्जुन मोह के सभी रूपा का अपना सौन्दर्य अपना वैशिष्ट्य हे। सुभद्रा बहुत सादा आर गुणा से भरपूर युवती हे। पर आश्चर्य अर्जुन इतने वना मे घूमकर प्रकृति को इतने पास से देखकर उसम एक होकर जिया हे तुमने, फिर भी ससार मे आसक्ति कम नहीं हुई यह जानकर म आश्वस्त हूँ। बताओ तो मित्र क्या भैया से बात करूँ?"

अर्जुन समझकर थोडा लाल पड गये फिर खिसियाकर कहा, "कृष्ण, वर्जित फल पर लालच होना तो स्वाभाविक है। द्रौपदी के सामने प्रस्तुत होनेवाली मरी पत्नी अगर सुभद्रा हो तो क्या कहना?" कृष्ण ने अपनी गर्दन हिलायी, फिर कहने लगे "लगता हे बात करनी ही पडेगी। मित्र घर आया हे उसे खाली भेज दे ऐसा नहीं होगा पर कुछ कठिन ही जान पडता है।

अर्जुन म अब विश्वास आ गया था। उसने कहा "आपके लिए कठिन कैसे हो गया माधव?"

"अर्जुन सुभद्रा का स्वयवर होनेवाला हे। स्वयवर मे तुम्हें ही माला डालेगी इसका क्या भरोसा इसलिए बलपूर्वक हरण के अतिरिक्त ओर कोई युक्ति नहीं सूझती।"

अर्जुन को लगा कृष्ण परिहास कर रहे ह। उसने कृष्ण को देखा तो उनके चेहरे से ऐसा कुछ आभास न हुआ।

"क्या अपहरण सम्भव है मित्र?"

कृष्ण कुछ देर चुप रहे फिर कहा, "पहले युधिष्ठिर से अनुमति लेने के लिए शीघ्रगामी दूतो को भेज देते है। उनकी अनुमति के वाद ही कुछ निर्णय लेना ठीक रहेगा।"

अर्जुन ने सम्मति मे सिर हिलाया तो कृष्ण ने कहा, "अर्जुन तुम्हारी भटकन समाप्त हो इसके लिए मे सुभद्रा का अपहरण करना भी अनुचित नहीं समझता। ओर अपहरण कोई नई वात नहीं हे। तुम्हे कोई दुविधा हो तो वताओ।"

"दुविधा क्या होगी? जो वात आप कहेग उसम दुविधा का प्रश्न कहाँ उठता है। पर यही विचार मन मे उठ रहा है कि जव दूत भेया युधिष्ठिर के पास पहुँचेगे तव महारानी द्रोपदी भी वहीं होगी। मेरे दिशाहीन हो जाने मे उसे कोई शक न रहेगा?"

कृष्ण हँसकर कहने लगे "तुम द्रौपदी से डरते हो, मुझे यह जानकर प्रसन्नता होती हे। फिर भी मे समझता हूँ अर्जुन, माँ हो जाने के वाद स्त्री का विराट् रूप प्रकट होता है। वह तुम्हे अव एक विगडेल वालक ही समझती होगी। ओर वालको को क्षमा करना कठिन नहीं होता।"

इस पर दोनो मित्र खिलखिलाकर हँस पडे। वातावरण हल्का हो गया।

कृष्ण ने कहा, "अर्जुन, युधिष्ठिर की आज्ञा के वाद सव अपने-आप ठीक हो जाएगा।"

अर्जुन अव थोडा उतावला हो गया था। उसके मन मे एक शका सिर उठा रही थी। कृष्ण से पूछा 'मित्र क्या आपके राज्य मे इतनी सुरक्षा के वीच सुभद्रा का अपहरण सम्भव होगा।"

'तुम्हारी शका तो सही है अर्जुन। पर मित्र जव सुभद्रा का अपना भाई ही अपहरण मे सम्मिलित होगा तो फिर चिन्ता काहे की। क्षत्रियो मे अपहरण निश्चय ही कोई नयी बात नहीं हे पर अपने भाई का अपहरण मे सम्मिलित होना निश्चय ही नया है। और फिर अपहरण करनेवाला यदि धनजय हो तो आपत्ति किसे हो सकती है।"

अर्जुन आश्वस्त हो गया।

"चलो अर्जुन, मै तुम्हे अपने अखाडे मे मल्लयुद्ध मे पारगत योद्धाओ को धूल चाटते और चटाते दिखाता हूँ।"

अर्जुन ने तुरन्त कहा, 'क्या भैया भीम को वुला लू?"

"नहीं सखा उसके विना भी सुभद्राहरण हो जाएगा। घर का भेदी कृष्ण तुम्हारे सम्मुख प्रस्तुत हे।"

एक बार फिर दोनो मित्र खिलखिलाकर हँसे तो आस पास के लोग खडे होकर देखने लगे। किसी को सन्देह भी नही हो सकता था कि सुभद्राहरण योजना पर विचार चल रहा हे।

चलते-चलते कृष्ण के हृदय म अपहरण की योजना रूप ले रही थी। अपहरण इस तरह जैसे परिजात की टहनी से हाथ बढाते ही फूल अपने-आप अर्जुन की झोली म आ गिरे। कहाँ किस प्रकार सुगमता से सुभद्राहरण हो सकता है।

सामने मल्लयुद्ध हो रहा था। योद्धा एक-दूसरे से दो साँपो की तरह लिपटे हुए थे। कोन सी टाँग किस योद्धा की है कोन-सा हाथ किसका है, यह जानना कठिन था। रात मे राशनी म चमकते शरीर कोध रहे थे। लोग साँस रोककर युद्ध देख रहे थे। कोई धूल चटा पाएगा या नहीं ये धूल को भी पता न था। उठापटक चल रही थी।

अर्जुन मोहित होकर देख रहे थे। कृष्ण ने प्रसन्न होकर सोचा—इतना सुदर्शन, इतना सुन्दर, इतना भोला, इतना बडा धनुर्धर अर्जुन हमारी सुभद्रा का पति होगा। कितनी सुखद कल्पना हे। पर कल्पना ही क्या, इस विचार को सत्य होना ही होगा। ओर अपहरण? कृष्ण के दिमाग मे योजना बनने लगी। सुभद्रा जब रैवतगिरि पर्वत पर पूजा करने जाती हे तब उसके साथ थोडे से सेनिक होत है। उसकी सखियों मे से अधिक तो अपहरण होते ही बेहोश हो जाएँगी। जब होश आएगा तब अर्जुन सुभद्रा को लेकर दूर जा चुका होगा। उसके रथ मे मे अपने सबसे शक्तिशाली घोडे लगवा दूँगा। वेसे अर्जुन को जीत सके ऐसा कोई सेनिक कहाँ है। कई तो उसका नाम सुनकर ही भय से काँपने लगेगे। पीछे जाने का तो प्रश्न ही नही उठता। जब तक अर्जुन के घोडो से उडाई धूल वातावरण मे रहेगी तब तक तो सेनिकों को होश भी न आएगा।

धूल तो कोई भी नहीं चटा पा रहा मित्र।"

यह अर्जुन था। वह एकदम मल्लयुद्ध मे व्यस्त योद्धाओ के दाँव पेच देख रहा था।

कृष्ण ने कहा, "चलो यहाँ से चल। कोई-न-कोई तो धूल चटा ही लेगा। इतना कोलाहल देह के रोम रोम से निकालने मे समय लगेगा।"

कृष्ण ने अर्जुन का हाथ पकडा ओर भीड मे से निकलने लगे। कहीं कोई, कहीं कोई दृश्य ही-दृश्य लोग-ही-लोग—जेसे इस आधी रात मे दिन अभी-अभी चढा हो।

अब भीड छँट गयी थी। आकाश पर मुक्त चाँद धरती की दूरी नाप रहा था। अर्जुन के मन मे सुभद्रा ही सुभद्रा आ जा रही थी। कई द्वन्द्व चल रहे थे। क्या सुभद्रा के पश्चात् कोई ओर स्त्री लाना चाहेगे अर्जुन। नहीं, नहीं यह कदापि न होगा। यह कृष्ण के प्रति भी पाप होगा। यदि सुभद्रा से व्याह हो जाए तो इसे इन्द्रप्रस्थ साथ ही ले जाऊँगा। सुभद्रा ही मेरी पत्नी हागी। सुभद्रा ही होगी जो सिर्फ सन्तान के लिए या पिता के उत्तराधिकारी क लिए ही मेरी न होगी। बिना किसी ओर कारण के या शर्त के मेरी पत्नी होगी सुभद्रा। पर सुभद्रा के हृदय म न जाने क्या होगा?

अपनी भटकन के साथ उसे उतना सुखी कर पाऊँगा जिससे सुभद्रा को अपहरण का कभी ध्यान न आए।

उलूपी, तुम मेरा बाँध तोडने मे सफल हुई। चित्रागदा मन के अनुकूल थी पर पुत्रमोह से कभी भी न निकल पायी पुत्र छोडकर इन्द्रप्रस्थ म रहना उसके लिए सम्भव नहीं हे। बभ्रुवाहन उसी के पीछे लगा रहता हे। बचपन मे उसका ही दूध पिया, उसी के सग सोता-बेठता है। कितना प्यारा बच्चा हे। उलूपी का इरावान अपना पुत्र होते हुए भी कहाँ देखा है मने। मेरा नाम तो सुभद्रा के पुत्र से ही चलेगा। देवी द्रौपदी सब समझ लेगी। कृष्ण कहते ह वह अब पूर्णतया माँ हो गयी हे। माँ तो उसे मेरे पुत्र की भी होना पडेगा। पता नहीं, उसी की प्रतीक्षा करती है मेरी कृष्णा।

कृष्ण ने कसकर अर्जुन का हाथ पकडा ओर कहा, अर्जुन, हमारे इधर कदम्ब के वृक्ष चाँद से होड लेते हे। कदम्ब को देखते ही बचपन आँखो क सामने आकर खड़ा हो जाता हे। कदम्ब की सबसे ऊँची टहनी पर बेठकर जब मे बॉसुरी बजाता था तो उसका स्वर हर चोखट पर खडा होकर द्वार खुलवा देता था। कदम्ब को देखते ही इच्छा होती हे ऊपर की टहनी पर जाकर बेठ जाऊँ। मक्खन खाने मे उतना आनन्द कहाँ था जितना मुँह पर लपेटने म। मैया देखते ही लाल हो जाती थी। चोरी भी करो तो माखन की करनी चाहिए।"

"सखा कितना सुन्दर स्थान है। कदम्ब, चॉद और धरती।"

"सबसे सुन्दर हमारी कुज गलियाँ ह अर्जुन। ऐसी कोई कुजगली नही है जहाँ मै न पहुँचा होऊँ। इन कुज गलिया का पत्ता-पत्ता कृष्ण को जानता हे।"

बचपन की यादों में विभोर कृष्ण बाते करते-करते काफी दूर निकल आये थे। उत्सव का कोलाहल अब एकदम शान्त लग रहा था। कृष्ण के मन म चाव था अपनी लाडली सुभद्रा को अर्जुन की पत्नी देखने का। अर्जुन के मन मे चाव था एक ऐसी पत्नी का जो सिर्फ उसकी हो जो हमेशा उसी के स्वागत में आँखें बिछाये रहे जिस पर सिर्फ उसका अधिकार हो।

आसमान पर चाँद भी जेसे उत्सव मे शामिल होने आया था। पूरे गोकुल पर आकाश की खिडकी से झाँकता चाँद अटकी हुई स्थिर पतग की तरह मुस्करा रहा था। अर्जुन ने देखा काफी दूर एक बहुत विशाल कदम्ब के नीचे एक स्त्री हाथ ऊपर उठा-उठाकर चाँद से कुछ कह रही थी। कृष्ण का ध्यान पता नहीं कहाँ पर था। जब दोनो मित्र चुपचाप चलते चलते थोडी दूरी पर रह गये तो एक मधुर आवाज़ बहुत धीमी पर स्पष्ट काना मे पडने लगी। प्रकृति की चुप्पी ओर चाँद की उपस्थिति में खोये कृष्ण वहीं ठिठककर खड़े हो गये। अर्जुन ने देखा--उनका मुँह एकदम कोमल हो गया था। वह भी कान लगाकर जसे उसी स्वर को सुन रहे थे जो अब ओर स्पष्ट सुनाई दे रहा था। अब अजुन को भी समझ आन लगा। स्वर कदम्ब

के नीचे से निकलकर जैसे पूरी धरती पर चाँदनी की तरह बिछ रहा था।

राधाकृष्ण।

राधाकृष्ण।।

राधाकृष्ण।।।

अर्जुन ने माधव को देखा। वह मुग्ध होकर स्वर सुन रहे थे। अर्जुन एकदम मोन हो गया। यह कोन-सा स्थान हे, किसका स्वर हे? कृष्ण तो मेरे सखा ह, यह राधा कान हे? कितनी देर दोना मित्र मन्त्रमुग्ध से खडे रहे। कुछ देर वाद कृष्ण ने अर्जुन को देखा। अर्जुन ने आँखा ही-आँखा मे पूछा—"ये कोन हे?"

'ये राधा है अर्जुन, जो कृष्ण भी हे। राधाकृष्ण, सम्भवत यही रह जाएगा।"

"ओर देवी रुक्मिणी?"

"वह मेरे राजमहल की महारानी हे अर्जुन! मेरे पल क्षण उसी के कहने से उठते बेठते ह। पर राधा तो मे स्वय हूँ।"

अर्जुन सोच मे पड गया। कृष्ण ने दूर आसमान की तरफ बाँहे फैलाये खडी राधा को देखा। वह भावविभोर होकर नृत्य कर रही थी। राधाकृष्ण राधाकृष्ण।

कृष्ण कह रहे थे "अर्जुन पत्नी का स्थान अपना है। परन्तु जो प्रेम करता है उसे अनदेखा करना पाप हे। राधा कृष्ण की दीवानी है। बाँसुरी के सात सुरों पर मोहित गोपियो से अलग हे। उसे कृष्ण की बाँसुरी से ही नहीं कृष्ण से भी मोह है। बावरी कहते ह उस लोग। घर नहीं जाती। यहीं भटकती रहती हे। कभी यहाँ कभी वहाँ। मुझे देखकर भी अनदेखा कर देती है। पता नहीं यह कोन से कृष्ण की राधा है अर्जुन।"

"पर आप क्या देवी राधा स मिलेगे नहीं।"

"किससे मिलूँ अर्जुन कृष्ण भी वही है ओर राधा भी वही है। इस समय तो म जाकर वहाँ खड़ा हो भी जाऊँ तो वह मुझे देखेगी नहीं। चलो अर्जुन वास्तविकता मे लोट आय। उत्सव म शायद हमें सब ढूँढ़ रहे होगे।"

द्वारिका से द्रुतगामी घाड़ो पर जा रहे दूत जब इन्द्रपुरी पहुँचे तब महाराजा युधिष्ठिर क पार्श्व म बैठी द्रौपदी बच्चा की बात उनको सुनाकर खूब जोर स हँस रही थी। तभी दूता ने आकर समाचार सुनाया।

"महाराज हमे वासुदेव कृष्ण ने भेजा है। वीर अर्जुन सुभद्रा से ब्याह करने क लिए आपकी अनुमति चाहते है?"

थाड़ी दर के लिए कक्ष म चुप्पी छा गयी। सयत होकर युधिष्ठिर ने कहा "जब भगवान् कृष्ण की अनुमति है तो हम क्या आपत्ति हो सकती है? इन्द्रप्रस्थ म देवी सुभद्रा का स्वागत हागा।"

दूत 'जो आज्ञा' कहकर चले गये। युधिष्ठिर ने द्रापदी का उतरा हुआ चेहरा देखा ता कहा "देवी तुम दुखी न हाओ। अर्जुन बचपन स ही हर काम तुरन्त कर

लेना चाहता हे, ओर उस पर हमेशा मेरी आज्ञा होनी चाहिए। सुभद्रा के आने से तुम्हे भी *एक अच्छी मित्र मिल जाएगी।"*

द्रौपदी ने कह दिया—"जी महाराज, ऐसा ही हो।"

इस समाचार से द्रौपदी आहत हो गयी पर उसे पहले-जेसा कष्ट न हुआ। उसने मन ही-मन सोचा अव धनजय सिर्फ मेरे नही रहे। एक घूँट पीकर उसने अतीत का द्वार वन्द कर दिया।

अर्जुन अपने मन मे हो रही ऊहापोह को छुपाने मे सफल न हो पा रहे थे। रह-रहकर कृष्ण की तरफ देखते। कृष्ण भी समझ रहे थे। पर वह पहले युधिष्ठिर का सन्देश जान लेना चाहते थे। उन्होने अर्जुन से कहा, "मित्र अपनी प्यारी वहन के अपहरण म म तुम्हारे साथ हूँ ओर कोई युक्ति समझ मे नहीं आती। सुभद्रा का स्वयवर भी जल्द ही होगा। अपहरण उसके पहले ही हो जाना चाहिए। धर्मराज की सम्मति के तुरन्त वाद ही अगली योजना पर विचार होगा। मेरी समझ मे यही आ रहा है कि जव सुभद्रा रैवतगिरि पवत पर पूजा करने जाएगी तव उसके साथ वहुत थोडे सैनिक होंगे। पूजा के वाद जव वह अपने रथ के पास आएगी, उसी समय तुम उसे अपने रथ पर विठाकर भगा ले जाना।"

अर्जुन की गम्भीर मुद्रा देखकर कृष्ण ने परिहास किया, "अर्जुन, अपनी बहन के अपहरण की योजना पहले कदाचित् किसी भाई ने न वनायी होगी। मुझे पूरा विश्वास है, सुभद्रा को पाकर तुम्हारी भटकन समाप्त हो जाएगी। मने सुभद्रा को बचपन से वडे होते देखा हे। ऐसी सुशील लडकियाँ वहुत कम होती है। उसने कभी अपने भाइयों से भी झगडा नहीं किया। अपनी वहुत लाडली बहन तुम्हे सोपकर म भी निश्चिन्त हो जाऊँगा अर्जुन। हम और पास आ जाएँगे। मेरी वहन को वडे यत्न से रखना।"

अर्जुन भावातिरेक मे कृष्ण के गले लगकर रो पडे।

कृष्ण ने कहा, "अव यही तय रहा। आज किसी भी समय दूत आ जाएँगे। कल ही का दिन अपहरण के लिए उपयुक्त रहेगा। धीरज रखो मेरे द्रुतगामी घोड़े हवा से वात करते हे।"

रैवतगिरि पर्वत पर पूजा करके सुभद्रा ने शीश झुकाया। फिर कहा, माँ, मेरे जीवन मे वही करना जो अच्छा हो। मेरे सिर पर हमेशा अपना हाथ रखना।"

माथा नवाकर सुभद्रा ने सिर उठाया तो सखियाँ पूछने लगीं, 'किसको माँग रही हो सखी, स्वयवर मे तो न जाने कितने राजकुमार आशा लेकर आएँगे।"

एक ओर सखी वोली आशा तो सवके मन म एक ही होगी पर हमारी सखी किसके गल मे वरमाला डालेगी यह तो स्वय विधाता भी नहीं जानते।"

वहुत साच समझकर डालना सखी। कृष्ण तुम्हे सभी राजकुमारा के वारे में

वताएगे। परन्तु अपनी समझ का भी प्रयोग करना, जहाँ वह अधिक जोर द वरमाला वही उठाना।"

एक सखी न चुहल की, "देखो सुभद्रा, जो मन को भा जाए वरमाला उसी गले म डालना। जो भी तुम्हारे स्वयवर म आएँगे वह सभी अच्छे कुल के राजकुमार हाग। कोई भी निणय सोचे-समझे वगेर न लेना। एक वार वरमाला पहनायी तो पूरा जीवन ही न्योछावर कर दिया।"

सुभद्रा का भय लगने लगा। मन म सन्दह के अकुर उपजने लगे। वह एकदम उदास हो गयी। उसकी सखियाँ अभी भी चुहल कर रही थीं। पर सुभद्रा ने सुनना वन्द कर दिया। स्वयवर को वहुत दिन नहीं रह गये है। क्या होगा, पता नहीं। योग्य व्यक्ति क गले म वरमाला डालूँगी या नहीं। अचानक वह साचन लगी व्याह करना क्या इतना आवश्यक हे। यहाँ से जाने का मैं सोच भी नहीं सकती। किसी एक अनजान व्यक्ति के लिए अपना घर, अपने माँ वाप, अपनी सखियाँ क्यो छोडनी पडती ह। ऐसा कोन व्यक्ति होगा जिसे वरने के वाद सव छोडा जा सके। माँ कहती हे पति को पाने क वाद सव छोड सकूँगी। पर पति केसा होगा? कितना कठिन निर्णय हे। आज माँ को जाते ही पूछूँगी। माँ किसके गले मे वरमाला डालू।

इसी तरह सोचती हुई सुभद्रा रथ की तरफ वढती जा रही थी कि अचानक दा सशक्त वाँहा ने उसे उठाकर रथ म डाला ओर रथ सरपट भागने लगा। उसने आँख वन्द कर ली। उसके कानो में स्वर आने लगे। उसकी उन्हीं सखिया के स्वर जो अव तक चुहल कर रही थीं।

सुभद्रा का अपहरण हो गया। सुभद्रा का अपहरण हो गया।

रथ भागा जा रहा था। सुभद्रा ने भय के मार आँख नहीं खोलीं।

सखियो के पास जव भागकर मुट्ठी भर सनिक आये तव तक रथ आँखा स ओझल हो गया। एक सनिक चिल्लाया, "अर्जुन अर्जुन ही है। सुभद्रा का अपहरण अर्जुन ने किया है।

सभी सेनिक स्तव्ध से वही खडे रह गये। रथ के पीछे भागना व्यर्थ था। पहले राज्य मे जाकर समाचार देना अधिक आवश्यक था।

रथ म वेठकर सुभद्रा की सभी सहेलियाँ आर भागते हुए सेनिक द्वारिकापुरी की तरफ दाडे आय। सवन सभा म आकर वताया कि केसे पलक झपकते ही अर्जुन सुभद्रा को रथ मे विठाकर आँख से ओझल हो गया। जव तक कोई समझ पाता क्या हुआ हे तव तक रथ हवा हो गया। अर्जुन की झलक ता रथ क मुडत ही दिखाई दी।

यह वात सुनते ही सवके चेहरे क्रोध से लाल हो गये। वलराम न कहा "अर्जुन का पीछा करके सुभद्रा को छुडाना चाहिए।"

एक सभासद बोला, "अर्जुन ने जिस थाली मे खाया, उसी मे छेद किया हे। इस तरह की नीचता क्षमा के योग्य नहीं है। हम इसे सहन नहीं करेगे।"

"हमारे घर में घुसकर अर्जुन ने हमारा अपमान किया है। इस तरह की वात कोई क्षमा नहीं करता।"

"चलो चलो, शीघ्रता से रथ जोडो। हमारे शस्त्र लाओ। आज अर्जुन हमसे वचकर नहीं जा सकेगा।"

पूरी द्वारिका मे हलचल मच गयी। हर कोई अर्जुन को बुरा भला कह रहा था।

वलराम न जव कोलाहल देखा तो कहा, "वीरो, जव तक इस विषय पर कृष्ण कुछ न बोलें उनकी सम्मति के विना काई भी निर्णय करना ठीक नहीं।"

ये सुनकर सव यादव एक-दूसरे का मुँह दखन लगे। वलराम ने कृष्ण से कहा, "कृष्ण आप मौन साधकर क्यो खडे हे। हमने अर्जुन की इतनी आवभगत तुम्हारे लिए ही की हे। हमारी ही वहन का उसने अपहरण कर लिया। उसने हमारा अपमान किया है। तुम्हारा निरादर किया है।"

कृष्ण ने वडे धैर्य के साथ कहा, "जहाँ तक मै समझता हूँ, अर्जुन ने हमारे कुल का सम्मान किया ह। सुभद्रा क स्वयवर म कुछ ही दिन रह गये हे। यदि स्वयवर म सुभद्रा अर्जुन के गले मे वरमाला न डालकर किसी ओर को वर लेती तो निश्चय ही अच्छा न हाता। अजुन ने यही सोचकर सुभद्रा का अपहरण किया होगा। अपहरण अनुचित विधान नहीं ह। ओर कोन शान्तनु कुल म अपनी कन्या न देना चाहेगा। अर्जुन स सम्वन्ध भाग्य से ही होता है। यदि हम सुभद्रा को छुडाने जाएँ आर हारकर लाट आएँ तो वड़ा अपमान होगा। हमे इसे देव इच्छा समझकर उन्ह लोटा लाना चाहिए। फिर शुभ मुहूत देखकर उनका व्याह कर देना चाहिए। इस तरह का व्याह न्यायसगत हे। मै तो यही समझता हूँ।"

यह कहकर कृष्ण ने अपनी वात समाप्त की।

सव एक-दूसरे का मुह देखन लगे। एक मुह स साधु शव्द निकलते ही सभी साधु-साधु करने लगे।

श्रीकृष्ण ने पॉसा पलटते ही शीघ्रता से कहा, "सव लोगो की सम्मति हो तो म रथ लेकर जाता हूँ ओर अर्जुन ओर सुभद्रा को ले आता हूँ।"

सबने कहा, "यह विचार अति उत्तम हे।"

श्रीकृष्ण ने यह सुनते ही अपना रथ जोतने को कहा ओर एकमात्र सारथी के साथ द्रुतगति से उसी मार्ग से चले जहाँ से अर्जुन गये थे। कृष्ण न सारथी को कहा "अर्जुन के घोडा के पदचिह्न देखते हुए चलना। यदि शीघ्रता से चलोगे ता अर्जुन को पा लेने मे समय नहीं लगेगा। यह पथ तो वैस भी वडा सरल हे।"

अर्जुन ने रथ दोडाते-दौडाते सुभद्रा को देखा। वह आँखे वन्द किये डरी हुई हिरनी की तरह चुपचाप वेठी थी। अर्जुन ने रथ थोडा धीमा किया, फिर कहा–

"देखो सुभद्रा, तुम्हारा अपहरण करने वाला म कुन्तीपुत्र अर्जुन हूँ। उत्सव म तुम्हें देखकर अपनी सुधवुध भूल गया। देवी आँखे खोलकर देखो। यदि म तुम्हारे लायक नहीं तो यहीं स रथ लोटाकर तुम्हे द्वारिका छोड आऊँगा। मे मिथ्या नहीं कहता। ऑख खोलकर एक वार देखो तो।"

सुभद्रा ने जरा-सी आँखे खोलीं फिर सकुचाकर दृष्टि नीचे कर ली। अर्जुन आश्वस्त हुआ। इसी माग पर एक घनी अमराई देखकर अर्जुन ने अपना रथ राक लिया। अमराई मे सुन्दर मखमली घास पर रथ का एक तकिया लगाकर सुभद्रा को वेठने को कहा फिर आराम से घोडो को खोलकर चरने के लिए छोड दिया। एक वृक्ष की तरह उसने पलाश के चोडे पत्तो का दोना वनाया। सामने वहती छोटी-सी नदी से जल भरकर दोना सुभद्रा के आगे रखकर कहा "देवी जल ग्रहण करो। देव इच्छा हुई ता शीघ्र ही हमारा व्याह हो जाएगा।"

सुभद्रा ने सकुचाकर दोना दोनो हाथा मे लिया ओर सारा जल एक ही साँस मे पी गयी। जल ग्रहण करके जेसे उसमे नये प्राण का सचार हुआ। उसने अर्जुन को देखा वो उसी को टकटकी लगाकर देख रहा था। सुभद्रा ने लाज से आँखे नीची कर लीं। अर्जुन ने कहा, "कुछ कहो देवि।"

सुभद्रा वोली "कुछ ही दिनो मे मेरा स्वयवर होनेवाला ह। आप वहीं आकर मुझे ले जाते।"

स्वयवर मे तुम मुझ वरमाला पहनाती या नहीं इस पर सन्देह हान के कारण ही तुम्हारा अपहरण करना पडा। म किसी मूल्य पर भी तुम्हे पाना चाहता था। देवी, मुझे विश्वास था तुम्हारे मन मे कोई ओर व्यक्ति न रहा होगा।"

सुभद्रा ने गर्दन झुकाकर कहा, "जिसका अपहरण अर्जुन कर उसे ओर किसकी कामना हो सकती है।"

अर्जुन ने कहा "मे आश्वस्त हुआ। दवी अपहरण के अतिरिक्त ओर कोई चारा न था। आशा है तुम क्षमा कर दोगी। अब मे वृक्षो से कुछ फल ले आता हूँ। तव तक तुम भी स्वस्थ हो जाओ। घोडे घास खाकर स्वस्थ हो जाएँगे फिर हम चल दगे। इस नदी मे इन्हे नहला भी दूँगा।"

अर्जुन ने घोडों को नहलाते समय नकुल सहदेव का याद किया। उन दानो को घोडो से कितना स्नेह है। सभी काम वही करते रहे। आज तो अर्जुन को ही घोडे नहलाने पड़ेगे। घोडे नहाकर घास चरने लगे तो अर्जुन भी नहाकर वहीं नदी को अर्घ्य देने लगा। उसके मन मे वनवास के समय देखीं पूरे भारत की नदियाँ घूम गयीं। गगा जो उन्हे अपने जल के आँचल म पूरी तरह लपट लेती थी। गगा को पता नहीं फिर कव देख पाऊँगा।

अर्जुन को सुभद्रा का ध्यान आया। वह तुरन्त एक ऊँचे वृक्ष पर चढकर फल उतारने लगा। उसके मन मे था कि कृष्ण अवश्य आएँगे। यदि सबकी सम्मति हुई तो कल तक यहीं ब्याह भी हो सकता है। वृक्ष की फुनगी ज़रा सी ऊपर थी। अर्जुन ने मोटी टहनियो पर अपना भार सँभाला और दूर राह पर तकने लगा। इतने दिन प्रकृति के साथ रहने से वृक्षो पर चढना-उतरना तो लगा ही रहता था। अर्जुन की जहाँ तक दृष्टि गयी मार्ग को देखा। हाँ कहीं बहुत दूर मार्ग पर धूल छायी हुई थी ओर एक रथ अवश्य आ रहा था। ऊपर ध्वज तो कृष्ण का ही होना चाहिए। अर्जुन प्रसन्न होकर वृक्ष से थोडा नीचे उतरा और पके हुए फल उतार-उतार कर उत्तरीय मे भरने लगा।

कृष्ण अवश्य उन्हें लेने आ रहे है। सारथि के साथ अकेले कृष्ण के आने का अर्थ हे अपहरण को मान्यता मिल गयी है। मनोरथ सफल हो गया लगता है। अर्जुन प्रसन्न मन से धीरे-धीरे वृक्ष से नीचे उतरा। नदी मे जाकर फल धोये और सुभद्रा के पास लोट आया। उसने देखा—सुभद्रा निश्चिन्त होकर ऊँघ रही थी।

अर्जुन की पदचाप से जगी तो अर्जुन ने फलो से भरा उत्तरीय उसके आगे फेला दिया। ताजा धुले फल देखकर सुभद्रा खिलखिलाकर हँस पडी। अर्जुन ने कहा, "यही फल मिले, देवी चलिए खाएँ।"

सुभद्रा ने कहा, "आप भी लीजिए न, भूख तो आपको भी लगी होगी। इतना तेज़ रथ दोड़ाने के बाद भूख तो लगेगी ही न।"

फल खाते-खाते अर्जुन के कान रथ की आवाज़ पर ही लगे थे। थोडी ही देर में सुदूर से आती आवाज़ कानो मे पडने लगी तो अर्जुन की आँखें चमक उठीं। सुभद्रा के कानो में भी रथ की आवाज़ पडी तो उसके हाथ से फल छूट गया। अर्जुन ने कहा, "कोई भय नहीं है देवी। हमे स्वय श्रीकृष्ण लेने आ रहे है। कल तक आप अर्जुन की पत्नी होगी।"

"भेया ही है, आपने कैसे जाना?" सुभद्रा ने लाल पडते हुए कहा।

मने वृक्ष की फुनगी हटाकर बहुत दूर से आता उनका रथ देख लिया था। चलो हम नदी मे हाथ-मुँह धो आएँ।"

सुभद्रा बोली "यदि भैया न हुए तो?"

"वही है, परन्तु यदि न भी हुए तो अर्जुन की भावी पत्नी को किसी से भय खाने की आवश्यकता नहीं है।" अर्जुन ने कहा।

श्रीकृष्ण राह म घोडा के खुरो के निशान देखते-देखते जब अमराई के पास पहुँचे तो सारथि को रुकने को कहा। उन्होने सोचा इस स्थान से अधिक सुरम्य स्थान आर कौन-सा होगा जहाँ अर्जुन सुभद्रा को लेकर रुकेगा। रथ से उतरकर वह चलने लगे तो नदी का स्वर भी सुनाई दिया। कभी बचपन में यहाँ आये अवश्य हागे। श्रीकृष्ण इधर-उधर देख रहे थे तभी अर्जुन आकर उनसे लिपट गये।

श्रीकृष्ण ने कहा, "मेरे हृदय मे यही बात आ रही थी कि तुम अवश्य इसी अमराई मे रुके होगे। इससे सुन्दर स्थान इस राह म कहीं नहीं ह। मैं अकेला ही आया हूँ। सभा मे बडा शोर शराबा हुआ पर अब सब ठीक है। कल तक आप मेरे बहनोई हो जाएँगे।"

अर्जुन ने विनम्रता से कहा "सब आपकी कृपा है माधव जिसके साथ आप हा, उसका अहित नहीं हो सकता।"

कृष्ण बोले "इस कृपा का अन्त यहीं कर दीजिए। यदि भैया को मालूम हो गया कि सुभद्रा के अपहरण म मेरा ही मुख्य हाथ है ता क्षमा कभी न मिलेगी। हो सके ता मेरी बहन को भी नहीं बताइएगा। उसे समझ भी नहीं आएगी कि मैंने ऐसा क्या किया। पर सच तो यह है कि ये मैंने उसी के लिए किया। मेरी लाडली बहन को इससे अच्छा पति नहीं मिल सकता था। अब चलिए सुभद्रा के पास, वो अवश्य भयभीत होगी।"

सुभद्रा ने श्रीकृष्ण को अर्जुन के सग आते देखा ता बडी हर्षित हुई, फिर बोली 'भैया आप अपनी बहन के अपहरणकर्ता के साथ कैसे गलबहियाँ डाले आ रहे है?"

कृष्ण न बहन से कहा, "सुभद्रा, ऐसा अपहरणकर्ता क्या हर किसी के भाग्य म ह? म ऐसा बहनोई पाकर कृतार्थ हुआ। म सर्वसम्मति से आप लोगो को लेने आया हूँ। शुभमुहूर्त देखकर इस अपहरणकता के हाथ म अपनी बहन के स्नेह की बेडी डाल दूँगा ताकि यह इधर-उधर भटकता न रहे।"

सुभद्रा लजा गयी। तो कृष्ण ने कहा, 'वेसे इसे बाँधकर रखना बडा कठिन है। रख सकोगी सुभद्रा, यह मेरा बडा प्रिय मित्र हे।

सुभद्रा ने गर्दन नीची कर ली। अर्जुन ने कृष्ण के सारथी को कहा "मेरा रथ जोत दो।"

कृष्ण कहने लगे, "तुम सुभद्रा के साथ मेरे रथ मे आ जाओ। आज तुम्हारा सारथी म बनूँगा। तुम्हारा रथ यह सारथी ले जाएगा।

कृष्ण अर्जुन ओर सुभद्रा रथ मे बैठकर उसी राह से जाने लगे, जिस मार्ग से आये थे। आते समय कितने सशय कितने ऊहापोह मे थी सुभद्रा ओर अब कितनी आश्वस्त थी। कृष्ण साथ थे, अर्जुन साथ थे लेकिन मन घोडो की गति के समान ही भाग रहा था। दोनो मित्र बातो मे व्यस्त थे। सुभद्रा सुन रही थी।

कृष्ण ने कहा, कितनी देर तो सभा रोष से जलती रही। सभी लोग तुमसे क्रोधित थे पर तुमसे लोहा लेनेवाला भी उन्हे मिल न रहा था। लोगो ने कहा कि अर्जुन कृष्ण का मित्र हे उसकी राय लना बडी आवश्यक है। जब मेरी सम्मति पूछी तब उन्ह ज्ञात हुआ कि पाण्डवो से सम्बन्ध बनाकर उनका सम्मान ही होगा और अपहरण तो हो ही चुका है। भलाई इसी म हे कि दोनो का ब्याह करवा दिया जाए।"

दोनो मित्र हँसने लगे। रथ भाग रहा था। सुभद्रा के विचार भी भाग रहे थे।

यदि अजुन के स्थान पर कोई ओर अपहरण कर लेता तो क्या मेरा ब्याह उसी से हो जाता या कृष्ण इसी तरह सहज होकर मुझे लेने आ जाते। सुभद्रा को भय होने लगा। घर पहुँचकर क्या कहूँगी। मेरी सखियाँ, जिनके सामने अर्जुन ने मेरा अपहरण किया, उन्हे क्या कहूँगी म? पर मेरा दोप कहाँ हे? फिर उसे आगे की सोचकर भय लगने लगा। अब तक तो द्वारिका म सब जान चुके होगे कि सुभद्रा का अपहरण हो गया है। पर अर्जुन का नाम सुनकर सब प्रसन्न भी होगे। अर्जुन से ब्याह होना निश्चय ही पूर्व जन्मो का कोई फल है। स्वयवर मे पता नहीं म किसको जयमाला पहनाती। अपहरण का पता चलने पर कितने ही राजकुमारो की आशाओ पर पानी फिर जाएगा। मे तो जयमाला उसी को पहनाती जिसे भेया कृष्ण कहते। उन पर मुझे अगाध विश्वास हे। कितनी सहजता से भेया कृष्ण ने अर्जुन को गले लगा लिया। उनकी अनुमति हे तो म निश्चय ही सुख पाऊँगी। पर अजुन की दूसरी स्त्रियाँ विशेषकर देवी द्रोपदी क्या सोचेगी?

अधिक सकोच तो देवी द्रोपदी से ही होता हे। पर मेरा इसमे क्या दोप हे? मे तो उनके घर म सध लगाने नहीं गयी। अर्जुन अपहरण न करते, तो म निश्चय ही किसी ओर की पत्नी होती। सुभद्रा की आँखे भर आयीं, शिशु जेसे मुख पर चिन्ता की रेखाएँ उभर आयीं।

कृष्ण न रथ चलाते चलाते पीछे मुडकर देखा। इतनी देर तक तो कभी चुप नहीं बैठती सुभद्रा, फिर उसे देखकर पूछा, 'किस चिन्ता मे डूबी हे मेरी सरला बहन।"

सुभद्रा ने दृष्टि ऊपर की तो पाया कि अर्जुन भी उत्सुकता से उसी को देख रहे हे। सुभद्रा को लाज लगी। कृष्ण ने फिर पूछा "क्यो भय लग रहा हे? तब तो रथ मे बैठकर आ गयी, अब क्या डर रही हो?"

सुभद्रा ने कहा "भैया में स्वय नहीं आयी थी। इन्होंने मुझे उठाकर रथ म डाल लिया मुझे पता भी नही चला ये केसे हो गया? सच कहती हूँ।"

कृष्ण ओर अर्जुन दानो खिलखिलाकर हँस पडे।

कृष्ण बोले, "मरी इस बहन का बडा भय लगता है। बचपन मे जब म और भेया बलराम इसका गुडियाघर ऊपर नीचे कर आते थे तब भी ये कुछ नहीं कहती थी। भय से रोने लगती थी। फिर हम मैया खूब डाँटती थी। इसे सताने म बडा अच्छा लगता था।"

अर्जुन न पुलकित होकर कहा "आप अपनी दुष्टता म फिर भी कब हारते होंगे।"

कृष्ण ने घोडों की रास सँभालते हुए कहा "हम दोनो भाइ इसको छेडत-छेडते थक जाते थे पर यह कुछ न कहती थी। फिर हमने ही थककर इसे तग करना छोड दिया।"

श्रीकृष्ण ने कहा 'मेरे हृदय मे यही बात आ रही थी कि तुम अवश्य इसी अमराइ म रुके होगे। इससे सुन्दर स्थान इस राह मे कहीं नहीं है। म अकेला ही आया हूँ। सभा मे बडा शोर-शराबा हुआ पर अब सब ठीक है। कल तक आप मेरे बहनोई हो जाएँगे।"

अर्जुन ने विनम्रता से कहा "सब आपकी कृपा है माधव, जिसके साथ आप हो उसका अहित नहीं हो सकता।"

कृष्ण बोले, "इस कृपा का अन्त यहीं कर दीजिए। यदि भैया को मालूम हो गया कि सुभद्रा के अपहरण म मेरा ही मुख्य हाथ है तो क्षमा कभी न मिलेगी। हो सके तो मेरी बहन को भी नहीं बताइएगा। उसे समझ भी नहीं आएगी कि मैंने ऐसा क्या किया। पर सच तो यह है कि ये मैंने उसी के लिए किया। मेरी लाडली बहन को इससे अच्छा पति नहीं मिल सकता था। अब चलिए सुभद्रा के पास वो अवश्य भयभीत होगी।"

सुभद्रा ने श्रीकृष्ण को अर्जुन के सग आते देखा तो बडी हर्षित हुइ, फिर बोली, 'भैया आप अपनी बहन के अपहरणकर्ता के साथ कैसे गलबहियाँ डाले आ रहे हैं?"

कृष्ण ने बहन से कहा, "सुभद्रा, ऐसा अपहरणकर्ता क्या हर किसी के भाग्य मे है? मैं ऐसा बहनोई पाकर कृतार्थ हुआ। म सर्वसम्मति से आप लोगो को लेने आया हूँ। शुभमुहूर्त देखकर इस अपहरणकर्ता के हाथ मे अपनी बहन के स्नेह की बेडी डाल दूँगा ताकि यह इधर-उधर भटकता न रहे।"

सुभद्रा लजा गयी। तो कृष्ण ने कहा "वैसे इसे बाँधकर रखना बडा कठिन है। रख सकोगी सुभद्रा यह मेरा बडा प्रिय मित्र ह।"

सुभद्रा ने गर्दन नीची कर ली। अर्जुन ने कृष्ण के सारथी को कहा, "मेरा रथ जोत दो।'

कृष्ण कहने लगे "तुम सुभद्रा के साथ मेरे रथ मे आ जाओ। आज तुम्हारा सारथी मैं बनूँगा। तुम्हारा रथ यह सारथी ल जाएगा।"

कृष्ण अर्जुन ओर सुभद्रा रथ मे बेठकर उसी राह से जाने लगे, जिस मार्ग से आये थे। आते समय कितने सशय कितने ऊहापोह मे थी सुभद्रा ओर अब कितनी आश्वस्त थी। कृष्ण साथ थे अर्जुन साथ थे लेकिन मन घोडा की गति के समान ही भाग रहा था। दोनो मित्र बातो मे व्यस्त थे। सुभद्रा सुन रही थी।

कृष्ण न कहा, कितनी देर तो सभा रोष से जलती रही। सभी लोग तुमसे क्रोधित थे पर तुमसे लोहा लेनेवाला भी उन्हे मिल न रहा था। लोगो ने कहा कि अर्जुन कृष्ण का मित्र है, उसकी राय लेना बडी आवश्यक है। जब मेरी सम्मति पूछी तब उन्हे ज्ञात हुआ कि पाण्डवा से सम्बन्ध बनाकर उनका सम्मान ही होगा ओर अपहरण तो हो ही चुका है। भलाई इसी मे ह कि दोनो का ब्याह करवा दिया जाए।"

दोनो मित्र हँसने लगे। रथ भाग रहा था। सुभद्रा के विचार भी भाग रहे थे।

यदि अर्जुन क स्थान पर कोई और अपहरण कर लेता तो क्या मेरा व्याह उसी से हो जाता या कृष्ण इसी तरह सहज होकर मुझे लेने आ जाते। सुभद्रा को भय होने लगा। घर पहुँचकर क्या कहूँगी। मेरी सखियाँ जिनके सामने अर्जुन ने मेरा अपहरण किया, उन्ह क्या कहूँगी मै? पर मेरा दोप कहाँ हे? फिर उसे आगे की सोचकर भय लगने लगा। अव तक तो द्वारिका मे सब जान चुके होगे कि सुभद्रा का अपहरण हो गया है। पर अर्जुन का नाम सुनकर सव प्रसन्न भी हागे। अर्जुन से व्याह होना निश्चय ही पूव जन्मा का कोई फल हे। स्वयवर मे पता नहीं म किसको जयमाला पहनाती। अपहरण का पता चलने पर कितने ही राजकुमारा की आशाआ पर पानी फिर जाएगा। मैं तो जयमाला उसी को पहनाती जिसे भेया कृष्ण कहते। उन पर मुझे अगाध विश्वास है। कितनी सहजता से भेया कृष्ण ने अर्जुन को गले लगा लिया। उनकी अनुमति है तो म निश्चय ही सुख पाऊँगी। पर अर्जुन की दूसरी स्त्रियाँ विशेषकर देवी द्रापदी क्या सोचेगी?

अधिक सकोच तो देवी द्रौपदी से ही होता है। पर मरा इसमे क्या दोप है? मैं ता उनके घर में सध लगाने नहीं गयी। अर्जुन अपहरण न करते ता म निश्चय ही किसी आर की पत्नी हाती। सुभद्रा की आँख भर आयीं, शिशु जैसे मुख पर चिन्ता की रखाएँ उभर आयीं।

कृष्ण न रथ चलात चलाते पीछ मुडकर देखा। इतनी देर तक तो कभी चुप नहीं वैठती सुभद्रा फिर उसे देखकर पूछा, "किस चिन्ता म डूबी हे मेरी सरला वहन।"

सुभद्रा ने दृष्टि ऊपर की ता पाया कि अर्जुन भी उत्सुकता से उसी को देख रहे ह। सुभद्रा को लाज लगी। कृष्ण ने फिर पूछा "क्या भय लग रहा है? तव तो रथ म वैठकर आ गयी, अव क्या डर रही हो?

सुभद्रा ने कहा, 'भया मै स्वय नहीं आयी थी। इन्होने मुझे उठाकर रथ म डाल लिया मुझे पता भी नही चला ये केस हो गया? सच कहती हूँ।"

कृष्ण और अर्जुन दोनो खिलखिलाकर हस पडे।

कृष्ण वोले "मेरी इस वहन को वड़ा भय लगता हे। वचपन मे जव म ओर भेया वलराम इसका गुडियाघर ऊपर नीचे कर आते थे तव भी ये कुछ नहीं कहती थी। भय से राने लगती थी। फिर हमे भया खूव डॉटती थी। इसे सताने मे वडा अच्छा लगता था।

अर्जुन ने पुलकित होकर कहा, "आप अपनी दुप्टता म फिर भी कव हारते हागे।"

कृष्ण ने घोडो की रास सँभालते हुए कहा "हम दोनो भाई इसको छेडत छेडते थक जात थे पर यह कुछ न कहती थी। फिर हमने ही थककर इसे तग करना छोड दिया।"

अर्जुन ने कहा, "पराजित होने के कई तरीक़ है। जिसम सहन शक्ति हो वह कभी पराजित नहीं होता।"

अजुन ने कामलता स कहा, "इसकी सहनशक्ति से तो मै तभी पराजित हो गया था जब मने इसे उठाकर रथ मे डाला था। इसने न हाथ पाँव मारे, न ही शोर मचाया वल्कि वीरवहूटी की तरह सिकुडी आँखे बन्द किये रथ म चुपचाप बेठ गयी। मे तो सोच रहा था यह चिल्लाएगी तो अपहरण कठिन होगा।"

श्रीकृष्ण ने कहा, "तुम्हारी कठिनाई तो अब शुरू होगी अर्जुन। हमारी सुभद्रा कुछ नहीं कहेगी ओर तुम्हे स्वय सँभलना होगा। वह क्या चाहती है? बचपन में जब ये कुछ माँगती थी तो यह नहीं कहती थी यह वस्तु चाहिए, वह रो रो कर सिर्फ 'चाहिए चाहिए' कहती थी। यह रोने मे व्यवधान न आने देती थी। हम लाग घवरा जाते थे। म ओर भेया चीजे ला-लाकर इसके कक्ष मे ढेर लगा देते तब कहीं इसे कोई चीज भाती आर उसे उठाकर यह भाग जाती थी। मनचाही चीज पाते ही रोना भी थम जाता। हमने तो भुगत लिया हे, अब तुम जानो।"

सुभद्रा न कहा 'भया आप केसी बातें कर रहे है? मुझे तो कुछ स्मरण ही नहीं हे।"

श्रीकृष्ण ने कहा, सुभद्रा अच्छा अब स्मरण नहीं हे। अब ऐसा मत करना नहीं तो मेरा मित्र सारा दिन कुछ न कुछ ढूँढता ही रहेगा।"

'भया, अब क्या म बच्ची हूँ।"

कृष्ण ने कहा "नहीं अब तो तुम बडी हो गयी हो, तुम्हे पता हे—अपहरण हो तो चिल्लाना नहीं चाहिए। देखो, अब सिर्फ यही कहना कि म अर्जुन से ब्याह करूँगी।" सुभद्रा शरमा गयी।

ज्यो-ज्यो द्वारिका समीप आती जा रही थी, सुभद्रा का हृदय काँप रहा था। उसे भय भी हो रहा था। उसे लग रहा था जसे अर्जुन ने उसका अपहरण नहीं किया वल्कि वही भाई वहन उसे भगाये लिये जा रहे ह। उसे अपनी सखियो का ध्यान आया। उसे वही स्वर फिर से सुनाई देने लगा। सुभद्रा का अपहरण हो गया। जब वे इतनी सहजता से मुझे रथ से उतरता देखेगी तब कितना आश्चय होगा उनको। किसी भी स्त्री के लिए ये मर जाने के क्षण होते ह। अर्जुन बहुत भाये मन को, फिर भी यह भूलना कितना कठिन हे कि मेरा अपहरण हुआ हे। फिर उसने साचा चलो अच्छा हुआ स्वयवर न हुआ अब तो सीधा ब्याह ही हो जाएगा। ब्याह शब्द से सुभद्रा को चैन हुआ।

कल देर तक पर्वत पर घूमत हुए क्या म साच भी सकती थी मेरा यहाँ से अपहरण हो जाएगा ओर फिर अपहरणकर्ता ही से शादी भी हो जाएगी। फिर वह लजा गयी। अर्जुन कितने भव्य कितने अच्छे हे।

अब रथ द्वारिका के बाजारा म से जा रहा था। सभी उत्सुक होकर देख रहे

थे। सुभद्रा ने सोचा क्या इन सबको अपहरण की घटना का पता है?

भैया श्रीकृष्ण तो ऐसे देख रहे हैं जैसे कुछ हुआ ही नहीं। उसने चारा ओर दृष्टि घुमाकर देखा—सभी उसे ही देख रहे ह पर वह यहाँ की राजकुमारी भी तो है। तभी श्रीकृष्ण ने पीछे घूमकर कहा—

"सुभद्रा भय की कोई वात नहीं है। सभी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हागे। हो सकता है अव तक शुभ महूर्त भी निकाला जा चुका हो ओर शीघ्र ही तुम्हारा व्याह हो जाएगा।"

सुभद्रा ने वनावटी क्रोध से कृष्ण को देखा ओर कहा "क्या म व्याह के लिए कह रही हूँ।"

"नहीं, तुम क्यो कहोगी, पर हमे तो अपनी वहन का व्याह करना हे न।"

अर्जुन ने देखा--सुभद्रा के मुँह पर भय की रेखाएँ ह। उसने कहा देवी, भय की कोई वात नहीं है, सभी कुछ धर्मानुसार ही हो रहा है। चिन्ता की कोई वात नहीं है।"

सुभद्रा को ढाढस हुआ। कितने सुन्दर कितने कोमल शब्द। उसने मुस्कराकर अर्जुन को देखा। यह सुन्दर और सुदर्शन वीरपुरुष अव उसका पति होगा। उसने विनम्रता से दृष्टि नीचे कर ली।

राजमहल सामने दिखाई दे रहा था। सुभद्रा की माँ हाथ मे पूजा का थाल लिये खडी थी। किसी के चेहरे पर कोई क्रोध न था। सुभद्रा आश्वस्त हुई। उसकी माँ ने प्रसन्न होकर अर्जुन की आरती उतारी फिर महाराज के आशीर्वाद के वाद अर्जुन को सव भीतर लिवा ले गय। उसे आसन पर विठा कर सब प्रसन्न होकर वाते करने लगे।

सुभद्रा अपने कक्ष म आकर सखियो के सग गले लग कर रोने लगी।

कदाचित् यह पहली वार इस तरह किसी के साथ इतनी देर वाहर रहकर अन्त पुर आयी थी। अभी वह सखियो के सग वात ही कर रही थी कि महारानी भीतर आयीं। आते ही उन्हाने कहा—

"वेटी, अर्जुन-जेसा वर क्या हर किसी के भाग्य मे होता है? इतना वडा धनुर्धर, इतना विनम्र और इतना साम्य। मे तो धन्य हा गयी।"

सुभद्रा आश्वस्त होते ही माँ के गले लगकर फुक्का मारकर रो उठी। रोते-रोते ही वोली, माँ मेरा कोई दोप न था। मुझे क्षमा करना माँ।"

माँ ने उसे स्नेह से कहा, 'वेटी म जानती हूँ, तुम्हारा कोई दोप नहीं था। तुम ऐसा क्यो सोचती हो? पण्डित पुरोहित अच्छा लग्न मुहूर्त देख रहे ह। शीघ्र ही तुम्हारा विधिवत् व्याह हो जाएगा। जाओ--नहा धोकर तैयार हो जाओ। पहले कुछ खा पी लो। मुझे वहुत से प्रवन्ध करने है, तुम्हारी सखियाँ तुम्हारा ध्यान रखेगी।"

सुभद्रा को किसी भी वात म 'न' कहने की आदत न थी। वह चुप रहकर सवको टुकुर-टुकुर देखती रहती थी। वीच-वीच मे मुस्कुराकर नीची नजर कर लेती। सवकी प्यारी है सुभद्रा माँ ने सोचा ओर सुखी होकर वाहर चली गयी। सुभद्रा अव परायी हो जाएगी। उसी की वाते याद आने लगीं।

छोटी थी तो प्रात उठते ही पिता कहते—"कहाँ है सुभद्रा।" उसका मुँह देखने के उपरान्त मेरा सारा दिन वडा शुभ रहता है। मेरी वटी तो मेरा सूर्य है। इसे देखे वगैर दिवस आरम्भ नहीं होता। प्रात अपनी काजल भरी मोटी मोटी आँखे उठाकर पिता को देखते ही खिलखिला उठती सुभद्रा। पिता कुछ देते तो वह तुरन्त माँ को दे देती। पिता को लगता—इतना सन्तुष्ट बच्चा ऐसा लगता है कि दुनिया से कुछ नहीं चाहिए। उसे देने ही आयी है। पिता प्रसन्न होकर पूछते--"सुभद्रा सूरज कहाँ हे?" अपनी आर हाथ उठाकर वह कहती-- ये ये ये हे सूरज "

पिता उसे उठाकर हवा मे उछालते ओर कहते देखो सूरज निकल गया।"

सभी खुश हो जाते। भाई पूछते पिताजी ने तुम्हे लड्डू दिये थे? हम भी दो। सुभद्रा दोनो हाथो से लड्डू दे देती। भाइया को आनन्द न होता। जो वस्तु छीन झपट कर सताकर प्राप्त करने मे आनन्द है वह क्या सहजता से मिल जान पर ह? कितना सताते थे इसे वचपन मे।

महारानी की आँखे भर आयीं।

राजमहल म व्याह की तेयारियाँ शुरू हो गयी थीं। शुभ मुहूर्त निकल आया था। कोई दो हाथ ख़ाली न थे। कोई वन्दनवार सजा रहा ह, कोई फूल ला रहा हे कोई हार पिरो रहा हे। सामग्री से भरे थाल यहाँ वहाँ जा रहे है। स्थान-स्थान पर स्त्रियाँ सुहाग ओर मगलगीत गा रही हे। सुभद्रा की सहेलियाँ एकदम व्यस्त हो गयी है। कोई यहाँ भाग रही हे कोई वहाँ। मगलगीत गाती स्त्रियाँ सुभद्रा के कपडा पर मोती टाँक रही ह। पूरे राजमहल म उत्साह चरम सीमा पर हे।

अन्त पुर मे महारानी सुभद्रा को कह रही थीं--

"सुभद्रा अव तुम पाण्डवो की वहू वनोगी। अर्जुन से व्याह होते ही तुम वुआ कुन्ती की पुत्रवधू वनोगी। वो तुम्हारी माँ होगी अव। उनका ही पहले ध्यान करना।"

सुभद्रा की आँखे भर आयीं। उसने घवराकर कहा "क्या तुम मेरी माँ न रहोगी?"

"क्यों नहीं—मै ही तुम्हारी माँ हूँ! पर व्याह के वाद सास का दर्जा ही ऊपर होता है। अभी ससुराल जाने मे साल भर तो है ही, तव तुम सव समझ जाओगी। अव वताओ मण्डप म कौन-सा परिधान पहनोगी? यहाँ कइ वस्त्राभूपण मन निकलवा दिये है। वताओ न सुभद्रा!"

सुभद्रा ने कहा, "माँ हमेशा तो तुम्हीं वताती हो। व्याह का परिधान भी तुम ही वता दो। मै तो प्रतिदिन तुम्हारे भेजे वस्त्र ही पहनती हूँ। व्याह के वाद जो अर्जुन कहेगे वही पहन लूँगी।"

महारानी को हँसी आ गयी। उसने कहा, "पुत्री अव समयानुसार तुम अपने वस्त्र स्वय ही चुनना। पति को वस्त्र चुनने मे कोई रुचि नहीं होती। जो भी तुम पहनोगी अर्जुन को अच्छा लगेगा।"

सुभद्रा न अचानक पूछा "माँ, अभी तो मे ससुराल नहीं जाऊँगी ना?"

"नहीं वेटी अभी अर्जुन के वनवास का एक वर्प वाकी हे। तव तक अर्जुन भी यही रहेगे। तुम दोना के लिए नया महल सज गया हे। तव तक तुम मेरी आँखो के सामने ही रहोगी। फिर तुम वडी हो जाओगी।"

वडी वुद्धिमत्ता के साथ सुभद्रा ने माँ से पूछा, "माँ, व्याह के वाद सव वड़े हो जाते है न!"

"हाँ, मेरी वच्ची! अव देखो तुम्हारी सखियाँ भी आ गयी है। तुम अपने वस्त्र चुनकर रख लो। जो वस्त्र जयमाला के समय भाँवरो के समय पहनने है उन्ह चुन कर एक तरफ रख लो। अव म जाकर वाक़ी के प्रवन्ध देखूँगी।"

सुभद्रा की सखियाँ एकान्त पाकर उसे छेडने लगीं।

"कहो सखि, अर्जुन तुम्ह गोद म विठाकर रथ हाँक रहे थे या रथ अपने-आप चल रहा था।"

यह प्रश्न सुनकर सुभद्रा हरान हुई। उसने कहा "मुझे गोद मे लेकर रथ हाँकते तो रथ चलाते केसे? अश्व इतनी शीघ्रता से भाग रहे थे कि मे तो अपनी चेतना ही खो वेठी।"

सव सखियाँ खिलखिलाकर हँस पडीं। फिर एक ने कहा—

"सुभद्रा, जव तुम चेतना खो वेठीं तव तुम्हारा सिर तो अजुन की गोद मे ही रहा होगा न—नहीं तो तुम रथ से गिर जातीं?"

सुभद्रा वाली, *"चेतना खोने पर सिर कहाँ रहता ह, ये क्या जान पाता है कोई?* कैसी वाते करती हो तुम! रथ इतनी जोर से भाग रहा था। मुझे लगा आकाश भी घूम रहा है तभी तो मने ज़ोर से आँखे मींच ली थीं। फिर खोली ही नही।"

सुभद्रा की सखियाँ इतने ठहाके लगाने लगीं कि उसे लाज आ गयी। उसने वात पलटते हुए कहा—

"माँ कह गयी है अपनी सखियो के सग वस्त्र चुन लेना।"

"हाँ, हाँ चलो, वस्त्र ही चुनते है।"

वस्त्र देख एक सखि ने कहा "पता नहीं कब से तुम्हारे लिए महारानी वस्त्र बनवा रही थीं। इतने सुन्दर वस्त्र बनवाने मे भी समय लगता है।"

दूसरी सखि बोली, "मुझे लगता हे महारानी को पता होगा कि कोई उनकी अद्वितीय सुन्दरी पुत्री का अपहरण कर लेगा।"

सुभद्रा ने कहा, "माँ को पता होता तो मुझे न बताती, पर अब अर्जुन मिलेगे तो जरूर पूछूँगी कि आपने मेरा अपहरण करने की योजना कब बनायी।"

एक सखि ने पूछा "जब उत्सव म तुम्हे घूर घूरकर देख रहे थे तब क्यूँ नहीं तुम्हारा अपहरण कर लिया।"

सुभद्रा ने कहा 'चलो हटो ऐसे थोडे ही अपहरण हो सकता है। वहाँ इतने लोग थे, वहाँ कोन अपहरण कर पाता। रैवतगिरि पर तो कोई भी न था।"

"रैवतगिरि पर अपहरण हो सकता ह, क्या यह तुमने अर्जुन को बताया था?"

मैं क्या ऐसा करती? मेरा तो स्वयवर होनेवाला था।" सुभद्रा चमककर बोली। "उत्सव म जब अर्जुन तुम्हे घूर घूरकर देख रहा था तब तुम भी तो पलक झपकना भूल गयी थीं।" एक सखि ने छेडा।

"ऐसा होता तो अपहरण क समय म सज्ञाशून्य क्यो हो जाती?"

ये बाते चल रही थी तो एक परिचारिका ने आकर कहा, राजकुमारी को स्नानगृह मे लाकर उबटन लगाना है। महारानी की आज्ञा है।"

"चलो, चलो सुभद्रा तुम्हे उबटन लगाते है। चन्दन से देह रँग देते है।" सब हडबडाकर स्नानगृह म जाने लगी तो सुभद्रा ने सोचा—अब तो विवाह मे कोई विलम्ब नही है। चलो अच्छा हुआ स्वयवर न होगा। कितना भय लग रहा था।

अर्जुन अपने कक्ष मे एकान्त पाकर एकदम इन्द्रप्रस्थ पहुँच गया। उसकी इच्छा हुई—दूतो को बुलाकर पूछा जाए कि जब वो महाराज युधिष्ठिर के समक्ष उपस्थित हुए थ तो क्या महारानी द्रोपदी भी वहाँ थी। अवश्य रही होगी। पर क्या होनेवाली ससुराल मे बेठकर ऐसी बात सोचनी चाहिए। अब तो विवाह में विलम्ब नहीं है। सुभद्रा मेरी पत्नी होगी। एक बरस बाद तो वहीं जाना हे अभी तो इस सुन्दर घडी के विषय मे सोचना चाहिए।

बारह बरस हो जाएँगे। एक ही वर्ष तो रह गया। द्रोपदी पता नहीं इतने वर्षों मे कैसी हो गयी होगी? सन्तान होने के बाद स्त्री सिर्फ माँ होकर ही रह जाती है और क्षमा करने म माँ कभी कृपण नहीं होती। क्षमा तो तुम्हे करना ही होगा कृष्णा।

फिर अर्जुन को सुभद्रा का स्मरण हो आया। पता नहीं उसे केसा लग रहा होगा। सुभद्रा मेरे मित्र की भगिनी भी ह। सुभद्रा के बाद कोई स्त्री मेरे जीवन म नही आएगी। एक वर्ष बाद जब इन्द्रप्रस्थ जाऊँगा तब तक तो कृष्ण की दृष्टि के

घेरे मे ही रहना होगा। केसा सुन्दर क्षण होगा जब मे अपनी मॉ, अपने भाइयो ओर अपनी कृष्णा को देखूँगा।

अर्जुन ने सुना—वाहर से कुछ स्वर उसी के कक्ष की तरफ आ रहे थे। स्त्री का स्वर धीमा था, दूसरा शायद कृष्ण थे। अर्जुन उठकर खडे हो गये। कृष्ण के साथ महारानी रुक्मिणी ने प्रवेश किया। अर्जुन ने उन्हे द्वार-पूजन के समय भी देखा था। कृष्ण ने धीरे-से कहा, 'रुक्मिणी है।"

अर्जुन ने झुककर रुक्मिणी को प्रणाम कर के कहा, 'देवि, प्रणाम स्वीकार कीजिए।"

रुक्मिणी ने हँसकर कहा, "आपने हमारी ननद का अपहरण किया हे, प्रणाम तो स्वीकार नहीं करना चाहिए पर देख रही हूँ—ननद आप पर ऐसी रीझ गयी हे कि आपका सत्कार करने मे ही भलाई हे। ओर फिर आपके मित्र तो हमेशा आपकी ही चर्चा करते रहते हे।"

"मे अनुगृहीत हुआ देवि। आइए, विराजिए। मेरे मित्र को तो मेरे पास आने का समय ही नहीं मिला। अकेला यहॉ बेठकर पगुरा रहा हूँ।"

कृष्ण ने प्रफुल्लित होकर कहा "मेरे प्रिय मित्र आज मेरी बहन का विवाह हे। एक भाइ कितना व्यस्त हो सकता हे क्या इतना भी नहीं समझते?"

दोनो मित्र खुलकर हॅसे, तो कृष्ण ने बताया, सुभद्रा को उसकी सखियाँ उबटन मल रही है। आपको तो उबटन भी मुझे ही मलना पडेगा। देवि रुक्मिणी भी इसीलिए आयी ह। क्यो देवि आप अपनी ननद को ही उबटन मलेगी या बहनोई को भी यह सुख प्राप्त होगा?"

रुक्मिणी ने हँसते हुए कहा, 'यह पहली वार उवटन मलेगे क्या?"

"हाँ भई, उबटन भी पहली बार मलेगे और पत्नी भी पहली वार ही मिलेगी जो इन्हीं के सग रहे।'

रुक्मिणी ने कहा, 'तो म जाकर सुभद्रा को देखती हूँ। आपका तो अब अर्जुन के सग ही रहना चाहिए। ससुराल मे अकेले घबराहट होगी, इनके मित्र तो यहाँ आप ही है।"

अर्जुन ने कहा, 'देवी आप रहेगी तो म अपने मित्र ओर उनकी पत्नी को सग देखने का सुख पाऊँगा। इतने दिन से यहॉ हूँ, लेकिन आपसे बात करने का भी समय नहीं मिला।"

"ये तो ब्रह्माण्ड मे घूमते रहते है। कभी-कभी घर भी आ जाते हे।"

अर्जुन ने कहा "मे भी दोपी हूँ। क्षमा कर सकेगी।"

"अवश्य अब आप मेरी ननद से व्याह के वाद गगा स्नान को न जाइएगा फिर पता नहीं कान आपको गगा मे घसीट ले जाए।"

कृष्ण ने कहा, "रुक्मिणी वहुत ठीक कहा। म भी यही कहना चाहता था पर तुमने कह दिया बहुत अच्छा किया।"

'तो मुझे आज्ञा दें," यह कहकर रुक्मिणी चली गयी।

रुक्मिणी के जाते ही कृष्ण ने कहा, "स्नानागार में चलिए। उबटन-तेल आदि का प्रबन्ध हो गया होगा।"

अर्जुन ने कहा, "जो आज्ञा। अब तो आपके अधीन ही रहना है।"

"यही अच्छा होगा।" कृष्ण कहकर अर्जुन के गले में बाँह डालकर चलने लगे।

राजमहल के विशाल प्रांगण में वेदी सज गयी थी। फूलों और वन्दनवारों के बीच स्वस्ति चिह्न सूर्य सा चमक रहा था। बाद्यों के स्वरों के मध्य उभरता स्त्रियों का मधुर मंगलगान वातावरण को रोमांचित कर रहा था। कहीं द्वार पर मृदंग की थाप व नृत्य के घुँघरू मधुर स्वर पैदा कर रहे थे। चारों तरफ प्रसन्नता ही प्रसन्नता।

सुभद्रा की सखियाँ इस तरफ से उस तरफ यूँ भाग रही हैं जैसे तेज़ हवा बहने पर गेहूँ की बालियाँ दोहरी होती हैं। तभी वे उत्सुकता से देखने लगीं कि अर्जुन कृष्ण के संग आ रहे थे। वर के वेश में अर्जुन इन्द्र की तरह लग रहे थे। साथ में पूरी बारात की तरह कृष्ण मुस्कराते हुए। द्वार पर महारानी ने आरती उतारी तो अर्जुन ने उन्हें झुककर प्रणाम किया। सुभद्रा की सखियाँ अर्जुन को उस स्थान पर ले गयीं जहाँ जयमाला लिये सुभद्रा खड़ी थी। सुभद्रा अपनी सखियों में चाँद सा चेहरा लिये लज्जा से झुकी पड़ रही थी। सुभद्रा की सखि ने अर्जुन के हाथ में जयमाला देकर कहा "लीजिए यह जयमाला इसे आप सुभद्रा के गले में पहनाएँगे। सुभद्रा की जयमाला तो आप ही के गले में पड़ती, चाहे स्वयंवर ही क्यों न होता।"

अर्जुन ने मुस्कराकर पूछा, "यह बात आप इतने विश्वास के साथ कैसे कह सकती हैं?"

सखि ने भी चमककर कहा, "आपको देखने के बाद मेरी सखि और किसी भी गले में जयमाला न पहनाती।"

अर्जुन की दृष्टि सामने पड़ी। उसने देखा—सुभद्रा जयमाला हाथ में लिये आगे बढ़ रही थी। पल भर को अर्जुन की आँखों के सामने द्रौपदी आ गयी। इसी तरह सोने की जयमाला हाथों में थामे अर्जुन की तरफ बढ़ी थी। जयमाला तो गले में डाल दी थी पर पत्नी की बाँहों का हार कभी भी न देखा। उसके अपने हाथ की जयमाला काँपी। तभी सुभद्रा ठीक आगे आकर खड़ी हो गयी। कहीं से एक स्वर आया— राजकुमारी जयमाला अर्जुन के गले में डालो।

सुभद्रा ने हाथ ऊपर किये। उसकी दृष्टि धरती पर ही थी। ये देखकर कृष्ण ने अर्जुन से कहा "अर्जुन मेरी बहन के सामने तो झुकना ही पड़ेगा।" अर्जुन ने कृष्ण की बात पूरी होने से पहले ही गर्दन झुका ली। सुभद्रा की सखियों ने तुरन्त सुभद्रा को जयमाला पहनाने को कहा। सुभद्रा ने दृष्टि उठाये बगैर ही जयमाला ऊपर उठाकर अन्दाज से अर्जुन के गले में डाल दी। अर्जुन ने भी सुभद्रा को जयमाला पहनाई तो सब लोग जयजयकार करने लगे। फिर वैदिक रीति से ब्याह हो गया।

मगल-गीत अव विदाई के गीता मे वदल गये। महारानी की आँखा मे आँसुओ की झड़ी लग गयी।

राजमहल के साथ ही लगा एक महल तैयार कर लिया गया था। वहीं सुभद्रा की विदाई हुई। महारानी ने कहा, "तो आज मेरी वेटी परायी हो गयी। ससुराल जाकर तो वटियाँ परायी होती ही है। पर मेरी पुत्री तो मेरे घर में रहकर ही परायी हो गयी।"

कृष्ण ने कहा, "देवी पुत्रियाँ तो पराये घर की ही शोभा होती है। आपकी पुत्री इस युग के सबसे वडे धनुर्धारी अर्जुन से ब्याही गयी है। कुन्ती वुआ इसे अपनी आँखों की पुतली वनाकर रखगी। मन छोटा न करो हम वडे भाग्यशाली ह जो हम अर्जुन-जैसा वहनोई मिला है। हमारी सुभद्रा वडी भाग्यशाली हे।"

अपने ही पीहर के राजमहल के एक भाग म वेठी सुभद्रा अव रो-रोकर शान्त हो गयी थी। उसकी वहुत सी सखियाँ अर्जुन के साथ चुहल कर रही थीं। अर्जुन भी खूब प्रसन्न थे। वीच-वीच म उन्हे अपनी माँ और भाइयों का स्मरण हो आता। फिर वह सोचते—अव तो एक ही वरस रह गया हे। पर यह समय काटना जैसे वडा कठिन हे। फिर वह दिन आएगा जव सुभद्रा को लेकर इन्द्रप्रस्थ जाऊँगा। कृष्ण ने देखा, सारी सखियाँ अर्जुन के सग वाते कर रही ह ओर सुभद्रा अपनी सूजी हुई आँखो के साथ चुपचाप वेठी हुई ह। कृष्ण को सुभद्रा पर वहुत स्नेह आया। उन्होने उसके पास जाकर उसे वहुत स्नेह से कहा, "सुभद्रा अर्जुन मेरा वडा प्रिय मित्र हे। उन्हे द्वारिका मे ऐसा कभी नहीं लगना चाहिए कि वह अपने ही घर म नहीं हे। यह दायित्व तुम्हारा ह मेरी वहन।"

सुभद्रा ने सिर झुका लिया। कृष्ण ने कहा, "अव हम चलकर दखग—पुत्री क विदा होने पर राजमहल कितना सूना हो जाता है।" फिर अर्जुन को हाथ जोडकर कृष्ण ने सुभद्रा के वडे भाई के नाते कहा—

"अर्जुन। मेरी वहन सुभद्रा यहा सव की आँख की पुतली हे। इसे वडे जतन से रखना।"

अर्जुन यह सुनकर उदास हो गया। कृष्ण को द्वार तक विदा करके जव अर्जुन अपने कक्ष मे आया तो उसने देखा सुभद्रा वेसे ही वैठी हुई है—उदास आश्चर्यचकित ओर अनमनी। अर्जुन ने कहा, 'सुभद्रा तुम्हे देखकर हम यही लगा था कि हमारी भटकन यहीं समाप्त होगी इसलिए हम तुम्हारा अपहरण करना पडा। स्वयवर मे तुम मुझे जयमाला न भी पहना सकती थीं, और मुझे यह सहन न था। तुम्हे देखकर यही लगा था कि जिसे ढूँढता रहा वह रत्न यही हे। एक वर्ष तो हमे यहीं रहना हे। वनवास समाप्त होते ही हम अपने घर इन्द्रप्रस्थ चले जाएँगे। आशा हे तुम मुझे अपने मन के अनुकूल पाओगी।"

सिर झुकाये झुकाय ही सुभद्रा ने कहा म मनप्राण से आपको प्रसन्न रखने

का यत्न करूँगी। फिर भी कभी कोई अपराध हो जाए तो " ये कहकर सुभद्रा का गला भर आया। अर्जुन ने सुभद्रा को उठाकर गले से लगा लिया। फिर कहा, "सुभद्रा मैं जानता हूँ तुमसे कोई अपराध नहीं होगा। चलो देवी शयनागार चलें। तुम भी बहुत थक गयी होगी।"

द्वारिका में आमोद प्रमोद और स्वागतार्थ किये जानेवाले कार्यक्रम में अर्जुन का समय बड़ी प्रसन्नता से व्यतीत हो रहा था। सुभद्रा जैसे जादू की छड़ी छू जाने से एकदम सुरभित कन्या से कुशल गृहिणी होकर अर्जुन की हर सुख-सुविधा का ध्यान रखने लगी थी। सुभद्रा की माँ उसे देख-देखकर प्रसन्न होती और सोचती—ब्याह के बाद एक वर्ष सुभद्रा का मेरी आँखों के सामने रहना एक दैवी घटना है। एक वर्ष में तो वह गृहस्थी सँभालने के सारे गुर सीख जाएगी। इन्द्रप्रस्थ पहुँचेगी तब कुशल गृहिणी होगी। एक बार वहाँ चली गयी फिर यहाँ बार-बार आना कहाँ सम्भव होगा। वैसे भी अपने घर जाने के बाद लड़कियों को मैके जाने का समय कहाँ मिलता है? फिर तो इच्छा होने पर भी बाल-बच्चों और गृहस्थी के बीच फँसी लड़कियाँ मैके के बारे में सोचते-सोचते जागती सोती हैं, पर हर बार कहाँ जा पाती हैं?

सुभद्रा अब अपने महल में से भी कम निकलती। सखियाँ आतीं पर उस तरह घुलना मिलना नहीं हो पाता। अर्जुन का घेरा कसता ही जा रहा था और सुभद्रा उसमें मगन थी। कृष्ण जब आते तो अर्जुन उनके साथ घूमने जाने से पहले सुभद्रा को कहते "तुम भी महारानी को प्रणाम कर आओ। तुम्हारी सखियाँ भी वहाँ होंगी।" सुभद्रा सिर झुका देती तो कृष्ण हँसकर कहते, "सुभद्रा पहले तुम्हें महारानी और हम सब आज्ञा देते थे, अब अर्जुन देते हैं। तुम्हें अब भी कुछ सोचना नहीं पड़ता। ठीक है न।"

भैया, आपने ही तो कहा था कि यहाँ इनको हर तरह का सुख मिलना चाहिए। यही यत्न करती हूँ।" श्रीकृष्ण ने भगिनी का मस्तक चूमकर कहा "मुझे तुमसे यही आशा है सुभद्रा।"

एक दिन कृष्ण उपवन में घूम रहे थे तो अर्जुन ने कहा "माधव ज्यों ज्यों वनवास समाप्त होने के दिन नजदीक आ रहे हैं पता नहीं हृदय क्यों अधिक अकुला रहा है।

बारह बरस के इस वनवास मे मने कितनी पृथ्वी नाप ली। कितने अद्भुत प्राकृतिक दृश्य देखे। प्रकृति जैसे मेरी मित्र हो गयी है। यदि यह वनवास न लेता तो कितना वंचित रह जाता म। अब तो कुछ ही माह रह गये हैं। इच्छा होती है—पुष्कर तीर्थ म जाकर य अवधि समाप्त कर फिर सुभद्रा के संग इन्द्रप्रस्थ चला जाऊँ।"

कृष्ण ने कहा, "क्या, अर्जुन अभी भटकन जारी ह क्या?"

"नहीं केशव, भटकन तो समाप्त हो गयी लगती है। पर वनवास के अन्त तक गृहस्थी म ही रहन पर अपराध-बोध हो सकता है। वैसे भी एक बार इन्द्रप्रस्थ लौट गया तो फिर ये स्थान देखने को कहाँ मिलगे? वन-उपवन पहाड़, उपत्यकाएँ—इनम घूमने का अवसर आपके इस धनुर्धर को नहीं मिलेगा यह जानता हूँ म।"

"हा यह तो तुम सत्य कह रहे हो, पर सुभद्रा से परामर्श किया है?"

"अभी तो नहीं किया। पहले मैं आपसे ही बात करना चाहता था। फिर सुभद्रा से बात करूँगा?"

"अवश्य। उसे लगना चाहिए कि तुम उसकी आज्ञा से ही जा रहे हो। समझे न?"

"जी माधव, समझ गया। इस मामले में जो आपके अनुभव ह वह मुझे कहाँ है।"

दोनो मित्र हँस पडे तो कृष्ण ने कहा, "नहीं अर्जुन, यहाँ म तुमसे सहमत नहीं हूँ। तुमने उत्तर दक्षिण, पूर्व पश्चिम चारो दिशाओ से पत्नी प्राप्त की ह। द्रौपदी दक्षिण की, उत्तर से उलूपी, चित्रांगदा पूर्व से और सुभद्रा पश्चिम से। तुम्हारा मुकाबला कठिन है धनजय।"

"अब क्या कहूँ किसका मुकाबला कठिन ह। एक दिन देवी रुक्मिणी से पूछना पडेगा।"

"अवश्य पूछना। म भी जानना चाहता हूँ देवी क्या सोचती है? सोचती भी है या नही। मुझसे उसने कभी कुछ नहीं पूछा।"

"इस मामले म तो आप पारंगत ह। हर किसी को लगता है कि आप सिर्फ उसके है। मुझे ही देख लीजिए।"

"अर्जुन, जहाँ तुम हो वहाँ कोई नहीं है। इसी तरह जहाँ रुक्मिणी है वहाँ सिर्फ वही ह। तुम कहाँ जाना चाहते हो अर्जुन?"

पुष्कर तो जाऊँगा ही। ऋषि मुनियो एव तपस्वियो के साथ समय व्यतीत करना चाहता हूँ—उनके साथ यज्ञादि करते एव धार्मिक कथाएँ सुनते हुए। धार्मिक जीवन जीने का समय न जाने फिर आएगा भी या नही।

कृष्ण ने कहा, "बडा उचित निर्णय है। अवश्य जाओ। सुभद्रा भी कुछ दिन और अपनी सखियो के संग रह लेगी। बार बार माँ के घर कौन लडकी आ सकती है? इन्द्रप्रस्थ जाकर तो आप भी बड़े व्यस्त हो जाएग।"

एक ही जीवन में मनुष्य कितने जीवन जीता है केशव! मैने भी इन बारह बरसो की अवधि का एक-एक क्षण जिया है। जीवन मे ऐसे क्षण बार-बार नहीं आएँगे इसीलिए इनमे डूब जाना चाहता हूँ। इन बारह बरसों म घुमन्तू अर्जुन ने जैसे सृष्टि के कई द्वार खोलकर उनम सिर्फ झाँका ही नहीं अपितु स्मृतियों की कितनी अपार सम्पदा भी बटोरी है। कभी-कभी सोचता हूँ कि यदि उलूपी घसीट कर अपने साथ न ले गयी होती तो शायद अर्जुन सन्यासी हो जाता। उलूपी का बडा उपकार मानता हूँ मै। स्त्री कहीं की भी हो उसके मन के भीतर स्नेह का बहने वाला झरना एक-सा ही होता हे। उलूपी का सग सिर्फ एक रात्रि का रहा, पर जीवन के साथ तो यो जुड ही गयी हे। उसका पुत्र इरावान भी अब काफी बडा हो गया होगा। पिता तो म ही हूँ न! तब भी हमेशा अपराध-बोध होता था। लगता था, यह अन्याय हे। अब सोचता हूँ देव की यही इच्छा थी। यदि द्रौपदी सिर्फ मेरी ही पत्नी होती तो अर्जुन निश्चय ही भटकता नहीं, पर वनवास का ये सुयोग न मिलने पर म कितना वंचित हो जाता। इस धरती का चप्पा चप्पा कहाँ देख पाता? न ही इतने ब्याह होते न अपराध बोध होता। पता नहीं कैसा होता जीवन, केशव युधिष्ठिर के पार्श्व मे द्रोपदी का महारानी होकर बैठना अब सहज लगने लगा हे। अब सहन कर पाता हूँ। प्रारम्भ मे मेरे रोम रोम से असहायता, निरुपायता और क्रोध की चिनगारियाँ निकलती थीं, जिसम मेरी आत्मा सहमी हुई खडी रहती थी। जिस दिन द्रोपदी ने मुझे वरमाला पहनायी थी उस दिन से मे अर्जुन—कितने व्यक्तित्व झेलता हुआ यहाँ तक पहुँचा हूँ—यह कौन जान सकता हे? पता नहीं मेरे भीतर कितने अर्जुन हे पर मुझे वनो कन्दराओ पहाडा, उपत्यकाआ म घूमनेवाला अर्जुन सबसे अधिक मोहित करता हे ओर जब भी वह क्षण आता है धनुर्धारी अर्जुन को यहाँ खडा पाता हूँ। कितना विरोधाभास हे। पूरा मस्तिष्क घूम जाता है।"

यह सुनकर कृष्ण प्रसन्न हो गये फिर अर्जुन से कहने लगे—

"म जानता हूँ तुम एक तपस्वी एक मनुष्य हो, पर एक मित्र सखा प्रेमी पुत्र के साथ साथ वीर धनुर्धर भी हो। वही तुम्हारा सबसे बडा परिचय हे अर्जुन। इसी धनुर्धर को अपनी बहन का हाथ देकर मे अपने-आपको धन्य समझता हूँ। धर्म मे लिप्त रहकर तुम एक यायावर एक अलग घुमन्तू अर्जुन हो। अर्जुन, अपराध-बोध होते रहना अच्छे मनुष्य का लक्षण हे ओर तुम अच्छे मनुष्य हो। ऐसा सखा हर किसी को नही मिलता।

अर्जुन ने अनुगृहीत होकर कहा "केशव मन के भीतर की तहो को एक-एक करके मै सिर्फ आपके समक्ष खोलता हूँ। जीवन मे एक भी ऐसा मित्र मिल जाए जो आपको ठीक से पहचान सके तो जीवन सफल हो जाता है। आपको पाकर म धन्य हो गया केशव। आप मेरे सखा न होते तो शायद मे अपने-आपको पहचानने म सफल न होता। मुझे लग रहा हे म एकदम हल्का हो गया हूँ। कहीं कोई विरोध

नहीं है। अब मै सहज रूप से कृष्णा के समक्ष जाकर खडा हो सकूँगा।"

यह कहकर अर्जुन चुप हो गया। कृष्ण भी थोड़ी देर आकाश म उडती चिडियो को देखते रहे। आकाश मे उड़ना कितना अच्छा लगता होगा? अर्जुन अब मुक्त आकाश मे उड़ सकता है।

अर्जुन फिर मुखर हो उठा—"पर्वत का एक एक मोड़ मुडते, घाटिया का एक-एक दृश्य आत्मसात करते, पहाडियो पर चढते, फिर सहज होकर उतरते, कहीं सुन्दर दृश्य देखकर चमत्कृत हो जाते मने कई बार अपने आपसे पूछा है—'म, कान हूँ?' परन्तु इसका उत्तर मैने कहीं नहीं पाया।

क्या कृष्णा का प्रेमी, उलूपी का प्रणय प्रस्ताव स्वीकार करनेवाला पुरुप, चित्रागदा पर मोहित होनेवाला व्यक्ति या सुभद्रा जेसी पत्नी पा लेनेवाला पति? केशव पति तो मैं सुभद्रा को पाने के बाद ही हुआ। पूर्ण हो गया हूँ मैं। इसमे सिर्फ यह क्षण अटक जाता है जब मै कृष्णा के समक्ष अपराधी-सा जाकर खडा हो जाऊँगा। क्या कहूँगा मैं—यह सोचते ही मेरे प्राण सूख जाते है। जिह्वा अटक जाती है। अपना अस्तित्व झूलता-सा लगता है। कभी लगता हे मुझमे विश्वास आ गया हे। कभी फिर बडा निर्बल हो जाता हूँ। मुझे बल दीजिए। मुझे बल चाहिए माधव! शायद ये बल एकत्रित करने के लिए ही म पुष्कर जाना चाहता हूँ। पूर्वजो का पिण्डदान करके निश्चय ही मुझमे बल आएगा। सुभद्रा तो कुछ न कहेगी, पर आपकी आज्ञा अनिवार्य है।"

कृष्ण ने स्नेह से अर्जुन का हाथ पकड लिया। फिर कहा, "अर्जुन, तुम कितना विश्वास मुझ पर करते हो। मुझे पूरा पिघलाकर मेरे भीतर समा जाते हो। फिर तुम्हे म और प्यार करने लगता हूँ। यह कितना अच्छा हुआ कि तुम वनवास के बाद मेरे ही घर से इन्द्रप्रस्थ जाओगे। मे बडा प्रसन्न हूँ अर्जुन, तुम जाओ। पुष्कर मे पितरा का श्राद्ध करके तुम्हारा मन हल्का हो जाएगा। फिर एक बार प्रकृति के सग रहकर तुम ओर अच्छे मनुष्य हो जाओगे। तुम्हारा कहना सच है अर्जुन। एक बार इन्द्रप्रस्थ जाने पर धनुर्धर अर्जुन दोबारा कभी तपस्वी न हो सकेगा। गृहस्थी मे रहकर भी जो तपस्वी हो वही तपस्वी है अर्जुन।"

अर्जुन ने प्रश्न किया, "क्षमा करे माधव, पर आप केसे तारतम्य बिठा पाते ह। कहीं आसमान मे टकटकी लगाये राधाकृष्ण राधाकृष्ण उच्चारती राधा स्मरण हो आती है। कहीं कुज गलियो मे रास रचाती गोपिकाएँ कहीं सोलह हजार रानियाँ और महल मे देवी रुक्मिणी! कितना बड़ा ससार है—आपका! प्रभो कैसे-कैसे तारतम्य बिठा पाते है आप? मेरी बुद्धि तो भँवर म गोते खाने लगती है। मे तो अपनी चारो दिशाओ से ही मुक्त नहीं हो पाता।"

अर्जुन ने फिर पूछा "ऐसा क्यो लगता है माधव कि पुरुप ही भटकता है? स्त्री मे अनुशासन अधिक ह?"

कृष्ण कुछ सोचने लगे फिर कहा "अर्जुन, इसमें सबसे बड़ा कारण स्त्री का माँ होना है। माँ होने के बाद स्त्री पूर्ण हो जाती है। पुरुष नहीं होता। उसकी भटकन उत्सुकता कदाचित् नजरअन्दाज़ होने का अहसास उस भटकन में सहायता करता है अर्जुन। माँ होना बहुत बड़ी बात है। माँ के बिना कोई कुछ नहीं है। मैं कितना भाग्यशाली हूँ कि मेरी दो माँएँ है, मैं दोनों से प्रेम करता हूँ। पर सुख तो स्थिरता में ही है। भटकन में सिर्फ भटकन है।"

"ऐसा क्यों है?" अर्जुन ने पूछा।

कृष्ण हँसकर बोले, "मैं जानता था तुम कभी यह प्रश्न पूछोगे। अर्जुन मैं कुजगली और अन्तःपुर में हमेशा अन्तर रखता हूँ। ये दो मार्ग हैं जिनका चौराहा मेरा हृदय है। ये मार्ग सिर्फ मेरे हृदय में आकर ही मिलते हैं और कहीं नहीं मिलते। देखो न—कृष्णा के प्रति तुम्हारा मोह और ह्रास हो गया है। वह सिर्फ तुम्हारी पत्नी नहीं है यह सच है, पर प्रेमिका वह सिर्फ तुम्हारी है। माँ होने के बाद स्त्री स्रष्टा के बराबर हो जाती है। स्रष्टा हो जाने के बाद और कोई स्थान उत्तम नहीं है। माँ होकर क्षमा करना सरल है अर्जुन। तुम भाग्यशाली हो—सुभद्रा जैसी सरल पत्नी पाकर कई प्रश्नों से मुक्त रहोगे। प्रकृति तो माँ है। जाओ एक बार फिर उसकी गोद में विश्राम कर आओ। उसके बाद तो तुम धनुर्धर अर्जुन हो जाओगे।"

सुहाग-कक्ष से निकलकर पुष्कर तीर्थ पहुँचने पर अर्जुन को लगा जैसे नूतन दिवस निकल आया हो। जैसे एक रंगीन गहरी गुफा में से बाहर निकलते ही सूर्य के दर्शन प्राप्त हुए हों। सारी राह में अर्जुन सुभद्रा की निगाह में से बचकर निकलने का यत्न करता रहा। वृक्षों से पहचान नयी करता रहा और प्रकृति के पास आने के लिए आगे बढ़ता रहा। अब लगा कि पहुँच गया है।

पुष्करिणी के तट पर एक स्थान पर उसने यज्ञादि प्रारम्भ किये तो कई तपस्वी ब्राह्मण पण्डित विद्वान सब कथाएँ सुनाने और सुनने के लिए आने लगे। इन सभी लोगों से अर्जुन परिचित था। अर्जुन को लगा जैसे वह अपने ही घर आ गया है। धार्मिक कथाएँ यज्ञ अग्निहोत्र सब ऐसे ही होने लगे जैसे कभी बीच में छूटे ही न थे। अर्जुन को मन ही मन पता था कि इन सबसे विदा लेने का समय आ गया है।

धनुर्धर अर्जुन के मन में ये क्षण कुनमुनाते रहेंगे पर फिर तीर्थों में भी आ पाऊँगा या नहीं ये तो विधाता ही जानते हैं। अर्जुन एक एक क्षण एक एक शब्द को रोम रोम में समेटने लगा। वह भूल गया द्रौपदी भूल गया उलूपी स्त्रियों और अपनी नयी पत्नी सुभद्रा को। अहा कितना सुख है। प्रकृति की गोद में बैठे हुए यह स्नेही परिवार कितना अपना लगता है।

अर्जुन भुरुकुवा की रोशनी में उठ जाता। नित्य कर्म करके किसी ओर भी चल देता। रोज वन, पर्वत, झीलों नदियों से मिलकर फिर पुष्कर आता। कभी-कभी दो चार दिन एकदम प्रकृति के घर ही रह जाता। एक एक पत्ते को वृक्षों को लताओं

को, झाडिया को, वनो-उपवनो को यूँ देखता जैसे अन्तिम बार देख रहा हो। कितनी बार किसी विशेष वृक्ष को टकटकी लगाकर देखता, स्नेह से दुलराता ओर चढती हुई बेला को सहलाता। आनेवाले फूला का स्वागत करता आर जल मे अपना चेहरा निहारता। नदिया के साथ मन ही-मन वह जाता, हाथा म मखमली वीरवहूटियाँ लेकर उन्ह लजाते हुए देखता, फूला को खिलते हुए देखता, ज्ञाडियो से लिपटकर सोये साँपा के जोडे का बन्द बन्द अलग करके निहारता। कल जहाँ फूल की कली होती अगले दिन उसे कोमल पत्ते सा खुलते हुए देखता। नवजात शिशु की हथेली-जैसी सिकुडना को सीधा करता, उनकी रेखाएँ पढते पढते मुग्ध हो जाता। कल की कली आज फूल बनी सिर उठाकर घमण्ड से झूलती हे। पृथ्वी का हृदय चीर कर गर्दन अकडाकर देखती, बेल-वृक्ष के गिद एक और ब धन डाल देती, पानी की बूँद वृक्ष की डाल पकडते ही अर्जुन को भिगो जाती झाडियो में कहाँ-कहाँ से सूर्य किरण इन्द्रधनुष की तरह चकाचाध पदा करतीं, किसी कोने मे कल क पडे सफेद रुई जेसे जीव हिलने-डुलने लगते। अगले दिन उसे आँख खोलकर हरानी से देखते ओर फिर उसके अगले दिन कुलाँचे भरते कहीं-कहीं से दिखाई दे जाते। अर्जुन मुग्ध होकर टकटकी लगाये देखता रहता।

मुग्ध अर्जुन की दृष्टि कभी-कभी आकाश की तरफ उठ जाती तो कतार मे जाती पक्षियो पर अटक जाती। उनके खुले पखो के नीचे चमकदार रेशम-सा पेट एक उडनखटोले-सा लगता। पक्षी वृक्षों पर बैठकर अपनी प्रिया से नित्य क्रीडाएँ करते। आराम से चुग्गा खोजकर बच्चा के खुले हुए मुँह भर देते। फिर कोई पक्षी अपने जोडे को उडन के लिए उकसाता फिर उसे लेकर आँखा से ओझल हो जाता। कही दूर आसमान के हाथो से गिरता पिघलती हुई चाँदी-सा जल प्रपात, कही अदृश्य से निकल आता झरना, कहीं निर्जन मे लेटी तलेया, जेसे प्रकृति ने अलसाकर आँख खोली हा।

अर्जुन सोचता, क्या म एक वृक्ष होकर यही नही रह सकता?

हजारो रग बदलने वाला आकाश अर्जुन को टकटकी लगाये देखकर हँस पडता। बिजली काध जाती जेसे प्रकृति की सफेद नाडियाँ रोष प्रकट कर रही हो। काली और चाँदनी राता का अपना अलग सोन्दर्य होता। अर्जुन को लगता—चाँदनी रात कहीं भी सुन्दर होती है पर इस निर्जन आँचल की ओट मे इसका सान्दर्य द्विगुणित हो जाता हे। कहीं भी न अघाता अर्जुन। प्रकृति से विदा लेता अर्जुन बार बार पीछे मुडता जी भरकर देखता फिर चलने लगता। मन गेद की तरह भागता—कभी आगे जाता, कभी पीछे भाग आता। अनमना-सा अर्जुन एक दिन समाप्त होने पर उदास हो जाता, पर उस दिन की गठरी मे छुपाये क्षणा की अमूल्य निधियाँ अपने मन मे कहीं रोक लेता। कुछ भी तो सच नहीं रहता।

एक दिन अर्जुन भी सबको विदा कहकर द्वारिका की तरफ चल पडा। मार्ग मे उसन सोचा—पुरुषो का कोई पीहर नही होता पर मेरा पीहर तो प्रकृति की गाद

है। लडकियो का पीहर छोड़ने का कष्ट कुछ-कुछ ऐसे ही हाता हागा। उसे तत्काल सुभद्रा का ध्यान आया। इन्द्रप्रस्थ जाने पर उसे भी ऐसे ही पीडा होगी। मन को कुछ कचोट रहा था। अनमना सा अर्जुन दाय वाय दृष्टि गड़ाता हुआ जा रहा था। उसके काना मे कहीं दूर से आती रथ की आवाज पडी। वहुत दूर से धूल के गुबार से अटी राह के पीछे ही तो सरपट भागता एक रथ आ रहा था। रथ को पहचाना जा सकता था। यह रथ कृष्ण के अतिरिक्त किसका हाता आर किसके मन मे अगवानी का ध्यान आना।

अर्जुन प्रसन्नता से एक स्थान पर खडा हा गया। ताता-मैना की एक लम्बी कतार उसके पास से निकल गयी। खुले आकाश पर सूर्य की किरणा से झरझर प्रकाश वह रहा था। अर्जुन के सामने ही पीपल का भव्य वृक्ष था। अर्जुन वहीं जाकर खडा हो गया। उस पेड पर कई पक्षी बेठकर कलेवा कर रहे थे। अर्जुन का अचानक लगा भूख लग रही ह। द्वारिका पहुँच कर स्नानादि के वाद ही कुछ खाएँगे। अव रथ मुडते ही दिखाई देने लगा था। रथ को देखते ही अर्जुन ने सोचा–सुभद्रा भी वाट जोह रही होगी।

रथ घिसट कर अजुन क पास आकर रुका। कृष्ण छलाँग लगाकर अर्जुन के गले लगकर बोले "अव तुम्हे देखने का अभ्यास हो गया था। इतने दिन नहीं देखा।"

माधव इतना कष्ट क्यो दिया?"

कृष्ण ने हँसकर कहा, "सुभद्रा कल से ही पीछ पडी थी ओर वेसे भी आजकल आप ससुराल म ह। जामाता के नाते आपका पूरा ध्यान तो रखना ही पडेगा न।"

अर्जुन को लाज आयी। वह बोला "क्या मेरा आपका नेह ससुराल के कारण ही ह?"

'नहीं ससुराल नेह के कारण है। अर्जुन चलो आओ सब राह देख रह हाग।"

"क्या घोडा का सुस्तान क लिए खाल दे।"

कृष्ण ने कहा नहीं अव ये आपको पहुँचाने के वाद ही सुस्ताएँगे।"

घाड सुवह स ताजादम थे। वे सरपट भागने लगे।

प्रकृति की छटा देखते हुए दोना मित्र वात करते-करत एकदम द्वार पर आ गये। सुभद्रा अपनी माँ आर सखियो के साथ द्वार पर खडी थी। अर्जुन को लगा

वह कुछ दुबली हो गयी है। जब तक वह आरती उतारती रही अर्जुन उसी को देखता रहा। आरती की पीली-सी लौ जैसा ही सुभद्रा का मुख हो गया है। अर्जुन ने सोचा, सुभद्रा पति के वियोग मे ही सूख गयी है।

इन्द्रप्रस्थ जाने के दिन जैसे-जैसे पास आते जा रहे थे प्रसन्नता से अर्जुन एकदम उतावला हो रहा था। उसकी इच्छा होती—पक्षियो की तरह उड़कर माँ कुन्ती के भवन मे झाँक आये। माँ के बाद फिर कुछ स्मरण नहीं आता। सिर्फ आँखो मे जल भर आता। ढाढस की शिला हृदय से हट गयी थी। अब ढाढस कठिन था।

सुभद्रा के कक्ष में उसकी सखियाँ चाव से वस्त्र टाँकतीं। कोई उसके आभूषण सँभालती, कोई उसे शिक्षा देती। ब्याह हुए तो वर्ष हो रहा था पर ससुराल जाना जैसे एक बार फिर ब्याह होना है। सुभद्रा ने सोचा, पता नहीं क्या होगा? मन मे भय सिर उठाने लगा। इतने लोगो के बीच ससुराल मे वह कैसे रहेगी? अपने तो सिर्फ अर्जुन होंगे। पर क्या अर्जुन सिर्फ अपने होंगे। यह सोचकर एक सिहरन उसकी देह मे दौड़ गयी। द्रौपदी का स्मरण हो आया। अर्जुन उसके पति हैं। रो पड़ी सुभद्रा। सखियो ने समझा—मायका छूटने पर रो रही है। सुभद्रा की हिचकियाँ बँध गयीं तो जिनका ब्याह हो चुका था उन्होंने कहा, "राजकुमारी, स्त्री के भाग्य मे मैका छोड़ने का कष्ट तो है पर ससुराल जाते ही सब भूल जाओगी। वहाँ जाते ही लगेगा सदा से वहीं पर थी। पीहर दूसरा घर लगेगा। कितना भी प्रिय हो, है तो पीहर ही। अपना घर अब तुम्हारे लिए अर्जुन है। अर्जुन ही घर है। जब तक यहाँ है तब तक ये घर है, जब वहाँ जाएगा तब वही घर है। स्त्री के लिए पति ही घर है और वह घर तो तुम साथ लेकर जा रही हो बहन।"

उस दिन का सूरज भी उग आया। सूर्य अपने समय पर निकला पर महारानी को लगा आज मेरी बेटी को जाना है आज सूर्य भी शीघ्रता मे है। महाराज भी अपनी लाडली बेटी को विदा करनेवाले दिन काफी उदास थे। उन्हे चिन्ता तो न थी पर बेटी के विछोह का शूल डंक मार रहा था। उन्होने अपने आँसू पी लिये और यह सोचकर निश्चिन्त हो गये कि वहाँ उनकी बहन कुन्ती है। वह अपनी लाडली भतीजी को कभी उदास न होने देगी।

सुभद्रा सोच रही थी ऐसा क्यो नहीं हो सकता कि अर्जुन यहीं रहे? ब्याह तो हो ही गया है। इन्द्रप्रस्थ जाकर सबसे मिलकर आ सकते है। मै भी मिलकर आ जाऊँगी।

माँ की आँख उसे देखते ही भर आतीं तो वह दूसरी ओर मुँह कर लेतीं। माँ ने ही उससे एक दिन कहा था, "सुभद्रा वहाँ तुम्हारी बुआ है। तुम्हे बहुत स्नेह करेगी, पर ससुराल में सबको प्रसन्न करने का यत्न करना। देवी द्रौपदी तुम्हें कृष्ण की बहन जानकर निश्चय ही बहुत स्नेह करेगी। अपने देवर-जेठ का बहुत सम्मान करना।"

सुभद्रा ने पूछा था "माँ क्या वे मेरा सत्कार नहीं करेंगे?"

माँ मुस्करायी थी, "क्या नहीं करग। अवश्य करगे। पर अजुन वारह वर्ष क वनवास के वाद जा रहा है न पहले ता व उसी के चाव में रहेंगे। अर्जुन तो पूरे देश का भ्रमण करके जा रहा है। पहली वार अपनी माँ और भाइयों से इतनी अवधि के लिए पृथक् हुआ ह। तुम्ह तो देवी कुन्ती अपनी दृष्टि से ओयल न हाने दगी।"

"माँ आप मुझे कव वुलाएँगी?"

महारानी इस पश्न पर चौकीं। सुभद्रा के स्वभाव को जानते हुए उन्ह लगा—पुत्री को भय लग रहा ह। उन्हाने वडी सहजता से कहा "तुम्हारे जाने के वाद तुम्हारे भाई उपहार लेकर तुम्हारे पास आएँगे। जव देवी कुन्ती की आना होगी तव तुम आ जाना। यही नियम हे।"

सुभद्रा ने कहा "माँ, मुझे ससुराल जाने मे भय लग रहा है।"

भय नहीं है सुभद्रा नये स्थान पर जाते समय हृदय कई तरह की कल्पनाएँ करता ह।"

सुभद्रा जेसे सभी कुछ आज ही पूछ लेना चाहती थी। उसने कहा "माँ, क्या देवी द्रौपदी क्रोधित होगी?"

'नहीं सुभद्रा जव अर्जुन ने तुम्हारा अपहरण ही कर लिया तव तुम कहाँ दोषी हो।"

'माँ मुचे लगता हे अर्जुन देवी द्रौपदी से वहुत डरते है।"

"वे वडी ह पूज्या ह। उनका शासन तो सव पर चलेगा।"

सुभद्रा माँ को टुकुर-टुकुर देखने लगी। नव महारानी ने उसकी चिवुक उठाकर वहुत प्यार से कहा "सुभद्रा, जव तुम्हारा पुत्र हो जाएगा तव सभी वहुत प्रसन्न होंगे।"

सुभद्रा को लाज लगी। उसने पुत्र के वारे मे कभी सोचा भी न था। पुत्र होगा तो क्या करेगी वह। तभी माँ ने कहा "सुभद्रा तुम अपने कक्ष म जाकर तेयार हो जाओ। तुम्हारे साथ थाडा सा ही सामान जाएगा। वह भी रथ म रखना हे।'

"माँ मे अपना सव कुछ ले जाऊँगी।

हाँ सभी कुछ वाद मे तुम्हारे भाई ले जाएँगे। अर्जुन के साथ सिर्फ आवश्यक सामान ही जाएगा।"

वेटी की विदाई की वेला राजा ओर रक पर समान रूप से आती ह। सारी द्वारिका जेसे उदास होकर सुभद्रा का विदा कर रही थी। माँ ने उसे कसकर छाती से लगाया। फिर उसका सिर सूँघकर कहा "वेटी सुखी रहो।"

सुभद्रा को जव लगा—अव मे जा रही हूँ तो वह हिलक हिलककर रोने लगी। कृष्ण ने उसके सिर पर हाथ रखा। फिर कहा "सुभद्रा, तुम्हारे पीछे-पीछे ही मे आर भेया आ जाएँगे। लडकी का घर ससुराल ही होता हे। जाओ वहन सुखी रहना ओर सुखी रखना।"

महाराज एक तरफ खडे होकर अपनी लाडली वेटी को ससुराल जाते देख

आँखो से आशीर्वाद वरसाते रहे। आज चली गयी मेरी सुभद्रा अपने घर।

रथ पर वैठते ही सुभद्रा न आँचल से आँसू पोछ लिये ओर पीछे छूटती द्वारिका को देखती रही। अर्जुन के मन का उछाह ओर उत्साह घोड़ो की चाल से मालूम होता था। हवा से वातें करते घोडे सरपट भाग रहे थ। मार्ग के दोनो ओर वृक्षो की क़तारों पर पक्षी वेठे गा रह थे। अर्जुन को लग रहा था—जितना निर्मल आकाश आज है इतना कभी भी न था। वारह वर्ष वाद अपने घर जा रहा था अर्जुन। मार्ग में समय ता लगेगा ही, पर उसका हृदय धौकनी की तरह वज रहा था। कितनी देर अर्जुन अपने मन के हर्ष के साथ ही चलता रहा। फिर उसने सुभद्रा को देखा। वह डरी हुई हिरणी की तरह रथ की टेक को हाथ से पकडकर सहमी-सी वैठी थी। अर्जुन को लगा उससे अपराध हो रहा है। उसने घोडो की रास थोड़ी ढीली की। फिर घोडो से कहा "धीरे चलो, हमारी सुभद्रा भयभीत हो रही है।" घोड़ो ने जैसे वात समझी, उनकी चाल धीमी हुई तो अर्जुन ने फिर रास उन्हीं पर छोड दी।

सुभद्रा ने चैन की साँस ली। फिर अर्जुन को देखा। अर्जुन ने उसकी सूजी हुई आँखो को देखकर कहा, "प्रिये क्षमा करना, मै अपने उत्साह मे यह भूल ही गया कि तुम पहली वार ससुराल जा रही हो।"

इस वात पर दोनों ही हँस पडे। अर्जुन का लगा शायद इसे भय लग रहा होगा। उसने कहा, "इन्द्रप्रस्थ में तुम्हे वहुत भला लगेगा, कभी कहीं कोई त्रुटि रह जाए तो नि सकोच मुझसे कहना। मे हर प्रकार से तुम्हे सुखी रखने का यत्न करूँगा।"

सुभद्रा ने दृष्टि घुकाकर सकोच से कहा, "माँ ने कहा था--रथ वहुत तेज नहीं चलाना चाहिए।"

अर्जुन हँस पडा, फिर वोला, "हमारे पुत्र की माँ होने के वाद तुम फिर हमारा ध्यान तो न रखोगी।"

सुभद्रा ने लज्जा से लाल होते हुए अपनी गर्दन झुका ली।

अर्जुन फिर आनेवाले दिनो मे खो गये। उन्ह अपने सभी भाई वाँहे पसारे दिखाई दे रहे थे। ज्योही इन्द्रप्रस्थ की अट्टालिकाएँ दिखाई देने लगीं, अर्जुन ने घोडो को दाडाना शुरू किया फिर सुभद्रा पर दृष्टि पडते ही रास ढीली छोड दी।

"सुभद्रा म अपने वश म नहीं हूँ। मुझे क्षमा करना। मै अपने भाइयो को देखते ही रथ स उतर जाऊँगा। जव तक माँ आर राजमहल की दूसरी स्त्रियाँ न आये, तुम रथ स न उतरना।"

अर्जुन का मन उमडा आ रहा था। वादल घुमड रहे थ पर अर्जुन ने वरसन न दिय। कितने वर्ष हो गय इस इन्द्रप्रस्थ को दखे। इसम साँस लिये, इसमे जिये। आहा, माँ कुन्ती भी ह। भाई भी। पूरा ब्रह्माण्ड तो यही है। रथ को थोडा धीमा करक अजुन न घोडा पर रास रखी ओर दौड़कर अपने भाइयो के गले जा लगे। अव तो मेघ वरसे तो हर ओर से जमकर वरसे।

कुन्ती भी भावविभार थी। अपने पाँचा वेटा का दखकर वह फूली न समा रही थी। अर्जुन तुरन्त उनके चरण छूकर माँ के सामन हाथ जोड़कर खड़े हो गये। कुन्ती ने कहा, "वेटा सुभद्रा को रथ से उतार लाती हूँ।"

सुभद्रा घवरायी हुई थी। रथ से उतरी तो कुन्ती ने उसे गले लगा लिया। उसका माथा चूमकर कहा, "आओ सुभद्रा, वर्षो से तुम्हें नहीं देखा। वड़ी हो गयी हो। इतनी सुन्दर वहू मेरे अर्जुन की है। मैं कृतार्थ हुई।" सुभद्रा ने झुककर सास के पाँव छू लिये। आस पास देखा—द्रौपदी कहीं न थी।

सुभद्रा अपनी वुआ को देखकर खुश हुई, परन्तु इतनी स्त्रिया म द्रौपदी को न देख उसका मन वड़ा खिन्न हुआ। कुन्ती उसे अर्जुन के महल म ले गयी। स्त्रियाँ मगलगीत गा रही थीं। कुन्ती ने द्वार पर सुभद्रा की वलैयाँ लीं और उसे भीतर नयी वहू के कक्ष मे वने आसन पर विठा दिया। फिर उपहार दिखाकर उसे गहनो से लाद दिया। जव सव स्त्रियाँ धीरे-धीरे चली गयीं, तव कुन्ती ने सुभद्रा से कहा, "वेटी यहाँ तुम्हें सव वहुत स्नेह करगे। तुम सवका एक जैसा सम्मान करना।" तभी अर्जुन अपने भाइया से मिलकर कक्ष मे आये तो उसने देखा कि सुभद्रा गहनों के वोझ से झुकी माँ कुन्ती के वचन सुन रही है। अर्जुन जाकर फिर माँ के चरणा में गिर पडा। कुन्ती ने उसका माथा सूँघकर कहा "वेटा ये वारह वर्ष मैने वारह युगा की तरह काटे है। अव मेरी आँखो से ओझल न होना। सुभद्रा को देखकर मेरा वारह वर्षो का हरण हो गया है। मेरा ही एक अश मरे घर म आकर मुझे सुख दगा मने कव सोचा था अर्जुन। म वहुत भाग्यशाली हूँ। पुत्र अव तुम व्यवस्थित होकर भोजनकक्ष म आना।"

अर्जुन ने कहा "भोजन में अभी वडी देर हे माँ। म पहले पाचाली से मिलकर आता हूँ।"

कुन्ती ने प्रसन्न होकर कहा "तुम्हे यही शोभा देता ह पुत्र।"

अर्जुन द्रोपदी के कक्ष म एक अजनवी की तरह चारो ओर दृष्टि घुमाता हुआ जा रहा था। द्वार पर ठिठका फिर भीतर चला गया। उसके सभी भाई युधिष्ठिर के पास थे।

परिचारिकाएँ खडी हो गयीं। एक ने कहा "देवी भीतर ह।"

अर्जुन धीरे से द्रोपदी के कक्ष मे दाखिल हुआ। दोपहरी के समय पर्दो ने धुँधलका कर रखा था। थोडी देर मे जव आँखे अभ्यस्त हो गयीं तो अर्जुन ने देखा ओधी पडी द्रोपदी की देह पूरी-की-पूरी वालो से ढँकी हुई हे। कुछ वाल शय्या से नीचे धरती छू रहे ह। कहीं-कहीं से उसकी देह का कोई भाग अँधेरे मे विजली की तरह चमक रहा था। अर्जुन किकर्तव्यविमूढ से खडे रहे। द्रोपदी का मुँह भी वालों से ढँका था। उसके साँस भीतर खींचते ही वाल उडते फिर वेठ जाते। अर्जुन साँस रोके खडा था। अर्जुन को कुछ न सूझा। उसने सोचा थोडे से वाल हटा दूँ तो शायद

कृष्णा जग जाए। बारह वर्ष बाद लौटा हूँ। कभी कृष्णा नहीं कहा उसे। देखा ही कहाँ। सिर्फ मन ही-मन पुकारता रहा—कृष्णा, कृष्णा, कृष्णा।

अर्जुन न जाने कितनी देर खडा रहा। क्या करे, कुछ न सूझ रहा था। फिर वह अपन-आपको दोषी पाने लगा। इसे ही तो स्वयवर मे जीता था फिर क्यो बॅटने को छोड दिया। कई भागो मे बँटी मेरी द्रोपदी कैसे शय्या पर पडी है। क्या करूँ? कमरे को निस्तब्धता ओर भयानक कर रही थी। अँधेरा भी भयावह था। द्रोपदी निश्चल पडी थी।

अर्जुन ने साहस करके उसके समीप जाकर धीरे-से कहा "कृष्णा।"

उसका स्वर भराया हुआ था। उसने फिर कहा, "कृष्णा" पर द्रोपदी ने यदि सुना तो भी कोई उत्तर नहीं दिया।

अर्जुन का मुँह सूख रहा था। जैसे उसके प्राण जिह्वा पर आ गये थे।

"कृष्णा।"

जेसे कोई कराह रहा हो जेसे कोई उच्छ्वास, जेसे बहुत नीचे से तहखाने से घुटकर निकलती कोई चीख—

"कृष्णा। "

अर्जुन ने साहस करके एक पूरा वाक्य बोल दिया, "कृष्णा, म तुम्हारा घोर अपराधी अजुन तुम्हार सामने खडा हूँ। मुझे दण्ड दो परन्तु मुझस कृपया बात करा।"

द्रौपदी एक झटके से उठ गयी। अर्जुन को देखते ही ज़ोर-ज़ोर से हिलक हिलककर रोने लगी। बारह वर्षो के बाद आँख का जमा हुआ पानी जेसे एक छिद्र मिल जाने पर वह निकला। एक-एक बूँद होड करके पहले वह जाना चाहती थी। अब द्रोपदी कराहती हुई रो रही थी। जैसे कोई अपना बहुत प्रिय मर गया हो। अर्जुन को समझ न आ रहा था वह कसे इसे चुप कराये। वही स्तब्ध खडा था। कुछ क्षण के बाद उसने कमरे म देखा—मिट्टी के पात्र मे जल पडा था ओर पास ही एक ताँबे का गिलास। अर्जुन ने गिलास जल से भरा ओर द्रोपदी के आगे रखकर कहा, "कृष्णा जल ग्रहण करो।"

द्रोपदी ने अर्जुन को अपने आग्नेय नेत्रा से देखा ओर जल का पात्र दीवार पर दे मारा। उसके बाद शय्या पर लोट-लोटकर रोने लगी। अर्जुन क्या करे, उसे कुछ न सूझ रहा था। द्रोपदी की शय्या के पास खडा कोन था? वह उसका प्रेमी उसका सखा उसका पति, कान हे अजुन? अपना मुँह झुकाकर उसन द्रोपदी का दु ख मे रोते-रोते लोटते हुए देखा तो कहा, "कृष्णा मुझे दण्ड दो। पर इस प्रकार रोओ नहीं। म नहीं जानता क्या करने पर तुम चुप हो जाओगी।"

द्रौपदी घायल हिरनी की तरह शय्या पर बेठ गयी फिर रोते रोते ही कहने लगी, "यहाँ क्या लेने आये हो, क्यो आये हो? अब कुछ नहीं रहा—कुछ भी नहीं रहा। मर गयी कृष्णा।"

अर्जुन ने फिर पात्र जल से भरा और जाकर द्रौपदी के होंठों से लगा दिया। फिर कहा जल ग्रहण करो देवी। म कह चुका हू मने तुम्हारे प्रति घोर अपराध किया है। मैं दोषी हूँ। मुझ दण्ड दो, परन्तु इस तरह रोओ नहीं। म सहन नहीं कर सकता। मेरी छाती फटी जा रही है।"

द्रोपदी जल ग्रहण कर रही थीं। गिलास अर्जुन के हाथ म था। वह उसकी आँखों म बनते विगडते प्रतिविम्ब देख रहा था। उसकी आँखो मे स्नेह भरते देख अर्जुन म साहस पैदा हुआ। उसने कहा "तुम्हारी त्रासदी स मेरी त्रासदी कम नहीं है कृष्णा। कोई भी ऐसा प्रहर नहीं वीता जब तुम मेरे पास न थीं। मै तो तपस्या करने गया था। दिन रात धार्मिक कथाएँ सुनता, यत्न करता, अग्निहोत्र करता था। कभी किसी स्त्री की ओर मेरा ध्यान न था। मेरे लिए स्त्री तो सिर्फ तुम थी कृष्णा। सभी जगह तुम ही थीं। उसी तरह तुम्हारे चिन्तन म—तुमम गुम म बारह वर्ष बिताकर आ जाता। पर ससार म प्रवेश करने के बाद फिर मनुष्य कहाँ लौटता है? फिर भी मै लौटा हू कृष्णा। मुझे क्षमा कर सको तो करो। मेरा अपराध तो अक्षम्य है, यह म जानता हूँ।"

द्रोपदी स्वस्थ हो चुकी थी। उसने एक और पात्र पानी का भरकर पिया। फिर भराये स्वर म कहने लगी, "अर्जुन, जो तुम्हारे समक्ष म रोयी ये बारह वर्ष पहले का रुदन है। बारह वर्षो मे मै माँ हो गयी। मेरा सारा क्रोध बह गया है। यह शायद उसका अन्तिम भाग था। जाने से पहले तुम मुझसे मिलकर भी न गये। म कहलवाकर भी न भेज सकती थी। अर्जुन मैंने दो दीवारों के बीच फँसी गारया की तरह ये बारह वर्ष काटे ह। अपनी त्रासदी तो भोगी ही ह तुम्हारी भी मलहम की तरह देह पर मली ह। तुम तो इस तरह गये जेसे धनुष म से बाण छूटता है। फिर यदा-कदा तुम्हारे समाचार आते रहे। तुम्हारे भटकने के समाचार यहाँ म विस्तार से न जान पाती थी। यहाँ मुझे कोई अभाव न था, न है पर जो अभाव था उसे कोई भी पूरा न कर सकता था। न कर सकेगा। पूरे मन से देह भी उसे ही समर्पित की जा सकती है जिसमे मन की सुगन्ध घुली हो। पर तुम कहाँ समझोगे? जाते समय एक शब्द भी कहकर जाते तो मुझे ढाढस होता। तुम्हारा जाना भी जेसे एक छलना था, तुम्हारा लौटना भी जेसे एक भुलावा ह।"

"म लौट आया हूँ कृष्णा। मुझ पर विश्वास तो तुम क्या करोगी पर इतना जान लो कि म लौट आया हूँ।"

"सच ही लौट आये हो फागुन। मे हमेशा तुमसे बात करती तो फागुन ही कहती। इच्छा होती जिस नाम से म तुम्हे बुलाऊँ उस नाम से तुम्हे कोई न बुलाए। इसी जीवन म तुम्हे पाने के लिए क्या नहीं किया। उसी यत्न मे तुम्ह खो दिया फागुन।"

"अगर खोया है तो खोकर पा लिया ह तुमने। तुम वेसे ही मुझम हो जसे

कृष्ण मे राधा है। राधा जो कृष्ण की कोई नहीं, पर राधा ही शायद रह जाएगी कृष्ण के साथ। यही तो कहा था कृष्ण ने।"

"कृष्ण तुम्हारे सखा ह अर्जुन। वे मेरे भी सखा हे। मेरी त्रासदी जानते ह। उन्हे ही बताया था मने। तुम बारह वर्ष के लिए गये ओर मुझसे मिले भी नहीं।"

अजुन ने कहा, "कृष्णा अव शायद कहीं जाना ही न हो। पर जाऊँगा तो तुम्हारी आज्ञा के विना नहीं जाऊँगा। तुम्हारी मुझ पर कृपा क्या मेरे गुणा ही के कारण है? मेरे अवगुण भी तुम्हारी कृपादृष्टि के पात्र है। अव मुझे क्षमा करो। तुम्हारे क्षमा करने पर ही मे इन्द्रप्रस्थ मे सहज होकर रह सकूँगा। तपस्वी वनकर वनो मे भी भटक सकता हूँ।"

"फागुन, क्षमा तो मने तुम्हे कव से कर दिया है। न करती तो जी न पाती। जिन कारणा से मर न सकी उन्हीं कारणो से तुम्ह क्षमा किया। क्षमा करने के वाद ही तो जीने का अर्थ समझ म आया। स्त्री माँ होकर सृष्टि के करीव-करीव हो जाती हे तव क्षमा करना कितना सहज हाता है। लगता हे परिचारिकाएँ भोजन क लिए निमन्त्रित करने आ रही ह। तुम भोजन कक्ष मे जाओ, म थोडी व्यवस्थित होकर आती हूँ।"

'तो फिर आना कृष्णा म चला।'

द्रापदी व्यवस्थित होकर कक्ष म आयी तो लाल रेशम की साडी मे अग्निशिखा सी एक ग्वालिन वहाँ खडी थी। द्रोपदी को देखते ही उसके चरणो म फूलो सी विखर गयी।

द्रोपदी ने उसे उठाया, फिर ध्यान से देखकर कहा तुम गोकुल की ग्वालन हो न?" उसने कहा म आपकी दासी हूँ।

द्रापदी ने हँसकर कहा, "मेरे सखा कृष्ण की वहन सुभद्रा का स्वागत ह।"

"कृतार्थ हुई देवी। मुझे आशीर्वाद द।"

द्रोपदी ने कहा, "तुम्हारे पति यशस्वी हो, विजेता हो, दीर्घायु हो।"

सुभद्रा ने हँसकर कहा, "ऐसा ही हो देवी।"

भोजन-कक्ष म द्रापदी सुभद्रा को साथ लेकर गयी तो सवने प्रसन्नता से देखा। द्रोपदी ने कहा, "यह सुभद्रा हे, हमारे कृष्ण की वहन हमारे अर्जुन की पत्नी।" सुभद्रा ने महाराज युधिष्ठिर और भीम के चरणो मे प्रणाम किया। दाना ने कहा तुम हमारे माधव की वहन हो। हम तुमस चरण न छुआएँगे। पर नकुल सहदेव दोनो तुम्हारे देवर है, वा तुम्हारे चरण छुएँगे।"

द्रोपदी ने सुना तो मन म कुछ चुभ गया—म तो किसी की भाभी नहीं पाण्डवा की पत्नी हूँ। उसने यह विचार झटका। फिर सुभद्रा से कहा, "सुभद्रा तुम्हारा भोजन-कक्ष म स्वागत है। कल से तुम ही भोजन का प्रवन्ध करना। निरीक्षण भी तुम ही करना।"

सुभद्रा ने शीश झुका लिया।

कुन्ती ने प्रसन्न मन से कहा "पाचाली, तुम्हारे लिए भी एक कार्य हे। कुछ ही महीने मे हमारे ऑगन मे मेरा छोटा अर्जुन खेलेगा। उसकी माँ तो तुम ही होगी।"

द्रोपदी ने सुभद्रा को गले लगाकर कुन्ती से पूछा, 'क्यो माँ, पुत्र ही क्या पुत्री क्यो नहीं। एक पुत्री वडी करने का वडा चाव हे। जानना चाहती हूँ जव पुत्री ससुराल जाती है तो मॉएँ केसे रहती है?"

यह सुनत ही सुभद्रा की आँखा से ऑसू वरसने लगे। उसने दूसरी ओर मुँह कर आँसू पाछे तो द्रापदी ने पूछा, "क्या माँ की याद आ रही है। माँ की याद तो हमेशा आएगी, पर पुत्र को देखते ही सव भूल जाओगी। यही होता हे। माँ होकर ही माँ को भूला जा सकता ह, फिर भी माँ हमेशा साये की तरह सग रहती है ला मे भी क्या वात करने लगी। चलो तुम्ह भोजन करवाऊँ।"

"जी।"

"क्या तुम इतना ही वोलती हो। सुभद्रा, माधव की वहन, ता मेरी भी वहन हुई, तुम मुझे दीदी कहा करोगी न?"

"जी दीदी।"

दोना भोजन करने लगीं तो अर्जुन ने चेन की साँस ली। कितना भय था केसे सब तय हो गया। अर्जुन आश्वस्त हुआ। उसने सोचा—कृष्णा ओर सुभद्रा मे यदि स्नेह हो जाता हे तो मेरा बाकी जीवन सरलता से बीतेगा। वन मे देखी एक नदी का स्मरण हो आया। कितनी सुन्दर नदी थी, केसा जल कल-कल बह रहा था? दोनो किनारे दूर-दूर थे। ये जल ही उन्हे जोडता था, भिगोता था। कभी-कभी जरा सा किनारा टूटता तो तुरन्त जल मे मिलकर जल हो जाता। कितनी ही देर अर्जुन वहाँ बेठा रहा था। पकड पाना भी कठिन था तो भी अर्जुन ने अपनी अजली म भर लिया था। उसको अपनी स्मृति मे सँजोकर रखी वह नदी अर्जुन को वहुत प्यारी लगी। नदी ही तो हूँ, म वहता जा रहा हूँ। द्रापदी ओर सुभद्रा इसके किनारे हे—बहुत दूर बहुत पास। अव मे भटकूँगा नहीं यही दो किनारे मुझे पकडे रहेगे। भटकने मे सुख नहीं हे। सुख पकडे जाने मे ही है, किसी को अपनाने मे किसी का हो जाने मे हे, जेसे नदी समुद्र की हो जाती हे, अपना अस्तित्व भी उसी मे गुम हो जाने देती हे फिर रह जाता हे—सिर्फ समुद्र। समुद्र तो विशाल हे, अपार है अनन्त है। एक शब्द समुद्र परन्तु जिसके अनेक नाम ह गगा-यमुना-सरस्वती चन्द्रभागा तवी और कितने ही।

"कहाँ भटक गये धनजय?" भीम ने पूछा तो अर्जुन ने कहा "अव कहाँ भटकूँगा भीम।"

दोनों हँस पडे तो कुन्ती की आँखें भीग उठीं—आ गया मेरा अर्जुन' उसने मन ही-मन कहा।

□□□